राजस्थान-भारती प्रकाशन नं ११

राजस्थानरा दूहा

राजस्थानी भाषा के लोकप्रिय भावपूर्ण दूहों का संग्रह

[हिन्दी-साहित्य-सम्मेळन द्वारा मानसिंह-पुरस्कार से सत्कृत]

संपादक

नरोत्तमदास स्वामी, ऍम० ऍ०

प्रकाशक

सादूल राजस्थानी रिसर्च इंस्टीटयूट

बीकानर

१९६१

राजस्थान,

राजस्थानी संस्कृति तथा राजस्थानी साहित्यरा पक्का प्रेमी

राजस्थानी इतिहासरा अमर लेखक

मातृभूमि राजस्थानरी महान विभूति

भारत-स्वमान् महामना

महामहोपाध्याय रायबहादुर

श्री गौरीशंकर हीराचंदजी ओझाने

सादर समर्पित ।

द्वितीय संस्करण का निवेदन

पुस्तकका प्रथम संस्करण ई. १९३१ में प्रकाशित हुआ था और शीघ्र ही समाप्त हो गया था। तबसे पुस्तककी बड़ी मांग थी और अनेक प्रेमी-जनोंके उपालंभ बराबर प्राप्त होते रहे पर पुनः प्रकाशन की व्यवस्था संभव नहीं हुई। अब लगभग चौथाई शताब्दीके पश्चात् अध्यक्ष श्री अगरचंद नाहटाके प्रयत्नके फलस्वरूप पुस्तकका द्वितीय संस्करण बीकानेर के सादूल-राजस्थानी-शोध प्रतिष्ठान द्वारा प्रकाशित हो रहा है।

द्वितीय संस्करणमें प्रस्तावना तथा टिप्पणी भागोंके कतिपय अंशोंको अनावश्यक समझकर कम कर दिया गया है। पुस्तक के प्रूफ देखना संभव नहीं हुआ अत कहीं-कहीं अशुद्धियां रह गयी हैं। विशेषत व और ब के प्रयोग में बहुत गड़बड़ी हुई है। पाठक साधारणतया शब्दके आरम्भमें आये हुये व को ब तथा शब्द के मध्यमें आये हुये ब को व समझें।

ज्येष्ठ सं. २०१८

संपादक

प्रकाशकीय

श्री सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट बीकानेर की स्थापना सन् १९४४ में बीकानेर राज्य के तत्कालीन प्रधान मन्त्री श्री के० एम० पणिक्कर महोदय की प्रेरणा से साहित्यानुरागी बीकानेर-नरेश स्वर्गीय महाराजा श्री सादूलसिंहजी बहादुर द्वारा संस्कृत हिन्दी एवं विशेषतः राजस्थानी साहित्य की सेवा तथा राजस्थानी भाषा के सर्वांगीण विकास के लिये की गई थी।

भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध विद्वानों एवं भाषाशास्त्रियों का सहयोग प्राप्त करने का सौभाग्य हमें प्रारम्भ से ही मिलता रहा है।

संस्था द्वारा विगत १६ वर्षों से बीकानेर में विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियां चलाई जा रही हैं जिनमें से निम्न प्रमुख हैं—

१ विशाल राजस्थानी-हिन्दी शब्दकोश

इस सम्बन्ध में विभिन्न स्रोतों से संस्था लगभग दो लाख से अधिक शब्दों का संकलन कर चुकी है। इसका सम्पादन आधुनिक कोशों के ढंग पर अभी समय से प्रारम्भ कर दिया गया है और अब तक लगभग तीस हजार शब्द सम्पादित हो चुके हैं। कोश में शब्द व्याकरण व्युत्पत्ति उसके अर्थ और उदाहरण आदि अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएं दी गई हैं। यह एक अत्यन्त विशाल योजना है, जिसकी सन्तोषजनक क्रियान्विति के लिये प्रचुर द्रव्य और श्रम की आवश्यकता है। आशा है राजस्थान सरकार की ओर से प्रार्थित द्रव्य-साहाय्य उपलब्ध होते ही निकट भविष्य में इसका प्रकाशन प्रारम्भ करना सम्भव हो सकेगा।

२. विशाल राजस्थानी मुहावरा कोश

राजस्थानी भाषा अपने विशाल शब्द भंडार के साथ मुहावरों से भी समृद्ध है। अनुमानतः पचास हजार से भी अधिक मुहावरे दैनिक प्रयोग में लाये जाते हैं। हमने लगभग दस हजार मुहावरों का हिन्दी में अर्थ और राजस्थानी में उदाहरणों सहित प्रयोग देकर सम्पादन करवा लिया है और शीघ्र ही इसे प्रकाशित करने का प्रबन्ध किया जा रहा है। यह भी प्रचुर द्रव्य और श्रम-साध्य कार्य है।

यदि हम यह विशाल वृहद् साहित्य-जगत को दे सके तो यह संस्था के लिये ही नहीं किन्तु राजस्थानी और हिन्दी जगत के लिये भी एक गौरव की बात होगी।

३ आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का प्रकाशन

इसके अन्तर्गत निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं:—

१ कळायण, ऋतु काव्य। ले० श्री नानूराम संस्कर्ता।
२. आभै पटकी, प्रथम सामाजिक उपन्यास। ले० श्री श्रीलाल जोशी।
३ बरस गांठ, मौलिक कहानी संग्रह। ले० श्री मुरलीधर व्यास।

'राजस्थान-भारती' में भी आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का एक अलग स्तम्भ है, जिसमें भी राजस्थानी कवितायें, कहानियां और रेखाचित्र आदि छपते रहते हैं।

४ 'राजस्थान-भारती' का प्रकाशन

इस विख्यात शोधपत्रिका का प्रकाशन संस्था के लिये गौरव की वस्तु है। गत १४ वर्षों से प्रकाशित इस पत्रिका की विद्वानों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। बहुत चाहते हुए भी द्रव्याभाव, प्रेस की एवं अन्य कठिनाइयों के कारण, त्रैमासिक रूप से इसका प्रकाशन सम्भव नहीं हो सका है। इसका भाग ५ अंक ३-४ 'डा॰ लुइजि पिओ तैस्सितोरी विशेषांक' बहुत ही महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सामग्री से परिपूर्ण है। यह अंक एक विदेशी विद्वान की राजस्थानी साहित्य सेवा का एक बहुमूल्य सचित्र कोश है। पत्रिका का अगला ७वां भाग शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा है। इसका अंक १-२ राजस्थानी के सर्वश्रेष्ठ महाकवि पृथ्वीराज राठोड़ का सचित्र और बृहत् विशेषांक है। अपने ढंग का यह एक ही प्रयत्न है।

पत्रिका की उपयोगिता और महत्व के संबंध में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इसके परिवर्तन में भारत एवं विदेशों से लगभग ८० पत्र-पत्रिकाएं हमें प्राप्त होती हैं। भारत के अतिरिक्त पाश्चात्य देशों में भी इसकी मांग है व इसके ग्राहक हैं। शोधकर्ताओं के लिये 'राजस्थान-भारती' अनिवार्यतः संग्रहणीय शोध-पत्रिका है। इसमें राजस्थानी भाषा, साहित्य, पुरातत्व, इतिहास, कला आदि पर लेखों के अतिरिक्त संस्था के तीन विशिष्ट सदस्य डा० दशरथ शर्मा, श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री अगरचन्द नाहटा की वृहत् लेख सूची भी प्रकाशित की गई है।

५ राजस्थानी साहित्य के प्राचीन और महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसंधान सम्पादन एवं प्रकाशन

हमारी साहित्य-निधि को प्राचीन महत्वपूर्ण और श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियों को सुरक्षित रखने एवं सर्वसुलभ कराने के लिये सुसम्पादित एवं शुद्ध रूप में मुद्रित करवा कर उचित मूल्य मे वितरित करने की हमारी एक विशाल योजना है। संस्कृत हिंदी और राजस्थानी के महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसंधान और प्रकाशन संस्था के सदस्यों की ओर से निरंतर होता रहा है, जिसका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है—

१ पृथ्वीराज रासो

पृथ्वीराज रासो के कई संस्करण प्रकाश में आये हैं और उनमें से लघुतम संस्करण का सम्पादन करवा कर उसका कुछ अंश 'राजस्थान-भारती' मे प्रकाशित किया गया है। रासो के विविध संस्करण और उसके ऐतिहासिक महत्व पर कई लेख राजस्थान-भारती में प्रकाशित हुए हैं।

७ राजस्थान के अज्ञात कवि जान (न्यामतखां) की ७५ रचनाओं की खोज की गई। जिसकी सर्वप्रथम जानकारी 'राजस्थान-भारती' के प्रथम अंक में प्रकाशित हुई है। उसका महत्वपूर्ण ऐतिहासिक 'काव्य क्यामरासा' तो प्रकाशित भी करवाया जा चुका है।

८. राजस्थान के जैन संस्कृत साहित्य का परिचय नामक एक निबंध राजस्थान-भारती में प्रकाशित किया जा चुका है।

९. मारवाड़ क्षेत्र के ५ लोकगीतों का संग्रह किया जा चुका है। बीकानेर एवं जैसलमेर क्षेत्र के सैकड़ों लोकगीत घूमर के लोकगीत बाल लोकगीत लोरियां और लगभग ७ लोक कथाएँ संग्रहित की गई हैं। राजस्थानी कहावतों के दो भाग प्रकाशित किये जा चुके हैं। जीणमाता के गीत पाबूजी के पवाड़े और राजा भरथरी आदि लोक काव्य सर्वप्रथम 'राजस्थान-भारती' में प्रकाशित किए गए हैं।

१० बीकानेर राज्य के और जैसलमेर के अप्रकाशित अभिलेखों का विशाल संग्रह 'बीकानेर जैन लेख संग्रह' नामक बृहद् पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो चुका है।

११ जसवंत उद्योत, मुंहता नैणसी री ख्यात और अनोखी आन जैसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रन्थों का सम्पादन एवं प्रकाशन हो चुका है।

१२. जोधपुर के महाराजा मानसिंहजी के सचिव कविवर उदयचन्द भंडारी की ४ रचनाओं का अनुसन्धान किया गया है और महाराजा मानसिंहजी की काव्य-साधना के सम्बन्ध में भी सबसे प्रथम 'राजस्थान भारती' में लेख प्रकाशित हुआ है।

१३ जैसलमेर के अप्रकाशित १ शिलालेखों और 'भट्टि वंश प्रशस्ति' आदि अनेक अप्राप्य और अप्रकाशित ग्रंथ खोज-यात्रा करके प्राप्त किये गये हैं।

१४ बीकानेर के मस्तयोगी कवि ज्ञानसारजी के ग्रंथों का अनुसन्धान किया गया और ज्ञानसार ग्रंथावली के नाम से एक ग्रंथ भी प्रकाशित हो चुका है। इसी प्रकार राजस्थान के महान विद्वान महोपाध्याय समयसुन्दर की ५६३ लघु रचनाओं का संग्रह प्रकाशित किया गया है।

१५. इसके अतिरिक्त संस्था द्वारा—

(१) डा. लुइजि पिओ टैस्सीटोरी, समयसुन्दर, पृथ्वीराज और लोकमान्य तिलक आदि साहित्य-सेवियों के निर्वाण-दिवस और जयन्तियां मनाई जाती हैं।

(२) साप्ताहिक साहित्यिक गोष्ठियों का आयोजन बहुत समय से किया जा रहा है, इसमें अनेकों महत्वपूर्ण निबंध, लेख, कविताएं और कहानियां आदि पढ़ी जाती हैं, जिससे अनेक विध नवीन साहित्य का निर्माण होता रहता है। विचार विमर्श के लिये गोष्ठियों तथा भाषणमालाओं आदि के भी समय-समय पर आयोजन किये जाते रहे हैं।

१६ बाहर से ख्यातिप्राप्त विद्वानों को बुलाकर उनके भाषण करवाने का आयोजन भी किया जाता है। डा. वासुदेवशरण अग्रवाल, डा. कैलासनाथ काटजू, राय श्रीकृष्णदास, डा. जी. रामचन्द्रन्, डा. सत्यप्रकाश, डा. डब्लू. एलेन, डा. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डा. तिबेरिओ-तिबेरी आदि अनेक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वानों के इस कार्यक्रम के अन्तर्गत भाषण हो चुके हैं।

गत दो वर्षों से महाकवि पृथ्वीराज राठौड़ आसन की स्थापना की गई है। दोनों वर्षों के आसन-अधिवेशनों के अभिभाषक क्रमशः राजस्थानी भाषा के प्रकाण्ड

विद्वान् श्री मनोहर शर्मा एम ए, बिसाऊ और पं० श्रीलालजी मिश्र एम ए०, हुंडलोद थे।

इस प्रकार संस्था अपने १६ वर्षों के जीवनकाल में संस्कृत हिन्दी और राजस्थानी साहित्य की निरंतर सेवा करती रही है। आर्थिक संकट से ग्रस्त इस संस्था के लिये यह सम्भव नहीं हो सका कि यह अपने कार्यक्रम को नियमित रूप से पूरा कर सकती फिर भी यदा कदा लड़खड़ा कर गिरते पड़ते इसके कार्यकर्ताओं ने 'राजस्थान-भारती' का सम्पादन एवं प्रकाशन जारी रखा और यह प्रयास किया कि नाना प्रकार की बाधाओं के बावजूद भी साहित्य सेवा का कार्य निरंतर चलता रहे। यह ठीक है कि संस्था के पास अपना निजी भवन नहीं है, न अच्छा संदर्भ पुस्तकालय है, और न कार्यालय को सुचारु रूप से सम्पादित करने के समुचित साधन ही हैं, परन्तु साधनों के अभाव में भी संस्था के कार्यकर्ताओं ने साहित्य की जो मौन और एकान्त साधना की है वह प्रकाश में आने पर संस्था के गौरव को निश्चित ही बढ़ा सकने वाली होगी।

राजस्थानी-साहित्य-भंडार अत्यन्त विशाल है। अब तक इसका अत्यल्प अंश ही प्रकाश में आया है। प्राचीन भारतीय वाङ्मय के अलभ्य एवं अनर्घ रत्नों को प्रकाशित करके विद्वज्जनों और साहित्यिकों के समक्ष प्रस्तुत करना एवं उन्हें सुगमता से प्राप्त कराना संस्था का लक्ष्य रहा है। हम अपनी इस लक्ष्य पूर्ति की ओर धीरे-धीरे किन्तु दृढ़ता के साथ अग्रसर हो रहे हैं।

यद्यपि अब तक पत्रिका तथा कतिपय पुस्तकों के अतिरिक्त अन्वेषण द्वारा प्राप्त अन्य महत्वपूर्ण सामग्री का प्रकाशन करा देना भी अभीष्ट था परन्तु अर्थाभाव के कारण ऐसा किया जाना सम्भव नहीं हो सका। हर्ष की बात है कि भारत सरकार के वैज्ञानिक संशोध एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम मन्त्रालय (Ministry of Scientific Research and Cultural Affairs) ने अपनी आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास की योजना के अंतर्गत हमारे कार्यक्रम को स्वीकृत कर प्रकाशन के लिये १५) रु इस मद में राजस्थान सरकार को दिये तथा राजस्थान सरकार द्वारा उतनी ही राशि अपनी ओर से मिलाकर कुल ३ ०) तीस हजार की सहायता राजस्थानी साहित्य के सम्पादन-प्रकाशन

२५. मुहुर्त—	श्री अगरचंद नाहटा और म० विनय सागर
२६ जिनहर्ष ग्रन्थावली	श्री अगरचंद नाहटा
२७ राजस्थानी हस्त लिखित ग्रन्थों का विवरण	,, ,,
२८ दम्पति विनोद	,,
२९ हीयाळी—राजस्थान का बुद्धिवर्धक साहित्य	,, ,,
३० समयसुन्दर रासत्रय	श्री भंवरलाल नाहटा
३१ दुरसा आढ़ा ग्रन्थावली	श्री बदरीप्रसाद साकरिया

जैसलमेर ऐतिहासिक साधन संग्रह (संपा० डा० दशरथ शर्मा) ईसरदास ग्रन्थावली (संपा० बदरीप्रसाद साकरिया) रामरासो (प्रो० गोवर्द्धन शर्मा) राजस्थानी जैन साहित्य (ले० श्री अगरचंद नाहटा) नागदमण (संपा० बदरीप्रसाद साकरिया) मुहावरा कोश (मुरलीधर व्यास) आदि ग्रंथों का संपादन हो चुका है परन्तु अर्थाभाव के कारण इनका प्रकाशन इस वर्ष नहीं हो रहा है।

हम आशा करते हैं कि कार्य की महत्ता एवं गुरुता को लक्ष्य में रखते हुए अगले वर्ष इससे भी अधिक सहायता हमें अवश्य प्राप्त हो सकेगी जिससे उपरोक्त संपादित तथा अन्य महत्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन संभव हो सकेगा।

इस सहायता के लिये हम भारत सरकार के शिक्षा विकास सचिवालय के आभारी हैं जिन्होंने कृपा करके हमारी योजना को स्वीकृत किया और ग्रान्ट-इन एड की रकम मंजूर की।

राजस्थान के मुख्य मंत्री माननीय मोहनलालजी सुखाड़िया, जो सौभाग्य से शिक्षा मंत्री भी हैं और जो साहित्य की प्रगति एवं पुनरुद्धार के लिये पूर्ण सचेष्ट हैं, का भी इस सहायता के प्राप्त करने में पूरा-पूरा योगदान रहा है। अतः हम उनके प्रति अपनी कृतज्ञता सादर प्रगट करते हैं।

राजस्थान के प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षाध्यक्ष महोदय श्री जगन्नाथसिंहजी मेहता का भी हम आभार प्रगट करते हैं जिन्होंने अपनी ओर से पूरी-पूरी दिलचस्पी लेकर हमारा उत्साहवर्द्धन किया जिससे हम इस बृहद् कार्य को सम्पन्न करने में समर्थ हो सके। संस्था उनकी सदैव ऋणी रहेगी।

इसने थोड़े समय में इतने महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का संपादन करके संस्था के प्रकाशन-कार्य में जो सराहनीय सहयोग दिया है, इसके लिये हम सभी ग्रन्थ सम्पादकों व लेखकों के अत्यन्त आभारी हैं।

अनूप संस्कृत लाइब्रेरी और अभय जैन ग्रन्थालय बीकानेर, स्व. पूर्णचन्द्र नाहर संग्रहालय कलकत्ता, जैन भवन संग्रह कलकत्ता, महावीर तीर्थक्षेत्र अनुसंधान समिति जयपुर, ओरियंटल इन्स्टीट्यूट बड़ोदा, भांडारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना, खरतरगच्छ बृहद् ज्ञान भण्डार बीकानेर, एशियाटिक सोसाइटी बंबई, आत्माराम जैन ज्ञानभंडार बड़ोदा, मुनि पुण्यविजयजी, मुनि रमणिक विजयजी, श्री सीताराम लालस, श्री रविशंकर देरासरी, पं. हरिदत्तजी गोविंद व्यास जैसलमेर आदि अनेक संस्थाओं और व्यक्तियों से हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त होने से ही उपरोक्त ग्रंथों का संपादन सम्भव हो सका है। अतएव हम इन सबके प्रति आभार प्रदर्शन करना अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं।

ऐसे प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन श्रमसाध्य है एवं पर्याप्त समय की अपेक्षा रखता है। हमने अल्प समय में ही इतने ग्रन्थ प्रकाशित करने का प्रयत्न किया इसलिये त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक है। गच्छतः स्खलनक्वापि भवत्येव प्रमादतः, हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति साधवः।

आशा है विद्वद्वृन्द हमारे इन प्रकाशनों का अवलोकन करके साहित्य का रसास्वादन करेंगे और अपने सुझावों द्वारा हमें लाभान्वित करेंगे जिससे हम अपने प्रयास को सफल मानकर कृतार्थ हो सकेंगे और पुनः मां भारती के चरण कमलों में विनयपूर्वक अपनी पुष्पांजलि समर्पित करने के हेतु पुनः उपस्थित होने का साहस बटोर सकेंगे।

निवेदक
लालचन्द कोठारी
प्रधान-मंत्री
सादूल राजस्थानी-इन्स्टीट्यूट
बीकानेर

बीकानेर
मार्गशीर्ष शुक्ला १५
सम्वत् २०१७
दिसम्बर ३, १९६०

भूमिका

[प्रथम संस्करण से]

दूहा राजस्थानी साहित्य अेवं राजस्थानी जनताका अत्यन्त प्रिय छंद है। राजस्थानीका दूहा साहित्य जनतामें सदैव लोकप्रिय रहा है। अब भी सैकड़ों दूहे राजस्थानकी जनताकी जिह्वा पर मिलते हैं। अुनमेंसे अधिकांशका बारबार कहावतोंकी भांति प्रयोग होता है। राजस्थानके कहानी कहनेवाले कहानीके भावपूर्ण स्थलोंपर दूहोंका प्रयोग करते हैं। जनता और साहित्यमें विशेष प्रचलित अैसे ही दूहोंका अेक छोटा सा संग्रह प्रस्तुत ग्रन्थमें किया गया है। इस प्रकारका संग्रह मैं आज करीब चौदह पंद्रह वर्षोंसे करता आ रहा हूं। उसी संग्रहमेंसे चुने हुअे करीब १२ दूहोंको इस प्रथम भागमें संकलित किया गया है। संग्रहका अवशिष्ट अंश कई भागोंमें क्रमशः प्रकाशित होगा। यह संग्रह लोगोंके जबानी सुने हुअे दूहों मित्रों द्वारा संग्रह करके भेजे हुअे दूहों प्राचीन तथा अर्वाचीन ग्रन्थोंसे संकलित किये हुअे दूहों, अेवं प्राचीन संग्रहोंसे चुने हुअे दूहों को लेकर तय्यार किया गया है। मेरा विचार था कि टिप्पणीमें तुलनाके लिअे संस्कृत-प्राकृत और हिन्दी अंग्रेजी तथा अन्यान्य भाषाओंके पद्य भी दिये जावें और सामग्री भी बहुत कुछ तय्यार थी पर ग्रन्थका कलेवर बढ़ जानेके भयसे अैसा नहीं किया गया। इससे ग्रंथका मूल्य बहुत बढ़ जाता और साधारण पाठकोंको असुविधा होती।

संग्रह-कार्यमें मुझे अनेक दिशाओंसे सहायता मिली। सबसे प्रथम संग्रह मुझे श्री कुंवर जोरसिंह, कुंवर चैनसिंहजी बी. अे., कुंवर बलवंतसिंहजी बी. अे. तथा ठाकुर रामसिंहजी अेम. अे. अेल-अेल. बी. द्वारा प्राप्त हुआ जिससे अुत्साहित होकर मैंने इस कामको आगे बढ़ाया। आगे चलकर नीचे लिखे तथा अन्यान्य अनेक सुहृदोंने मेरे इस संग्रहकी वृद्धि करनेमें सहायता दी—

प्रवचन

[लेखक—महामहोपाध्याय रायबहादुर श्रीगौरीशंकर हीराचंद ओझा, अजमेर]

भारतवर्षके प्राचीन वाङ्मयमें काव्यका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। गद्यकी अपेक्षा कवितामें प्रायः विशेष आकर्षण और प्रभावोत्पादनकी शक्ति रहती है। किसी घटना-विशेषको देखकर मानव-हृदयमें सहसा जो विचार उत्पन्न होते हैं उनकी कविताके रूपमें बहुत सुन्दर अभिव्यंजना होती है। इसी विचारको लक्ष्यमें रखते हुये अंग्रेजी-साहित्यके सुप्रसिद्ध आलोचक मैथ्यू आर्नोल्डने कविताके सम्बन्धमें लिखा है—

Poetry is nothing less than the most perfect speech of man that in which he comes nearest to being able to utter the truth

अर्थात् कविता मनुष्यकी सर्वाङ्गसुंदर उक्ति है, जिसमें वह सत्यको अधिक-से अधिक सफलतापूर्वक प्रकट कर सकता है।

प्राचीन भारतीय काव्यके इतिहासमें महर्षि वाल्मीकि आदि-कवि और उनका ग्रंथ रामायण आदि-काव्य माना जाता है। अेक बार वाल्मीकिने देखा कि किसी व्याधने कामासक्त क्रौंच (पक्षिविशेष) मिथुनमेंसे अेक पक्षीको अपने बाणसे आहत किया, तो तत्क्षण ऋषिके कोमल हृदय पर उसका गहरा प्रभाव पड़ा और उस समय उनके शोकके उद्गार अेकदम श्लोकके रूपमें प्रकट हुये, जिसके सम्बन्धमें महाकवि कालिदासने अपने रघुवंश महाकाव्यमें लिखा है—

निषाद-विद्धाण्डज-दर्शनोत्थः
श्लोकत्वमापद्यत यस्य शोकः।

संस्कृत वाङ्मयके इतिहासका अध्ययन करनेसे ज्ञात पड़ता है कि विगत ढाई हजार वर्षोंमें भारतके काव्य-कलाके अनुपम अद्भुत कोविदोंने कविता-कामिनीके कलेवरको अनेक प्रकारसे अलंकृत किया है। प्राचीन कवि-पुङ्गवोंकी चमत्कार-पूर्ण कवितासे प्रभावित होकर ही जयदेवने बारहवीं शताब्दीमें लिखा था—

केषां नैषा कथय कविता-कामिनी कौतुकाय।

भारतीय कवियोंने अपनी काव्य-रचनामें न केवल ईश्वर-भक्ति और अनित्यता पर अपनी लेखनी चलायी है, किन्तु उनके काव्य-ग्रंथोंमें भाँति-भाँतिकी पहेलियों, समस्यापूर्तियों, अन्योक्तियों, ऋतु-वर्णन प्राकृतिक दृश्योंका चित्रण, नाना प्रकारके पशु-पक्षियों तथा भिन्न-भिन्न व्यवसायोंके मनुष्योंका वर्णन नायक-नायिका-भेद तथा नायिकाओंके अंग-प्रत्यंगका वर्णन, सूर्योदय, सूर्यास्त, मध्याह्न, अपराह्न आदि विभिन्न कालोंका यथार्थ वर्णन, राजदरबारों और युद्धोंका विशद विवरण, सेनाक्रमणका निरूपण, विषयोपभोगकी तुच्छताका विवेचन, सामान्य नीति आदि अनेक महत्त्वपूर्ण विषयोंका भी सुचारु समावेश देख पड़ता है। यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक कविके काव्यमें इन सब विषयोंका विवरण होना चाहिये किन्तु बहुधा उत्कृष्ट काव्योंमें और विशेषतः महाकाव्योंमें, इनमेंसे कई एक विषयोंका वर्णन यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होता है। इस प्रकार क्रमशः अनेक सुकवियोंके परिश्रमके फलस्वरूप विभिन्न विषयोंपर बहुत-कुछ काव्य-साहित्य प्रस्तुत होने लगा तब कतिपय काव्य-मर्मज्ञ सरस्वती-पुत्रोंने अनेक कवियोंके ग्रंथोंसे विविध विषयोंके चुने हुए सुभाषित पद्योंका संग्रह आरंभ किया। उनके सङ्कलित ग्रंथोंको सुभाषित संग्रह (Anthology) कह सकते हैं।

यद्यपि प्राचीनकालके भारतीय संग्रह-कर्त्ताओंकी प्रवृत्ति अनेक विषयों-पर पद्य-संग्रहकी नहीं किन्तु कुछ अति महत्त्वपूर्ण विषयोंके पद्य-संग्रह की ओर थी। सुविख्यात भर्तृहरिने नीति शृंगार और वैराग्य इन तीन विषयोंपर सम्भवतः सुन्दर पद्योंका नीतिशतक, शृंगारशतक और वैराग्यशतक

नामसे संग्रह किया। क्षिलहण नामक काश्मीरी कविके शान्ति-शतकमें वैराग्यविषयक लगभग १०० पद्योंका संग्रह है। श्रीशंकराचार्यने सांसारिक जीवन की अनित्यताके सम्बन्धमें अपने मोहमुद्गरमें अनेक श्लोक लिखे। इसी प्रकार चाणक्यनीति नामक ग्रंथमें, जिसका आजतक पर्याप्त प्रचार है, नीति-सम्बन्धी पद्योंका संग्रह मिलता है। इस प्रकारके ग्रंथोंमें वि० सं० १०५० में रचित जैन विद्वान् अमितगतिका 'सुभाषितरत्नसन्दोह' भी उल्लेखनीय है।

यह तो हुई प्राचीन विद्वानों द्वारा रचित अथवा संगृहीत अेकांगी पद्योंकी बात किन्तु विक्रम संवत् १००० के पश्चात्—इस समय तक कालिदास माघ, भारवि आदि अनेक प्रसिद्ध कवि-पुंगवोंके अमर काव्य-ग्रंथोंकी रचना हो चुकी थी—सुभाषित-संग्रहके अैसे ग्रंथ भी उपलब्ध होते हैं, जिनमें उल्लिखित विभिन्न विषयोंके अनेक सुंदर पद्योंका उत्कृष्ट संग्रह हुआ है। उन संकलन-ग्रंथोंको देखकर यह निस्संदेह कहा जा सकता है कि उनके संग्रहकर्त्ताओंका अत्यन्त गम्भीर अध्ययन रहा होगा, और मुद्रण-यंत्रका अभाव होते हुअे भी उन्होंने सैकड़ों विद्वानोंके ग्रंथोंका मनोयोगपूर्वक अवलोकन किया होगा। अन्यथा उस अतीतकालमें इतने विषयोंपर उत्कृष्ट पद्योंके इतने बड़े-बड़े संग्रह तैयार करना अत्यन्त कठिन समस्या होनी चाहिअे। सुभाषित-संग्रहमें चुने गये पद्योंका भावपूर्ण होना नितान्त आवश्यक है, अन्यथा उनकी उपयोगिता नहीं रहती। अेक प्राचीन कविकी उक्ति है—

> सुभाषितेन गीतेन युवतीनां च लीलया।
> मनो न भिद्यते यस्य स योगी ह्यथवा पशुः॥

दूसरे शब्दोंमें इससे यही अर्थ निकलता है कि योगी अथवा पशुकी कोटिसे बाहर रहनेवाले प्रत्येक व्यक्तिका चित्त सुभाषित पद्यको पढ़, सुन या समझकर भावार्थ में तन्मय होना चाहिअे। अैसी दशामें संकलन कर्त्ताओंका कार्य और भी कठिन हो जाता है।

अबतक मिले हुअे इस प्रकारके सुभाषित-ग्रंथोंमें सबसे प्राचीन

संकलन किसी बौद्ध विद्वान् द्वारा अनुमानतः बारहवीं शताब्दीमें संकलित 'कवीन्द्र-वचन-समुच्चय' है, जिसको नेपालसे प्राप्त हस्तलिपिके आधारपर डाक्टर टामसने अत्यंत योग्यतापूर्वक सम्पादित किया है। इसमें जिन कवियोंके ५२५ पद्योंका संग्रह हुआ है, उनमेंसे कोई भी ई० सन् १   के पश्चात् का नहीं है। तदनंतर ई० स १२ ५ में बंगालके राजा लक्ष्मणसेनके दरबारके विद्वान श्रीधरदासने 'सदुक्तिकर्णामृत' तैयार किया जिसमें ४८६ कवियोंके पद्य संगृहीत हैं। तेरहवीं शताब्दीके उत्तरार्धमें जल्हण पण्डितने 'सुभाषितमुक्तावली' का संकलन किया। ई० स० १३६३ में शार्ङ्गधर नामक विद्वानके द्वारा 'शार्ङ्गधरपद्धति' नामक विख्यात संकलन प्रस्तुत हुआ। इसमें १६३ विषयोंपर ४६८९ पद्योंका अपूर्व संग्रह हुआ है। मद्रासकी हस्तलिखित पुस्तकोंकी सूचीसे ज्ञात होता है कि ख्यातनामा वेद-भाष्यकार सायणने भी चौदहवीं शताब्दीके उत्तरार्धमें 'सुभाषित-सुधानिधि' नामक संग्रह-ग्रंथका निर्माण किया था। पंद्रहवीं सदीमें वल्लभदेवने ३५० कवियोंके १ १ विषयोंके ३५२७ पद्योंका 'सुभाषितावलि' नामक उत्कृष्ट संग्रह किया। इसमें शार्ङ्गधर-पद्धतिके कई पद्य ज्यों-के-त्यों पाये जाते हैं। इसी शताब्दीमें श्रीवर पण्डितने 'सुभाषितावलि' नामक एक और संग्रह प्रस्तुत किया जिसमें ३८० से अधिक कवियोंके पद्य संकलित हुये हैं। रूपगोस्वामीने अपनी 'पद्यावली' में अनेक विद्वानोंके कृष्ण-भक्ति विषयक पद्योंका संग्रह किया। न केवल संस्कृत-भाषामें ही सुभाषित-संग्रह तैयार हुये किन्तु प्राकृतमें भी जयवल्लभ नामक श्वेताम्बर जैन विद्वानने 'वज्जालग्ग' शीर्षक सुभाषित-ग्रंथ तैयार किया।

जिस प्रकार प्राचीन कालमें विद्वानोंने समय-समय पर इस महत्त्वपूर्ण कार्यका सम्पादन किया उसी तरह आधुनिक युगके विद्वान् भी इस कार्यके महत्त्वसे अपरिचित नहीं रहे। इस समयके संकलन ग्रंथोंमें कृष्णशास्त्री भाटवडेकरका 'सुभाषित-रत्नाकर' तथा काशीनाथ पांडुरंग परब द्वारा संकलित 'सुभाषित-रत्न-भांडागार' नामक वृहद्

अैसे अनुपम संग्रह उल्लेखनीय हैं। संस्कृत भाषाकी भावपूर्ण एवं सुललित काव्य-रचनापर मुग्ध होकर न केवल अनेक अेतद्देशीय विद्वानोंने ही सुभाषित-पद्य-संग्रहका कार्य किया किन्तु गत शताब्दीमें जर्मनीके सुविख्यात संस्कृतज्ञ विद्वान डाक्टर बाथलिंग्कने भी सारे संस्कृत साहित्यसे कोई ८००० स्फुट पद्योंको चुनकर जर्मन-भाषामें अपने सुंदर व्याख्यानुवादके साथ Indische Sprüche नामक विशाल ग्रंथके रूपमें प्रकाशित किया।

जिस प्रकार संस्कृत-साहित्यमें सुभाषित-संग्रह तैयार होते रहे वैसे ही हिन्दीमें भी कुछ पद्य-संग्रह समय-समयपर बने और प्रकाशित हुअे परन्तु उनमें राजस्थानी-साहित्यका स्थान नहींके बराबर है। मोतीलाल मोलंगी द्वारा संकलित 'आनंद-संग्रह-कोष' तथा मेरे मित्र मलसीसर ठाकुर स्वर्गीय श्रीभूरसिंहजी शेखावतके 'विविध-संग्रह' में राजस्थानी भाषाके कुछ सुन्दर पद्य मैंने पढ़े हैं परन्तु राजस्थानीकी दृष्टिसे इन्हें सर्वांगसुन्दर नहीं कह सकते।

राजस्थानी भाषाका साहित्य भी साहित्यका अेक महत्त्वपूर्ण अंग है। सैकड़ों वर्षोंसे राजपूतानेके भिन्न-भिन्न हिन्दू राजाओंके आश्रयमें रहते हुअे अनेक चारण भाटों तथा कवियोंके द्वारा राजस्थानी भाषाका काव्य-साहित्य तैयार होता रहा है। राजस्थानीकी कविता

१ उदाहरणार्थ—कालिदास हजारा, प्रताप-हजारा, दलपतिराय-हजारा, षट्ऋतु-हजारा, रसमाधुरी-हजारा, नखशिखसंग्रह, शिवसिंह सरोज, भारतेन्दु कृत सुन्दरी-तिलक, रागसागरोद्भव रागकल्पद्रुम, रागरत्नाकर, [illegible] कृत राज-रत्नाकर, मतिरामसुधा, कविकुलमाला, वियोगी-हरि कृत ब्रज-माधुरीसार, श्यामसुन्दरदास कृत सतसई-सप्तक, लोचनप्रसाद पाण्डेय कृत कविता-कुसुममाला, रामनरेश त्रिपाठी कृत कविताकौमुदी तथा ग्राम गीत-माला, भगवानदीन कृत सूक्तिसरोवर, वियोगी-हरि कृत भजन-संग्रह, सन्तबानी-संग्रह, साहित्य-रत्नाकर इत्यादि-इत्यादि।

—म. रा.

भी वैसी ही मनस्पर्शिनी, भावग्राहिणी एवं प्रभावोत्पादिनी है जैसी प्राचीन संस्कृत और हिन्दी कविता। जो वस्तुतः काव्य-मर्मज्ञ हैं, वे एक बार राजस्थानीके चुने हुए पद्योंको पढ़ या सुनकर उनकी हृदयसे सराहना किए बिना नहीं रह सकते। जिस राजस्थानी भाषाका काव्य-साहित्य इतना व्यापक एवं मनोभावोत्पादक है उसके विभिन्न विषयोंके चुने हुए सारपूर्ण पद्योंके सुन्दर संग्रहकी साधारणतः हिन्दी-प्रेमियों और विशेषतः राजस्थानियोंके लिये चिरकालसे आवश्यकता थी। राजस्थानीके पद्योंका कोई उत्कृष्ट संग्रह अब तक प्रकाशित नहीं हो सका, इसका एक कारण यह भी है कि राजस्थानियोंके सिवा अन्य प्रान्तीय साहित्य-प्रेमी इसको कम समझते हैं। इसके सिवाय इसका बहुत-कुछ साहित्य अब तक अमुद्रित और हस्तलिखित ग्रन्थोंमें ही [illegible] विद्यमान है इसलिये विशेष खोज और परिश्रमके बिना इस भाषाके उत्कृष्ट पद्योंका संग्रह होना बहुत कठिन है। इसीसे यह महत्त्वपूर्ण कार्य अब तक अपूर्ण-सा पड़ा रहा।

हर्षका विषय है कि इधर कुछ वर्षोंसे राजपूतानेके कतिपय इने-गिने उत्साही साहित्य-सेवियोंने राजस्थानीकी सेवाका व्रत ग्रहण किया है और इनमें बीकानेर-निवासी श्रीयुत नरोत्तमदासजी स्वामीका प्रमुख स्थान है। इस भाषाके अन्य कर्मठ सेवकोंमें बीकानेरके ठाकुर श्रीरामसिंहजी एम० ए० (वर्तमान अध्यक्ष शिक्षा-विभाग, बीकानेर राज्य) और श्रीसूर्यकरणजी पारीक एम० ए० (वाइस प्रिंसिपल बिड़ला कालेज पिलानी) के नाम उल्लेखनीय हैं। पिछले कई वर्षोंसे स्वामीजी अनुकरणीय तत्परताके साथ राजस्थानी साहित्यका अध्ययन करते रहे हैं। कुछ वर्ष पूर्व जब मैं बीकानेर गया था तब स्वामीजीने मुझे राजस्थानीका विविध विषयोंका अपना संग्रह दिखलाया था। उसे देखकर मुझे बहुत हर्ष हुआ था। स्वामीजीने कई वर्षोंके परिश्रमसे अनेक प्राचीन ग्रन्थों [illegible] तथा जन-श्रुति प्रचलित विभिन्न विषयोंके मार्मिक दोहोंका सुन्दर संग्रह किया है, जिसका यह प्रथम भाग, आशा

है। हिन्दी-प्रेमियों और विशेषतः राजस्थान-वासियोंके लिये एक अनूठी वस्तु होगी।

राजस्थानी पद्य-साहित्यमें प्रायः दोहा, सोरठा (जो राजस्थानी पिंगलमें दोहेका ही एक भेद माना जाता है), और कवित्त आदि छन्द अधिक पाये जाते हैं, किन्तु दोहोंका अधिक प्रचार है और आज भी अनेक राजस्थानियोंके मुखसे समयानुसार अनेक प्रकारके दोहे सुने जाते हैं। थोड़े शब्दोंका होनेके कारण दोहा उसी तरह सरलतापूर्वक कंठ किया जा सकता है, जिस प्रकार संस्कृतमें अनुष्टुप् वृत्त।

इस पहिले भागमें विद्वान् संकलनकर्त्ताने विनय, नीति, वीर, ऐतिहासिक और भौगोलिक, हास्य और व्यंग, प्रेम, शृंगार-रस, शान्त-रस तथा प्रासंगिक दीपकोंको मुख्य भागोंमें विभक्त किया है। प्रत्येक भागमें अनेक रोचक विषय पसंद कर उनके सम्बन्धमें चमत्कार-पूर्ण दोहोंका सुचारु संकलन किया है। टिप्पणीमें कठिन एवं अपरिचित शब्दोंका अर्थ देनेसे तथा आरंभमें राजस्थानी भाषा एवं साहित्यकी परिचायक और आलोचनात्मक प्रस्तावना जोड़ देनेसे पुस्तककी उपयोगिता और भी बढ़ गयी है। इस उत्कृष्ट संग्रहको हिन्दी-प्रेमियोंके सम्मुख प्रस्तुत करनेके लिये स्वामीजी साधुवादके पात्र हैं।

साथ ही समस्त राजस्थानियोंको भारतके सुविख्यात दानवीर सेठ घनश्यामदासजी बिड़लाका कृतज्ञ होना चाहिये क्योंकि उन्होंने राजस्थानी साहित्यको पुनरुज्जीवित करनेके लिये एक ग्रन्थमाला स्थापित करके उसके प्रकाशनकी व्यवस्था कर दी है और बिड़लाजीकी इस दानशीलताके फलस्वरूप ही यह उत्तम संकलन प्रकाशित हो रहा है।

आशा है इस सुन्दर संकलनको पढ़कर पाठकगण राजस्थानी भाषाके प्रति प्रेम उत्पन्न होगा और स्वामीजीके आदर्शका अनुसरण करते हुए निकट भविष्यमें समग्र राजस्थानी साहित्यिकोंका एक दल तैयार हो जायगा।

अजमेर,
चैत्र कृ० ११ सं० १९९१ वि०

गौरीशंकर हीराचंद ओझा

प्रस्तावना

पूर्वार्ध

राजस्थानी भाषा और साहित्यका दिग्दर्शन

(१) राजस्थानी भाषा

राजस्थानी राजस्थान और मालवा प्रान्तकी भाषा है। इसके पूर्वमें पूरबी और ब्रजभाषा, पूर्वोत्तरमें ब्रज और बांगरू, उत्तरमें पंजाबी, पश्चिमोत्तरमें पश्चिमी पंजाबी (जिसे लहँदा भी कहा गया है), पश्चिममें सिंधी, दक्षिणपश्चिममें गुजराती और दक्षिणमें मराठी आदि भाषाएँ बोली जाती हैं।

इसकी पाँच मुख्य शाखाएँ हैं—

(१) मारवाड़ी—इसका क्षेत्र सबमें अधिक विस्तृत और इसका साहित्य सबसे अधिक संपन्न है। यह पश्चिमी राजस्थान (जोधपुर, मेवाड़, जैसलमेर, बीकानेर, शेखावाटी आदि) की बोली है।

(२) ढूँढाड़ी—इसका क्षेत्र पूर्वी राजस्थान (जयपुर, कोटा, बूँदी, झालावाड़, किशनगढ़ आदि) है। इसमें भी अच्छा साहित्य वर्तमान है।

(३) मेवाती—यह मेव प्रान्त अर्थात् अलवर आदि भागोंमें बोली जाती है। इसमें साहित्य नहींके बराबर है।

(४) मालवी—यह मालवा प्रान्त (इन्दौर, भोपाल, [illegible] तथा ग्वालियर राज्यके अधिकांश भाग) की बोली है। इसमें बहुत थोड़ी साहित्य-रचना हुई है।

(५) भीली—यह राजस्थानीका वह रूप है जिसे भील आदि पहाड़ी जातियाँ बोलती हैं। इसमें गुजरातीका मेल बहुत पाया जाता है।

राजस्थानी भाषा बोलनेवालोंकी संख्या दो करोड़के लगभग है। राजस्थानकी वैश्यजाति भारतके कोने-कोनेमें फैली हुई है अतः इसके बोलनेवाले समस्त भारतवर्षमें मिल सकते हैं।

(२) राजस्थानीका विकास

राजस्थानीका विकास अपभ्रंश भाषासे हुआ। अपभ्रंशका विकास विक्रमकी प्रारंभिक शताब्दियोंमें आरंभ हुआ। उसके विकासका प्रारंभिक स्थान भी पश्चिमी भारत ही था। आरंभमें यह साधारण जनताकी बोलचालकी भाषा थी। आगे चलकर उसने साहित्यमें पैर रक्खा। छठी शताब्दीमें तो बड़े-बड़े राजा-महाराजा भी अपभ्रंशमें काव्य-रचना कर सकना अपने लिये गौरवकी बात समझते थे। काव्यादर्शकार दण्डिन्‌के समयमें उसमें अच्छा साहित्य वर्तमान था। दण्डिने समस्त साहित्यके तीन विभाग करके उनमें अपभ्रंश साहित्यकी भी गणना की है। राजशेखरके जमाने तक तो अपभ्रंश साहित्यने सम्माननीय स्थान प्राप्त कर लिया था।

अपभ्रंशके साहित्यमें प्रवेश करनेपर उसमें धीरे धीरे स्थिरता आने लगी। पर बोलचालकी भाषा स्थिर नहीं रह सकती। विकास-परिवर्तन-उसके लिये स्वाभाविक है। अतः साहित्यिक भाषा और बोलचालकी भाषामें धीरे-धीरे अन्तर पड़ने लगा।

आरंभमें प्रायः समस्त भारतमें अेक ही भाषा साधारण प्रान्तीय भेदों के साथ चाली जाती थी। परंतु हर्षवर्धनके समयके पश्चात् समस्त भारतकी राजनीतिक अेकता छिन्नभिन्न हो गयी। देश छोटे-छोटे राज्योंमें बँट गया। प्रान्तोंका पारस्परिक आवागमन धीरे-धीरे कम होता गया जिससे उनका आपसका संबंध शिथिल होने लगा। इससे भाषाकी अेकरूपता भी नष्ट होने लगी और बोलचालकी भाषाके प्रान्तीय भेदोंका जन्म हुआ। आरंभमें प्रान्तीय भेदोंमें इतनी विभिन्नता न थी कि अेक प्रान्तवाले दूसरे प्रान्तवालोंकी बोलीको न समझ सकें परन्तु धीरे-धीरे यह विभिन्नता बढ़ती गयी और वर्तमान देशभाषाओंका आरंभ हुआ।

अपभ्रंशके विकासको हम दो भागोंमें बाँट सकते हैं—(१) पूर्व

१—चन्द्रमौलि-ओझा (दूसरे) चरित्रका लेख देखिये।

कालीन अपभ्रंश और (२) उत्तरकालीन अपभ्रंश । इसी उत्तरकालीन अपभ्रंशको विद्वानोंने पुरानी हिन्दी, जूनी गुजराती, या पुरानी राजस्थानीके नाम भी दिये हैं ।

इसी उत्तरकालीन अपभ्रंशका विकसित रूप प्राचीन राजस्थानी है। प्राचीन राजस्थानीका क्षेत्र गुजरातसे लेकर प्रयागतक उसका विस्तृत भूभाग था। इस समस्त भूभाग एक ही भाषा साधारण विभिन्नताओंके साथ पाली जाती थी। कालक्रमसे भाषामें धीरे-धीरे विभिन्नता बढ़ती गयी पर साहित्यिक भाषा तो बहुत दिनों तक वही प्राचीन भाषा रही जिसे प्राचीन राजस्थानी कहा जा सकता है। कबीर आदि प्राचीन महाकवियोंकी भाषाको देखनेसे इस सिद्धान्तकी पुष्टि होती है। कबीरकी भाषा अन्य भाषाओं की अपेक्षा राजस्थानीके अधिक निकट है । इसी प्राचीन राजस्थानीसे ब्रजभाषा, गुजराती और आधुनिक राजस्थानीका विकास हुआ है ।

(३) राजस्थानी भाषाका साहित्य

राजस्थानीका प्राचीन साहित्य बहुत विस्तृत और महत्त्वपूर्ण है। पद्य ही नहीं किंतु गद्य भी उसमें प्रचुर परिमाणमें मिलता है। भारतीय भाषाविज्ञान और मध्यकालीन भारतीय इतिहासके सुचारु अध्ययन के लिये राजस्थानी साहित्यका अध्ययन नितान्त आवश्यक है। खेद है कि विद्वानोंका ध्यान अभीतक इस ओर नहीं गया और यह बहुमूल्य साहित्य भाण्डारों ताल-ताल अज्ञानांधकारके गहरे गर्त्तमें छिपा पड़ा है।

राजस्थानी साहित्यको हम दो भागोंमें बाँटेंगे—(१) चारणी साहित्य, और (२) साधारण बोलचालकी राजस्थानीका साहित्य।

१—देखिये ढोलामारूरा दूहा, प्रस्तावना (उत्तरार्ध)

२—राजस्थानी भाषाके विकासके विस्तृत विवेचनके लिये लेखककी लिखी हुई ढोलामारूरा दूहा नामक ग्रन्थकी प्रस्तावना (उत्तरार्ध) देखिये। यह ग्रंथ काशीकी नागरी प्रचारिणीसभा द्वारा प्रकाशित हुआ है।

चारणी साहित्य प्रधानतया वीर और शृंगार रसात्मक है। चारणी कविताका अेक बड़ा भाग मुख्यतया गीतों में है। इन गीतोंका विस्तृत विवरण कवि रघुवरजस-प्रकास, रघुनाथरूपक आदि ग्रंथोंमें किया गया है। गीत-साहित्य राजस्थानी साहित्यकी अेक विशेषता है। ये गीत विशेषतया अैतिहासिक व्यक्तियोंके संबंधके हैं और उनमें इन लोगोंके वीरता तथा उदारतापूर्ण पराक्रमोंका वर्णन है। देवताओंकी स्तुतियाके धार्मिक गीत भी बहुत बड़ी संख्यामें मिलते हैं। छन्दोंमें दूहा, कवित्त (छप्पय) पाधड़ी (पद्धरी), भुजंगप्रयात, मोतियदाम, हनूफाळ, त्रिभंगी चारणी साहित्यके प्रमुख छंद हैं।

चारणी कविताकी अेक प्रमुख विशेषता वैणसगाई अलंकारका प्रयोग है। वैणसगाई अेक प्रकारका अनुप्रास है। इसके लिअे यह आवश्यक है कि छन्दके प्रत्येक चरणमें पहले शब्दका आरंभ जिस वर्णसे हो उसके अंतिम शब्दका आरंभ भी उसी वर्णसे होना चाहिअे[1]। यहाँपर एक उदाहरण दिया जाता है—

> गंगाजळ गुण्णीह निरमे ही छीबी नहीं।
> भव भवमें भट्टीह, मूत हुआ भागीरथी ॥

डिंगळमें गद्य भी लिखा गया है। वह भी अनेक-रूपात्मक है। डिंगळ गद्यका अेक भेद वचनिका है। वचनिका उस गद्यको कहते हैं जिसमें वाक्योंकी तुक मिलती जाय।[2] वचनिकाओंमें दो बहुत प्रसिद्ध हैं—

१—नहीं तो वह वर्ण अंतिम शब्दमें कहीं न-कहीं अवश्य आना चाहिअे। वैणसगाईके लिअे च छ ज-झ ग-घ प-फ, त द, ड ढ च-ट, न-ण, और व ब में तथा अ-इ-उ-अे-औ-य-व में अन्तर नहीं गिना जाता।

२—तुकवाला गद्य लिखनेकी परिपाटी बहुत प्राचीन है। पंद्रहवीं शताब्दीमें लिखी हुई कई राजस्थानी भाषाकी कथाओं इस प्रकारके गद्यमें लिखी हुई मिली हैं। हिंदीमें कुतुबशतक और ईशावस्यादिमें इस प्राचीन परिपाटीका अनुसरण कहीं-कहीं किया है।

(१) खीची अचलदासरी वचनिका—इसमें गागरोनगढ़के चौहान राजा अचलदास और मालवगढ़के सुल्तानके युद्धका वर्णन है जिसमें अचलदास वीरगति को प्राप्त हुआ। इसका कर्ता शिवदास नामक चारण था जो उक्त राजाका समकालीन था। यह रचना संवत् १४७० के आसपासकी है।

(२) राव रतन महेसदासोतरी वचनिका—औरंगजेब और महाराज जसवंतसिंहके बीच उज्जैनमें जो युद्ध हुआ उसमें रतनसिंहने वीरगति प्राप्त की। उसका वर्णन इस ग्रंथ में है। इसका लेखक खिड़िया चारण जग्गा था जिसने स्वयं उक्त युद्ध में भाग लिया था। इसका रचनाकाल अठारहवीं शताब्दीका द्वितीय दशक है।

इनमें पहली प्राचीनताकी दृष्टिसे और दूसरी भाषाशैलीकी दृष्टिसे महत्वपूर्ण है।

साधारण राजस्थानी साहित्यके तीन विभाग किए जा सकते हैं—(१) मौखिक रचनायें (२) जैन रचनायें, और (३) जैनेतर रचनायें।

मौखिक साहित्यके निर्माता ढाढी, ढोली, भाट आदि जातियाँ हैं जिनका व्यवसाय गा-बजाकर अथवा कथा-कहानी सुनाकर जनताको रिझानेका है। ऐसे साहित्यकी रचना प्रधानतया मौखिक रूपमें ही होती है और वह बहुत काल तक मौखिक रूप में ही रहता है। समय-के साथ-साथ उसकी भाषा तथा ढाँचा आदि बदलते रहते हैं। नये-नये गायक (या पाठक) अपनी-अपनी रुचिके अनुसार अथवा परिस्थितिको देखकर परिवर्तन करते रहते हैं। आगे चलकर कोई उत्साही व्यक्ति उसे लेखबद्ध कर देता है। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि यह साहित्य हमें अपने आरम्भिक असली रूपमें प्राप्त नहीं हो सकता। राजस्थानीमें ऐसा साहित्य प्रचुर परिमाण में है, केवल संग्रह करके लिपिबद्ध करनेकी आवश्यकता है (समय-समयपर कुछ लिपिबद्ध किया भी गया है)।

जैन रचनाओंके रचयिता जैन साधु अथवा जैन गृहस्थ हैं। यह साहित्य तुरंत ही लिपिबद्ध हो जानेके कारण बहुत-कुछ अपने असली

रूपमें सुरक्षित है। भाषाविज्ञानके लिये इसका बड़ा भारी महत्त्व है। प्राचीन राजस्थानी प्राचीन गुजराती तथा प्राचीन हिंदी आदि भाषाओंके क्रमिक विकासके अध्ययनके लिये इसका अध्ययन नितान्त आवश्यक है। प्राचीनता-प्रेमके कारण इस साहित्यकी भाषापर प्राकृत और अपभ्रंशका प्रभाव पाया जाता है फिर भी बोलचालकी भाषाके यह अधिक सन्निकट है। यह साहित्य प्रधानतया धार्मिक या कथात्मक है।

जैनेतर लेखकोंकी कृतियोंको हम तीसरे विभागमें रखेंगे। अत्यन्त प्राचीनकालकी ऐसी कृतियाँ बहुत कम उपलब्ध होती हैं। इनमेंसे कुछ आगे चलकर बहुत लोकप्रिय हुईं और धार्मिक साहित्यकी भाँति जनताकी वस्तु बन गयीं। इसकारण उनमें समय-समयपर बहुत परिवर्तन और परिवर्धन होते रहे और उनको अपने असली रूपमें प्राप्त करना कठिन है। इस विभागमें धर्म नीति तथा कथात्मक रचनाओंकी प्रधानता है। खड़ीबोली-मिश्रित राजस्थानी अथवा व्रज-मिश्रित राजस्थानीकी रचनायें भी इस विभागके अन्तर्गत आवेंगी।

राजस्थानीका सन्त-साहित्य भी बहुत बड़ा है। इस साहित्यकी भाषामें व्रज, खड़ीबोली, गुजराती, पंजाबी आदि भाषाओंका मेल पाया जाता है। सूरदास, तुलसीदास, कबीर आदि अनेक संतोंके भजन भी राजस्थानी रूप धारण करके राजस्थानी जीवन और राजस्थानी साहित्यके अंग बन गये हैं।

राजस्थानीका गद्य-साहित्य बहुत विस्तृत और महत्त्वपूर्ण है। हिन्दीमें प्राचीन गद्य-साहित्यका प्रायः अभाव है पर राजस्थानीमें गद्य-लेखनकी परंपरा अपभ्रंश-कालसे वर्तमान शताब्दीके प्रारंभ तक अनवच्छिन्न रूपसे जारी रही है। प्राचीन कालके अधिकांश गद्य-लेखक जैन लोग हैं। सत्रहवीं शताब्दीके मध्यभागसे राजस्थानके विभिन्न राज्योंकी ख्यातें (इतिहास) बराबर लिखी जाने लगीं। ऐतिहासिक अर्धऐतिहासिक और काल्पनिक कथा-साहित्यका तो प्रवाह-सा बह चला। असामयिक राज-कीय परिवर्तनों के कारण तथा अन्यान्य कारणोंसे बहुत-कुछ प्राचीन

गद्य-साहित्य नष्ट हो गया या बिखर गया। बहुत-सी राजकीय ख्यातें लेखकों या उस विभागके अधिकारियोंकी निजी संपत्ति बनकर विस्मृतिके गर्तमें जा पड़ीं। राजस्थानीका अधिकांश गद्य-साहित्य ख्याता या बातों के रूपमें है। इसके बाद धार्मिक गद्यका नंबर आता है। संस्कृत और प्राकृतके धार्मिक तथा लौकिक कथा-ग्रंथोंके अनुवाद भी राजस्थानीमें हुए और उनमेंसे अच्छी प्रसिद्धि प्राप्त की। राजस्थानमें गद्य-साहित्य-लेखनकी यह परंपरा बीसवीं शताब्दीके आरंभ तक बराबर चलती रही। इस समयके आसपास हिन्दीका आगमन हुआ और राजस्थानकी शिक्षा-सभ्यामाम राजस्थानीकी जगह उसको स्थान मिला। अब हिंदी पढ़े-लिखे शिष्ट-समाज द्वारा समादृत हुई और राजस्थानी धीरे-धीरे गंवारू बोली समझी जाने लगी। फल यह हुआ कि राजस्थानीमें साहित्य-रचना बंद हो गयी और राजस्थानी लेखक हिंदीमें लिखने लगे।

(४) राजस्थानीमें दूहा-साहित्य

दूहा-साहित्य राजस्थानीका बहुत महत्त्वपूर्ण साहित्य है। जो स्थान संस्कृतमें अनुष्टुप् श्लोकका तथा जो स्थान प्राकृतमें गाथाका है वही उत्तरकालीन अपभ्रंश (लोकभाषा), राजस्थानी और गुजरातीमें, तथा हिंदीमें भी दूहेका है। छोटा होनेके कारण इसे याद रखनेमें सुभीता होता है। यह इसकी लोकप्रियताका एक मुख्य कारण है। बातको संक्षेपमें और चुभते हुए ढंगसे कहनेके लिये दूहा बहुत ही उपयुक्त छंद है। इसी कारण कबीर आदि सन्त-महात्माओंने अपनी उक्तियाँ इसी छंदमें कहीं। रहीम और वृंद जैसे नीति-कवियोंने भी इसीको पसंद किया और बिहारी,

१—बात राजस्थानीमें बातमीती कहते हैं। राजस्थानी बातोंके संग्रह राजस्थानके ग्रंथभंडारोंमें जब-तब उपलब्ध होते हैं। इन सबका संग्रह किया जाय तो न-जाने कितने कथासरित्सागर या यह सहस्ररजनीचरित्र तय्यार हो जायँ।

मतिराम, रसनिधि आदिने अपनी अपूर्व रसधारा भी इसीमें प्रवाहित की। इन लोगोंको जो सफलता तथा लोकप्रियता प्राप्त हुई उसके विषयमें कुछ कहना अनावश्यक है। राजस्थानीका अधिकांश लौकिक साहित्य इसी छंदमें निर्मित हुआ है। प्राचीन कालसे सैकड़ों दूहे लोगोंकी जबानपर चलते आये हैं जिनका बात-बातमें कहावतोंकी भाँति प्रयोग किया जाता है। राजस्थानी जनताकी सर्वप्रिय माँड रागका माधुर्य और आकर्षण भी उन्हीं दूहोंपर ही निर्भर है। प्राचीन लौकिक-वीरों की कीर्ति इन्हीं छोटे-छोटे दूहोंकी बदौलत नाम शेष हो जानेसे बच गयी है। आज भी प्राचीन ढंगके राजस्थानी-कहानी कहनेवाले लोग कहानियोंके बीच-बीचमें भावपूर्ण स्थलोंपर दूहोंका प्रयोग करके श्रोता लोगोंको मुग्ध करते हैं।

दूहा छंद और दूहा-साहित्य राजस्थानको अपभ्रंशसे वपौतीके रूपमें प्राप्त हुये हैं। उत्तर अपभ्रंशकालमें दूहा साधारण जनता और विद्वत्समाज दोनों द्वारा समादृत छंद था। राजस्थानीमें भी उसकी लोकप्रियता और उसका समादर ज्यों-के-त्यों कायम रहे। अपभ्रंशकालके बहुत-से दूहे भी स्वर्गोंमें सर्वप्रिय वे बराबर आगे तक चलते गये। हाँ, समयके साथ साथ उनकी भाषा का रूप बदलता रहा। ऐसे कुछ दूहे आज भी लोगोंकी जबानपर मिलेंगे। बहुत-से विस्मृति-सागरमें लीन हो गये और कुछ थोड़े-से उत्साही व्यक्तियों द्वारा समय-समयपर लिपि-बद्ध कर लिये जानेसे सुरक्षित भी रह गये हैं। ऐसे कुछ दूहे उदाहरण-स्वरूप नीचे दिये जाते हैं—

(१) हेमचन्द्रने अपने व्याकरणमें नीचे लिखा दूहा उद्धृत किया है—

वायसु उड्डावंतिअए पिउ दिट्ठउ सहसत्ति।
अद्धा वलया महिहि गय, अद्धा फुट्ट तडत्ति ॥८।४।३५२॥

यह दूहा इस समय इस रूपमें प्रचलित है—

काग उड़ावण धण खड़ी आयो पीव भड़क्क।
आधी चूड़ी काग-गळ, आधी गयी तड़क्क॥

दूहा उत्तरकालीन अपभ्रंशका प्रमुख छंद था। उसका प्रयोग समस्त देशके तत्कालीन साहित्यमें पाया जाता है। इस छंदका संबंध आरंभमें लोक-कविता (FolkPoetry) से था जैसा जान पड़ता है, क्योंकि पुराने अपभ्रंश-साहित्यमें उसका प्रयोग नहीं मिलता। जनतामें प्रचार पानेके बाद इसने साहित्यमें भी प्रवेश किया। विक्रमकी नवीं शताब्दीके पूर्वभागमें चौरासी सिद्धोंके आदि-सिद्ध सुरहपा हुओ। उन्होंने तत्कालीन बोलचालकी भाषामें कविता लिखी है।* जहाँ तक पता चला है लिखित साहित्यमें इस छंदका प्रयोग करनेवाले सबसे प्रथम यही महोदय हुओ। धीरे-धीरे यह छंद बहुत ही लोकप्रिय हुआ। साहित्यमें भी इसका अधिकाधिक प्रयोग होने लगा। राजस्थानी, गुजराती और हिंदीने इसे अपभ्रंशसे वपौतीके रूपमें प्राप्त किया और यह इन तीनों भाषाओंका सबसे महत्त्वपूर्ण छंद सिद्ध हुआ। इन भाषाओंके साहित्यमें जितना प्रयोग इस छंद का हुआ है उतना शायद ही किसी दूसरेका हुआ हो।

ऊपर कहा जा चुका है कि दूहा छंदका सर्वप्रथम प्रयोग वज्रयानी सिद्ध सुरहपाकी रचनाओंमें मिलता है। उनके पश्चात् कण्हपा आदि अन्यान्य सिद्धोंने भी इसका प्रयोग किया। दसवीं शताब्दीके अंतमें देवसेन सूरिने सावय-धम्म-मंजरी नामक ग्रंथ दूहामें लिखा। ग्यारहवीं शताब्दीके अंतिम भागमें महेश्वरसूरिने 'संयम-मंजरी' नामक छोटी-सी पुस्तक इसी छंदमें लिखी।

बारहवीं शताब्दीके अन्तिम भागमें हेमचन्द्रने अपना सुप्रसिद्ध सिद्ध हेम शब्दानुशासन नामक संस्कृत तथा प्राकृतका व्याकरण लिखा। उसके अंतिम अध्यायके अंतमें अपभ्रंशका व्याकरण दिया गया है। यहाँपर नियमोंका स्पष्टीकरण करनेके लिअे लेखकने अपभ्रंशके दूहोंको उदाहरणके

---

* गंगा मासिक पत्र (सुल्तानगंज भागलपुर) भाग १ अङ्क १ (पुरातत्वांक), में राहुल सांकृत्यायनका मंत्रयान वज्रयान और चौरासी सिद्ध तथा हिन्दीके प्राचीनतम कवि और उनकी कविताओं नामक निबन्ध।

रूपमें उद्धृत किया है। ये दूहे उसकी अपनी रचना नहीं। उस समयके प्रचलित दूहोंको लेकर उसने संग्रह-मात्र कर दिया है।

उत्तरकालीन लेखकोंने दूहा या दोहा शब्दकी उत्पत्ति संस्कृत दोग्धकसे मानी है। हेमचन्द्र द्वारा उद्धृत दूहोंकी अेक संस्कृत टीका दोधकवृत्ति या दोग्धकवृत्ति नामसे मिलती है जिससे भी यही सूचित होता है। पर यह बादकी कल्पना है। प्राकृत-पैंगल नामक ग्रन्थके टीकाकारोंने दोहाका मूल द्विपदा शब्दको बताया है। कुछ लोग दोहाका मूल द्विपथा अथवा द्विधा शब्दोंको भी बताते हैं। द्विधाका प्राकृत रूप दूहा या दोहा होता है और दूहा छन्द भी द्विधा—दो प्रकारसे, यानी दो पंक्तियोंमें लिखा जाता है।

दूहा छंद के भेद

हिन्दीमें दूहा छन्द अेक ही प्रकारका है पर राजस्थानीमें (और गुजरातीमें भी) उसके चार भेद हैं। सोरठेको दूहेका ही अेक भेद माना गया है। राजस्थानी पिंगलमें दूहेके इन चार भेदोंके नाम और लक्षण इस प्रकार हैं—

१ दूहो—यह हिंदीका दोहा है। राजस्थानीमें भी इसका अलग नाम नहीं है। इसके पहले और तीसरे चरणोंमें तेरह-तेरह, तथा दूसरे और चौथे चरणोंमें ग्यारह-ग्यारह मात्राअें होती हैं।

२ सोरठियो दूहो या सोरठो—इसे हिंदीमें सोरठा कहते हैं। यह दूहे का उलटा है, यानी इसके पहले और तीसरे चरणोंमें ग्यारह-ग्यारह तथा दूसरे और चौथे चरणोंमें तेरह-तेरह मात्राअें होती हैं।

करुण, वीर और शृंगार रसोंके वर्णनके लिये सोरठा बड़ा ही उपयुक्त छंद है। मातानेह-भूप ग्यानमें राजस्थानीमें इसीका प्रायः प्रयोग होता है।

राजस्थानीका नीति-संबंधी दूहा-साहित्य भी प्रायः इसीमें लिखा गया है। राजिया, किसनिया, भैरा, नाथिया मोतिया भागजी, जठना आदिके सोरठिये दूहे राजस्थानमें बहुत प्रसिद्ध हैं।

३ बड़ो दूहो (बड़ा दूहा)*—इसके पहले और चौथे चरणोंमें ग्यारह ग्यारह, तथा दूसरे और तीसरे चरणोंमें तेरह-तेरह मात्राएँ होती हैं। युद्ध-वर्णन और वीर-रसमें इसका मुख्यतया प्रयोग होता है।

४ तूंबेरी दूहो†—इसके पहले और चौथे चरणोंमें तेरह-तेरह, तथा दूसरे और तीसरे चरणोंमें ग्यारह-ग्यारह मात्राएँ होती हैं। यह बड़े दूहेका उलटा है।

ध्यान रखना चाहिये कि तुक सदा ग्यारह-ग्यारह मात्राओंवाले चरणों की मिलती हैं अर्थात् दूहेमें दूसरे और चौथे चरणोंकी, सोरठिये दूहेमें पहले और तीसरेकी, बड़े दूहेमें पहले और चौथेकी, तथा तूंबेरी दूहेमें दूसरे और तीसरेकी तुक मिलेगी।

दूहा-साहित्यके विभाग

राजस्थानी भाषाके दूहा-साहित्यके चार मोटे विभाग किये जा सकते हैं—

(१) लौकिक दूहा-साहित्य—जैसे दूहे प्राचीन कालसे चले आये हैं अथवा समय-समय पर जनता द्वारा निर्मित होते रहे हैं। इनमेंसे कुछ लिपि-बद्ध हो गये कुछ नष्ट हो गये और कुछ अब भी जनताकी जबान पर हैं। कबीर तुलसी आदि संतोंकी साखियाँ भी राजस्थानी रूप धारण करके जनतामें प्रचलित हो गयी हैं। उन्हें भी हम इस विभागके अन्तर्गत रख सकते हैं।

इन दूहोंका उपयोग समय-समय पर कहावतोंकी भाँति भी किया जाता है। इनके अतिरिक्त कहानी कहनेवाले प्रभाव-वर्धनके लिये

---

* इसके दोनों छोरवाले (यानी पहले और चौथे) चरणोंकी तुक मिलनेसे इसे आमेल दूहा भी कहते हैं।

† इसके दोनों मध्यवाले (यानी दूसरे और तीसरे) चरणोंकी तुक मिलनेसे इसे मध्यमेल दूहा भी कहते हैं।

बीच-बीचमें उपयुक्त दूहोंका प्रयोग करते हैं। यह रीति बहुत प्राचीन है। लिपि-बद्ध कहानियोंके बीच-बीचमें भी ये दूहे पाये जाते हैं।

लौकिक दूहा-साहित्यमें केवल फुटकर दूहे ही नहीं हैं किन्तु बड़ी-बड़ी कहानियाँ तथा कथा-काव्य भी हैं। ढाढी, ढोली, भाट आदि अब भी गा-गाकर इन्हें सुनाया करते हैं। इन कहानियोंके फुटकर दूहे जनतामें प्रचलित पाये जाते हैं—किन्हीं-किन्हीं लोगोंको सारी की-सारी कहानी भी याद रहती है। ऐसे कथा-काव्योंमें कुछ थोड़े-से लिपि-बद्ध भी हो गये हैं। भिन्न-भिन्न स्थानोंमें भिन्न-भिन्न परिवर्तन तथा परिवर्धन होते रहनेसे इनके अनेक पाठभेद और रूपांतर हो गये हैं। ऐसे कथा-काव्योंमें ढोला-मारूरा दूहा प्रमुख है।

यह दुःखकी बात है कि हमारा यह लौकिक साहित्य धीरे-धीरे नष्ट होता जा रहा है। पश्चिमी शिक्षाके प्रभावसे हम अपनी इन चीजोंको नीची दृष्टिसे देखने लग गए हैं। ढाढी-ढोली आदि जो जातियाँ इनकी रक्षा करती आई हैं उनका अब आदर नहीं होता, उन्हें सुननेवाले नहीं मिलते,

---

१—उदाहरणार्थ जहाँ किसी सुन्दरीका उल्लेख आया वहीं उसकी सुन्दरताके वर्णनमें यह दूहा जोड़ दिया—

कद का नाग निकसिया, नैण दिया मृग लाख।
मान-सरोवर कद गया, हंसा सीखण हल्ल॥

जहाँ प्रेम या मित्रता का वर्णन आया वहाँ यह दूहा कह दिया—

जो मन लागो तो मना, तो मन मे मन लग्ग।
दूध मिलन्ता पाणिया पाणी दूध मिलग्ग॥

दूरस्थित प्रेमियोंका वर्णन आया तो यह दूहा लगाया गया—

जळमें बसे कमोदणी, चन्दो बसै अकास।
जो ज्याहीके मन बसै, सो त्याहीके पास॥

२—इसका एक सुसंपादित संस्करण हिंदी अनुवाद, पाठांतर, टिप्पणी शब्दकोष, विस्तृत ऐतिहासिक आलोचनात्मक तथा भाषा-वैज्ञानिक प्रस्तावना, अनेक नई परिशिष्टोंके साथ नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हुआ है।

उन्हें कोई नहीं पूछता। इस प्रकार हमारा यह बहुमूल्य खजाना, जिसमें हमारी जाति और हमारे पूर्वजोंका जीवन भरा है, धीरे धीरे विस्मृतिके तमोमय गर्भमें विलीन होता जा रहा है।

(२) बोलचालकी राजस्थानीमें लिखित दूहा-साहित्य—ऐसा दूहा-साहित्य मुख्यतया तीन प्रकारका है—१ सन्त-साहित्य—कबीर, दादू दयाल हरिदास रज्जबजी, रामचरणदास आदि सन्तोंकी साखियाँ इस विभागके अन्तर्गत आती हैं। व्रजभाषाके महत्त्व प्राप्त करनेके बाद जो सन्त-कवि हुए उनकी भाषापर व्रजका भी काफी प्रभाव पाया जाता है। २. नीति-साहित्य—इसके अन्तर्गत राजिया, किसनिया, नाथिया नोपला, चकरिया, दानिया भैरिया, मोतिया हर्षराज आदिके नीतिके दूहे आते हैं। जेठवा, नागजी, बीजरा[1] आदिके प्रेम तथा करुण रसात्मक दूहोंको भी इनमें परिगणित कर लेते हैं। ३ कथा-काव्य—विभिन्न कवियोंने समय-समयपर दूहोंमें कथा-कहानियाँ लिखी हैं उनका समावेश इस विभागमें होगा। ऐसी कहानियोंमें माधवानल-कामकंदलाकी कहानी अधिक प्रसिद्ध है।

(३) जैन दूहा-साहित्य—जैन लेखकोंने जैनधर्म सम्बन्धी बहुत-सी रचनाएँ दूहोंमें की हैं। इनमें कथा-काव्योंकी अधिकता है।

(४) चारणी दूहा-साहित्य—यह साहित्य प्रधानतया नीति-विषयक और वीर-रसात्मक है। ऐतिहासिक वीरों तथा अन्यान्य व्यक्तियोंके सम्बन्धके दूहोंका बहुत बड़ा संग्रह राजस्थानीमें वर्तमान है।

राजस्थानी लेखकोंने व्रजभाषामें भी दूहा-साहित्यकी रचना की है पर वह हमारे विवेचनके बाहरका विषय है क्योंकि प्रस्तुत संग्रहमें व्रजभाषाके दूहोंको स्थान नहीं दिया गया है।

---

१ राजिया, किसनिया, जेठवा, बीजरा आदिके दूहे इन व्यक्तियोंके बनाए हुए नहीं किन्तु इनको सम्बोधन करके अन्य लोगों द्वारा रचे गये हैं। उदाहरणार्थ राजियाके दूहे चारण कृपाराम द्वारा अपने चाकर राजियाको सम्बोधन करके कहे गये थे। इसी प्रकार जेठवाके दूहे उजळी नामकी चारणीके बनाये हुए हैं जिसका इस जेठवा राजा मेहसे प्रेम हो गया था।

उत्तरार्ध

१ :

कर्नल टाड यह लिखते समय कि—There is not a petty state in Rajasthan that has not had its Thermopylae and scarcely a city that has not produced its Leonidas इतना और लिखना भूल गये थे कि थर्मापोली-से रणक्षेत्र तैयार करनेवाले वीर, सैनिक कवियोंसे भी राजस्थानका साधारण-से साधारण गाँव भी खाली नहीं रहा है। यद्यपि वीर तथा भावुक-हृदय चारण, भाट, ढाढी, ढोली और ढोलणोकी कविताओंको कालिदास, भवभूति और भारवि तथा शेक्सपियर और मिल्टनके काव्यानन्दसे कम उल्लसित न पायेंगे। सब मानते हैं कि वीर राजस्थान भारतकी वीर-बाहु रहा है, अब मानना होगा कि राजस्थान भारतका सबल तथा भावुक हृदय भी रहा है। राजस्थानी नैसर्गिक वीरों की तरह जीवित रहे हैं और वीरोंकी तरह मिटे हैं।

जैसी नैसर्गिक पवित्रता यहाँकी वीरतामें रही है, वैसी ही प्राकृतिक पावनता यहाँकी साहित्य-धारामें मिलेगी। इस जातिके वीर साहित्यमें तलवारमय वीर बनानेकी शक्ति है, शृंगार-साहित्यमें सुरम्य-प्रणय-धारा बहानेकी शक्ति है, करुण-साहित्यमें पत्थर पिघलानेकी शक्ति है और शान्त-साहित्यमें वैराग्यमय करनेकी शक्ति है। आचार्य चतुरसेन शास्त्रीने लिखा है—मारवाड़का अपने सौ वर्ष पूर्वतकका साहित्य महाजातियोंके मनन योग्य साहित्य है।

अत्यन्त पुरातन कालके बाद सात्त्विक जातीय-साहित्य तैयार करने का गौरव यदि किसी भारतीय प्रान्तको प्राप्त है तो राजस्थानको। वेदोंमें आर्योंने महाशक्तिसे प्रार्थना की थी—'मन्युरसि मन्युं मयि धेहि।' इस

रीयमी' और अधिकार रक्षाका पाठ पढ़ते थे, उन्होंने अपने अलौकिक वीरत्व और स्वातंत्र्य प्रेमसे संसारको चकित कर दिया तो इसमें आश्चर्य की क्या बात? जातिके गौरवकी रक्षा वीर-माताओंके हाथमें होती है, इस तथ्यसे कौन इनकार कर सकता है?

राजस्थानी जीवन पुरुषके बाह्य सौंदर्यको कोई महत्त्व नहीं देता। पुरुषका सच्चा सौंदर्य उसका वीर और निर्भीक हृदय है। राजस्थानी जीवन इसीकी कामना करता है

भूंडण तो भूंडा जणै हिरणी जणै मृगाह।
पण सिंघणी उण जणै धावां पाड़ै धाड़॥

सूअरीके बच्चे सुन्दर होते हैं और हिरणी सुन्दर बच्चोंको जन्म देती है। पर यह सौंदर्य किस कामका जब उनका जीवन ही सदा संशयमें रहता है। एक साधारण पत्तेकी आवाज होते ही बेचारे भयके मारे काँप उठते हैं और जीव लेकर ही भागते बनता है। उधर सिंहनीके बच्चोंको देखिए, कैसी निर्भीकतासे शानके साथ चलते हैं।

एक बालक था। बहुत भोलाभाला, सीधासादा। उसकी चाची तो उसे बिलकुल बावरा और निकम्मा ही समझती थी। पर युद्धका अवसर आया। उसकी चाचीने देखा कि आज उसका वही जेठूत (जेठका लड़का) सबसे बढ़-चढ़कर शत्रुके हाथियोंपर आक्रमण कर रहा है। जिनके सामने आने तकका साहस दूसरोंका नहीं होता था उन्हें वह काट-काटकर फेंक रहा है

दिन दिन मोटो दीखणो सदा गरीबी मूल।
काकी कुंवर काटतां जाणियो जेठूत॥

वीरमाताके दूधका असर क्या कभी जा सकता है?

जब हम असह्य कष्टकी स्थितिमें होते हैं तो प्राय माताकी याद आती है। हाय माँ, अरी मैया—आदि शब्द हठात् मुँहसे निकल पड़ते हैं। वीर राजस्थानी माता ऐसी स्थितिमें ऐसे शब्दोंका मुँहसे

निरखना सहन नहीं कर सकती क्योंकि ये शब्द हृदयकी दुर्बलता प्रकट करते हैं। राणकदेका अबोध पुत्र उसकी आँखोंके सामने मारा जाता है। असहाय बालक माँ-माँ चिल्लाता है, पर माता कहती है

माणेरा, मत रोय मत कर रत्ती अंखियाँ।
कुळमैं लागै खोड़, मरता मा न सँभारज ॥

अरे माणेरा मत रो आँखोंको लाल मत कर, मरते समय माँको कभी याद न करना क्योंकि इससे कुलको कलंक लगता है। मरना है तो हँसते-हँसते मरो दुर्बलता दिखाकर मरणको कटु मत बनाओ।

एक वीरबाला अपने असहाय और कर्तव्य-विमुख देवरको कैसे आवेशी और प्रभावशाली शब्दोंमें कर्तव्य-मार्ग दिखाती है

राखव रूड़ चमत्कार, मूँछ मरोड़, म रोय।
मरणा मरणा हक है रोणा हक न होय ॥

देवर राव रोते क्या हो? उठो मोछोंपर ताव दो। मर्दके लिये मरना हक है रोना नहीं। रोना तो निराधार अबलाओं का काम है।

इन माताओं के वीर-पुत्रों का भी कुछ वर्णन सुन लीजिये। बारह बरसका बालक बादशाहसे लोहा लेनेको चला। माता कहती है—अरे बालक तू यह क्या कर रहा है? तू तो अभी बालक है। बालक शब्द सुनते ही बालक क्षुब्ध हो उठता है। इस शब्दको वह अपने लिये अपमानजनक समझता है। कहता है

माता बालक क्यों कहो! रोय न माँग्यो ग्रास।
जे लग मारूँ शाह सिर तो कहिजो सावास ॥

माता मुझे बालक क्यों कहती है? क्या मैंने कभी रोकर तुमसे खानेको भी माँगा है? अवस्थामें छोटा होनेसे ही कोई छोटा नहीं हो जाता—

सिंह छिपालो सापुरुष, ओ कहुरा न जवान।
वड़ी लिलाकर मारिके जिनमें धैर्य उठाव ॥

सिंह, बाज और वीरपुरुष ये कभी छोटे—बालक—नहीं होते। यह-से यह जानवरको मार करके क्षण भरमें उसे उठा लेनेकी सामर्थ्य रखते हैं। मुझे तो तुम तभी कहना जब मैं बादशाह के सिर पर खड्ग मारूँ।

इन राजस्थानी वीर-बालकोंका प्रतिदिन पढ़नेका मंत्र होता था—"बारह बरसां बापरो लहै वैर रजपूत।"

वीरमाता और वीरपुत्रको हमने देखा। अब वीरपत्नीको देखिये। वीर माताकी कोखसे जनमी हुई वीर-बालिका उसी वीरतामय आवरणमें पलती है। उसका वीरत्व, उसका त्याग, उसके भाई के वीरत्व और त्यागसे किसी कदर कम नहीं। विवाहके समय उसका दूल्हा आता है। विवाह मंडप में भी वह स्वामीके वीरत्वमय रूपको ही देखती है।

ढोल सुणंता मंगळी मूंछा भूंह चढ़ंत।
चँवरीमें पोढ़णिया कँवरी मरसी कंत॥
प्रीव नगाड़े देवरो, परणो छत्तू समाह।
परणैगी पय परणिया भाजो ऊमर नाह॥
मैं परणैगी परणियो बाणा माहि स्नाह।
क्यां काम खिनायकर औछी ऊमर नाह॥

पतिकी यह 'ओछी उमर' उसके लिये दुःखका कारण होनेके स्थान पर गौरव का विषय होती है क्योंकि वह यह भी देख रही है कि

मैं परणैगी परणिया वीरवरी हमियाह।
बर-बम साँधी पहरतां पहर पच बलियाह॥

स्वामीको युद्धके वीरवेशमें सजाना यह वीरनारी अपना कर्तव्य, अपना अधिकार समझती है। प्राणप्रिय पतिको समरांगण सामने भेजते हुए वह कभी विचलित नहीं होती। वह तो मारवाड़ उस प्रमाहित करती है

बाळा फिर मत बाळजो, बळ मत रीझसी हार।
बह मत बाधी गेह मैं बर मत आसी द्वार॥

भाग्ये मत तू, कंथड़ा तो भाग्ये मुझ खोड़ ।
मीठी हँस-सहेलियाँ ताळी दे मुख मोड़ ॥

आत्मोपमा प्रियतमाके मधुर अनुरोधका पालन करनेसे किसका जी न करेगा? उसकी अवहेलना करनेका साहस किसको हो सकता है? कौन पति सहन कर सकता है कि उसकी प्राणवल्लभा अपनी सहेलियोंमें उसके कारण उपहासका पात्र बने? अैसी वीरपत्नियोंका पति यदि हँसते-हँसते आत्मोत्सर्ग कर दे तो इसमें क्या आश्चर्य? पर क्या इससे यह सूचित होता है कि उनके हृदयमें कोमल भाव नामको भी नहीं है? कठोर वातावरणमें पलते-पलते क्या उनका जीवन भी इतना कठोर बन गया कि शुष्क कर्तव्य-परायणता के सिवा उसमें कुछ रह ही नहीं गया? नहीं, उन हृदयोंमें कोमल भावोंकी धारा भी उतने ही प्रबल वेगसे प्रवहमान है जितनी वह ऊपरसे नीरस प्रतीत होती है। 'वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि' *का वह ज्वलंत उदाहरण थी। इसीलिये वे यशस्वी हुई चिताओंपर हँसती-*हँसती अपने पतियोंके (मृत शरीरोंके) साथ जल जाती थीं।

अेक वीरनारी युद्धमें जाते हुअे पतिसे कहती है

कंथ, लड़ीजे उमग कुळ, भाग भिड़ंती काळ ।
मुड़िया मिळसी गाळियाँ, मिळे न जळती झाळ ॥

हे पति अपने और मेरे, दोनों कुलोंकी ओर देखना। सांसारिक सुख तो छायाके समान आता-जाता रहता है, उसके लिये युद्धसे विमुख होकर दोनों कुलोंको कलंकित न करना। यदि अैसा किया तो तुम्हारी इच्छा भी पूर्ण होनेकी नहीं। लौटनेपर अपना सिर तकियेपर रखकर ही सोना, तुम्हारी प्रियतमाकी बाँह सिर रखनेको नहीं मिलेगी यह निश्चित समझ रखना।

यह वीरपत्नी जिस समय सुन लेती है कि उसका पति युद्धसे विमुख हुआ उसी समयसे अपनेको विधवा समझ लेती है। कायरकी अंकशायिनी होनेकी अपेक्षा चिताकी अंकशायिनी होना वह अधिक पसन्द करती है।

उसे विश्वास है कि जब तक उसका पति जीवित है, तब तक उसकी सेना कभी भाग नहीं सकती। युद्धमें देवरको अकेला देखकर उसके लिअे आशंकित होनेवाली अपनी जेठानीको यह वीर नारी किस विश्वासके साथ उत्तर देती है

भाभी देवर अेकलो, सोचीजे न लगार।
मूझ भरोसो नाहरो पाया रणहद्दार॥

हे भाभी तुम्हारा देवर अकेला है यह जानकर सोच न करो। मुझे अपने पतिका पूरा भरोसा है। उस अकेलेको तुम कम न समझना। वह अकेला ही समस्त सेनाको विध्वस्त करनेके लिअे पर्याप्त है।

पति युद्धमें मारा जाता है। पतिको अपने हाथोंसे यमराजको सौंपनेवाली वीर नारी उसे अकेला कैसे सौंप सकती है? उसके बिना, उसके वियोगमें, अकेली वह कैसे जियेगी? वह अपनेको भी साथ ही सौंपती है। न पतिको मृत्यु-युद्धमें भेजते समय वह अधीर होती है, न स्वयं उसका सहगमन करते। पति द्वारा पहले हुअे उसे लेने आया था और हाथ पकड़ती हुई ही वह उसके साथ जाती है।

पर विवाहोत्सवके पूर्व वह अपने पिताको अेक सन्देशा कहला देना चाहती है

पंथी! अेक संदेसड़ो बाबलने कहियाह।
जायाँ थाल न बज्जिया, ढोल वधाईयाह॥

हे पथिक मेरे पिताको अेक संदेसा कह देना। जन्मके समय तो मेरे लिअे थाली भी नहीं बजायी गयी, पर आज मेरे लिअे धड़-धड़ नगाड़े बज रहे हैं। आज मैंने तुम्हारे भालको भी समुज्ज्वल बना दिया है।

कन्याका दीन समझकर उसके जन्म-समय थाली न बजानेकी प्रथा पर कितना तीव्र कटाक्ष है!

अेसे गौरवशाली राजस्थानका आज जो महान अधःपतन हुआ है, वह किसका हृदय क्षुब्ध नहीं कर देगा? अपनी भीषण तलवारसे संसारको

कम्पायमान कर देनेवाली वह वीर राजपूत जाति आज घोर विलास और विनाशकारी शराब तथा अफीमके नशेमें सुधबुध खोकर कुत्सित जीवन-यापन कर रही है और मुसकराता हुआ अतीत आज व्यंगकी भयानक हँसी हँस रहा है। पर राजपूत-भावनाका वह तत्व अब भी किसी-न-किसी अंशमें बचा हुआ है। मातृभूमिकी दुर्दशा देखकर एक आधुनिक राजपूत-रमणी अपने कायर पतिको फटकारती है

> पराधीन भारत हुओ प्यालरी मनुहार।
> मातभूम बरबाद हो बारम्बार धिक्कार॥
> दुश्मन देसा लूटकर ले ग्यासी परदेस।
> राजन चुड़ल्या पहर ले करो जनानो भेस॥
> किस पाणी, है डूब के सरवरियेरी पाळ।
> है कठ विष चाख ले पाथरियारी पाळ॥

धिक्कार है तुम्हें, जो प्यालोंके दौरदौरेमें मातृभूमिको पराधीन बना दिया। विदेशी प्रतिदिन देशको लूटकर उसका धन सात समुद्र पार ले जा रहे हैं पर तुम्हारे कानोंपर जूँ भी नहीं रेंगती। शर्म तो नहीं आती! चुल्लू भर पानीमें डूब क्यों नहीं मरते? अरे, औरत क्यों न हुए? अब भी हाथोंमें चूड़ियाँ डाल लो और कमरमें घघरी (लहँगा) पहन लो

> जो सुहाग प्यारो लगै, कर कायर भरतार।
> रहणी म्हारी भलै, दीन सूर सिणगार॥

इस सुहागसे तो वैधव्य कितना ही अच्छा! अरे, तुम तो सिंह पद धारण करनेवाले हो। तीतर, बया, बटेर, खरगोश सुअरका शिकार करके फूल जाते हो! क्या यही तुम्हारी राजपूती है

> तीतर बया बटेर अरु सुस्सा सूर शिकार।
> इण्या रजपूती नहीं, नाम सिंघ [illegible]॥

अब भी कुछ हया है तो

> पहन कसूमल पहर लो कड़ी कमर तलवार।
> धारो धीर कटार ले हुओ तुरंग असवार॥

पाछा फिर मत नाकल्यो पग मत दीज्यो टार।
कट भल साम्हो खेतमें पर मत आज्यो हार॥

भीषण पर्देकी कुप्रथासे असहाय बनी हुई इस क्षत्रियबालाको इतनेसे ही संतोष नहीं होता। वह फिर कहती है

सील रावसी हाम तो हूं भी चाल्हूं साथ।
हुक्मत भी फिर देखके म्हारा ठोन्दो हाथ॥

धन्य है तू राजस्थानकी वीर नारि! जो देश अैसी बालाओंको जन्म दे सकता है, उसको अपने घोर पतन-कालमें भी निराश होनेकी आवश्यकता नहीं।

राजस्थानका यह साहित्य जीवनसे अलग नहीं, किंतु उसके साथ मिला हुआ है। राजस्थानके ये वीर साहित्यकार कलमके ही धनी नहीं होते थे तलवारके साथ भी लड़ते थे। उनके इस सप्राण साहित्यका चमत्कार इतिहास अनेक बार देख चुका है। अेक उदाहरण देनेका लोभ संवरण नहीं किया जा सकता। महाराणा प्रताप विपत्तिसे विवश हो अकबरकी अधीनता स्वीकार करनेको तय्यार हो गये। महाराणा राजपूत जातिकी आनकी अंतिम आशा थे। वह टूटना चाहती थी। उस समय अेक और कविहृदय, जो परतंत्र होकर भी स्वतंत्रताका उपासक था पराधीन होनेपर भी जिसका अंतर पराधीन नहीं हुआ था, इस अंतिम आशा-तंतुके टूटनेसे क्षुब्ध हो गया। बचानेका उसने अेक अंतिम प्रयत्न किया और परिणामसे पाठक अपरिचित नहीं।

राजपूतोंकी उस अमर आनका रक्षक कौन था? महाराणा प्रताप या महाकवि पृथ्वीराज?

: ३ :

राजस्थानकी भूमि विविधरूपमयी है। पश्चिमी और उत्तर राजस्थानमें मरुभूमि अपने नित्य नये निकेतन बनानेवाले टीलों, सैकड़ों हाथ गहरे कुँओं, ग्रीष्मकालीन प्रचंड आंधियों, शिशिरकालीन भयंकर शीत,

तथा शमी, बेर, करील और फोगकी झाड़ियोंरूप बिन्दुओंसे यत्र-तत्र चित्रित सीमा फैली हुई अनन्त बालुका-राशिके साथ भयंकर अट्टहास करती रहती है, वा पूर्वी राजस्थानकी भूमि हरभरे पेड़ पौधोंसे, लहलहाते हुये खेतोंसे चक्षुओंके साथ रखते हुये जलाशयोंसे पथिकको मुग्धकर अपने पास आनेके लिए आमंत्रित करती है। दक्षिणी राजस्थान अपने अगम्य और अविच्छिन्न जंगलोंसे छाई हुई विकट पर्वतमालाओंमें बैठ उनकी अनेक भूतकालीन वीर-स्मृतियोंसे हृदयमें एक मधुर भयका संचार-सा करता है। अब इस राजस्थान भूमिका थोड़ा-सा वर्णन कीजिये।

राजस्थानकी वर्णन-शैलीमें निसर्ग और मानव-जीवन दोनोंका मनोरम विवेचन मिलेगा। मारवाड़का वर्णन करते हुये कविने वहाँकी प्रकृति तथा मानव-सौंदर्यका सुंदर चित्र अंकित किया है

थळ ढँढा, जळ ऊजळा, नारी नवले वेस।
पुरुस पटाधर नीपजै अइ ऐ मुरधर देस॥
मारू देस उपन्निया सर ज्यूं पाधरियाह।
कड़वा कदे न बोलही, मीठा बोलणियाह॥
मारू देस उपन्निया, ज्यांरा दंत सुसेत।
कुंझ बचा गोरंगिया, खंजर जेहा नैत॥
देस सुरंगो, जळ सजळ न दियो दोस कथ्याह।
घर घर चंद-वदनिया नीर चढै चमकाह॥
काया काठा शीकिये गेहूँ खीचा खाण।
मद बाका, खीली धुरी, धर चो पर बाखाण॥

एक तो मारवाड़ी बोली ही मधुर है फिर उसमें माधुर्य। कवि मुग्ध हुये बिना रह ही नहीं सका।

कड़वा कदे न बोलही, मीठा बोलणियाह।

मारवाड़ी ललनाओंका सौंदर्य प्रसिद्ध है—कवि इस सौंदर्यपर मोहित होकर कहता है

भानु-सौंदर्यपर मुग्ध होकर कवि आनन्द-विभोर होकर बोल उठता है

कमी ओर असमान बिच भानु तीखो थाक ।

४

प्रेम-कहाणी कहत हूँ सुणो सखी री ! आज ।
पिव लेखणी हम मसी, आंसी भाल लिखाय ॥

कठोर कर्तव्य-पथका अनुगामी राजस्थान हृदयके कोमल भावोंसे शून्य नहीं है। उसके हृदयमें सुकुमार-भाव-धारा भी उतने ही वेगसे प्रवहमान है, जितना कि वह ऊपरसे कठोर दिखायी देता है। राजस्थानी साहित्यमें प्रेम संबंधी उक्तियाँ भावुकता, मर्मस्पर्शिता और मनोहारिता में अन्य किसी भाषाके साहित्यसे उतरती हुई नहीं। प्रेमतत्त्वका निरूपण देखिये—

प्रणयका सच्चा स्वरूप है ममत्वका त्याग। इस संसारमें या तो 'मैं' रह सकता है या 'तू'। यहाँ द्वैतभावका निबाह नहीं हो सकता अद्वैताकार बनाना पड़ता है—

जब देख गमद न बापड़ी ऐके बसू ठाम ।

साधक साधनाके लिये 'तत्त्वमसि' या 'सोऽहम्' में से एक मार्ग अपना सकता है। कबीरने भी अपनी प्रणय-कहानी इसी तरह कही है

लाली मेरे लालकी जित देखा तित लाल ।
लाली देखन मैं गयी मैं भी हो गयी लाल ॥

प्रणय-साधना ही ईश्वर-साधना है। प्रणय और परमेश्वरमें कुछ भी अन्तर नहीं। परमेश्वर का दूसरा नाम ही प्रणय है—Love is God and God is Love. इसी साधन-सफलताको ही मोक्ष या कैवल्य कहते हैं, जो सच्चे प्रेमीको सहज प्राप्त हो जाती है। उस अवस्थामें पहुँचनेपर हृदय और जिह्वाका सम्बन्ध रही नहीं जाता। यहाँ प्रणयका

साधन ही सफलता मिले। फिर मर्यादाओंका यहाँ कैसे गुजारा हो सकता है? इनके लिये सूचना सभी रहती है

Go g you nothi g lov .. Lover! No,
The semblance you and shadow f a Lover

झूठोंका प्रेम सरसोंमें ही मालूम-सा होता है

डूंगर केरा वाहला ओछा-केरा नेह।
वहता वहै उतावला, छिटक दिखावै छेह॥

आत्म-बलिदान करना सरल है पर प्रणय-तपस्यामें सफल तपस्वी होना कठिन है

खड्ग-धार पर धाम धारी तो बरसो खड्ग।
मुलक बगैर माप नेह निभावन, नागारी॥

सर्वस्व लुटाकर भी वह विस्मृति नहीं मिलती, साधक साधनामें जीवन मिटाकर भी वह ज्योति नहीं पा सकता उसका मूल्य सिरमात्र ही होगा? प्रणय-मार्ग बड़ा विकट है—प्रणय-स्वरूप भगवान कहते हैं

यततामपि सिद्धानां, कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः।

अब कहना होगा—

जाने सोई जानसी प्रीति रीतको भेद।

प्रणय-मार्ग सर्वस्वत्याग है। सच्चा प्रेमी परवाह नहीं करेगा कि दूसरी तरफ भी चाह है या नहीं। यदि तुम प्रेमके बदले प्रेम चाहते हो तो वह प्रेम नहीं स्वार्थ है। आदर्श-प्रेमी पतंग पर मर मिटता है, पर कभी परवाह नहीं करता कि दीपक चाहता है या नहीं

हाय दई! कैसी भई अनचाहतको संग।
दीपकके भावै नहीं, जल-जल मरै पतंग।

पतंग ने जलते-जलते दीपकका स्वरूप पहचान ही लिया—

पहली तो दीपक जलै, पीछे जलै पतंग।

प्रेमीका सत्य-स्वरूप जानने पर यह कहनेकी आवश्यकता न होगी

> कभी भी बोसो वस्ल हो तो लुत्फ उठे मुहब्बत का।
>
> यहीं दिन रात अगर तड़प तो फिर इसमें मजा क्या है !

यह प्रेम नहीं माया है। प्रेमाग्निमें तपने पर ही कोई सच्चा प्रेमी हो सकता है। बिना तपाये स्वर्ण और प्रेमी दोनों खरे नहीं हो सकते। यहाँ अेक बार मिट जाना होगा, फिर प्रणय-सोम-रससे नव-जीवन मिलेगा। प्रियतमके रंगमें रँग जानेके लिअे अपना रंग छोड़ना होगा।

आत्मा और परमात्माका अनन्त मिलन ही रहस्यवाद है तथा मिलन-मार्गकी वेदना हृदयवाद है। हृदयमें ममत्वका भार सौंपनेकी अेक आकांक्षा है। जब वह आकांक्षा किंचित् परिबद्धित होती है, तो अपना सर्वस्व समर्पण करनेको व्याकुल हो उठती है और वह मिलन-मार्ग खोजने लगती है अेवं अनन्त प्रियवस्तुको प्रेमिका रूपमें या प्रियतम रूपमें पुकार उठती है

> पिव-पिव लगी प्यास।

'प्रसाद' भी अकुलाते-से कहते हैं

> आ मिलो प्राणधन !

फिर प्रेमीके लिअे प्रियतम ही सर्वस्व बन जाता है। वह उसके बिना रह ही नहीं सकता। वह उस जीवनको विरहाग्निमें तपाना प्रारंभ करता है। उसके लिअे संसार शून्य हो जाता है—तब कोटी नगरी बसे, म्हांरे भाय उजाड़। विरह-तपस्याका प्रेमी जब सफल तपस्वी हो जाता है, तब प्रणयके दर्शन होते हैं। बीच-बीचमें प्रणय परीक्षा लेता है कि इतने कष्ट-साध्य कठिन मार्ग पर क्या चलते हो पथिक ? याद रखना Love is a blind guide पर प्रेमी क्या उत्तर देता है कि तमसाकार इस तुम्हारे काले रंग पर दूसरा रंग चढ़ ही नहीं सकता

> ... चैतो काळो रंग।
>
> मैल छुटै न अँग मलै, धोयो छुटै न अंग ॥

प्रेमी-जन सांसारिकतासे ऊपर अपना अेक मधु-लोक बना लिया करते हैं। वहाँ, उस आनन्द-लोकमें प्रियतमके साथ आनेका इरादा कर रखते हैं या विरहावस्थामें प्रियतमका वास ही उस लोकमें होता है। पवित्र प्रणयके लिअे विकारमय संसारसे ऊपर ही कोई आलोकिक संसार चाहिअे

साझ पड़ी दिन आथम्यो, चकवी दीनी रोय।
चल, चकवा वा देशमें साझ पड़े नहिं होय॥

जहाँ हम अनन्तकालके लिअे मिल जायें और मधुर प्रणयात्मक आलोकित होता रहे। कबीरके शब्दोंमें—

जहँ बारह मास बिलास।
प्रेम झरै बिगसे कमल, तेज-पुंज-परकास॥

राजस्थानी साहित्यमें नायिकाका आदर्श कैसा मनोहर और पवित्र-भाव-पूर्ण है

गति गंगा, मति सरस्वती, सीता सील सुभाय

चालमें (शाब्दिक और लाक्षणिक दोनों अर्थों में) पवित्र गंगाके समान बुद्धिमें वीणापाणि भारतीके समान और शील तथा स्वभावमें सती-शिरोमणि सीताके समान।

स्त्री-सौंदर्यका राजस्थानी आदर्श नीचे लिखे दूहोंमें मिलेगा

मारू देश उपन्नियां सर ज्यूं पाधरियांह
कड़वा बोल न बोलही मीठी बोलणियांह
मारू-देस उपन्नियां त्यांका दंत सुसेत
कूंझ-बचा गोरंगियां खंजर जेहा नैण
उर पतली कट पातली, झीणी पांसलियांह
पग भूरा बन टोरता, नहीं तो आवो जाय
सूने सुगंधी मारवी मदवी तन समराम

मारवाड़की स्त्रियाँ तीरकी तरह सीधी (ऊँच नदरी) होती हैं सदा

मीठी बोलनेवाली होती है, उनके दाँत मोतीकी तरह शुभ्र होते हैं, शरीर चाँप-शावकके समान सुकुमार और गौरवर्ण होता है, नेत्र खंजनकी तरह विशाल और चंचल होते हैं, छाती चौड़ी होती है, कमर पतली होती है और उँगलियाँ सुकुमार होती हैं। उनकी सौंदर्य-सुरभिसे शुष्क मरुभूमि भी सोल्लास सुरभित हो उठती है।

इस काव्य-वाटिकामें थोड़ा और विहार कीजिये। यहाँ आपको प्रणय-का सत्य स्वरूप दृष्टिगोचर होगा—नायिकाओंका नग्न रूप देखनेको नहीं मिलेगा। जीवनमय यह काव्यधारा मिलेगी कि जीवन-ज्योति जागृत हो उठेगी।

प्रियतमके प्रेममें मग्न एक नायिका कहती है—

साजन साजन हूँ करूँ साजन जीव-जड़ी।
साजन फूल गुलाबको निरखूँ घड़ी-घड़ी॥

यह तो समस्त लोकको साजनमय ही देखना चाहती है—

साजन साजन हूँ करूँ साजन जीव-जड़ी।
सजन लिख्या है चूड़के बाँधूँ घड़ी घड़ी॥
साजन तुम मुख चाँद का तारे ही चकोरसो।
ऐसो मिल्यो न कोय ज्या देख्या तुम सीतलें॥

जब तुम्हारा सौन्दर्य मानसमें विकसित है तब दूसरी वस्तुकी तरफ हृदय कैसे आकर्षित हो सकता है। यहाँ प्रेमी परमेश्वरके रूपमें देखा गया है। प्रेमीको जब प्रणयका मादक सत्य-स्वरूप मिल सकता है तब शून्य भीति पर चित्र रंग नहिं तनु बिनु लिख्या चितेरे—इस आराधनाकी कोई आवश्यकता नहीं होती। कविवर टेनिसनने कहा है—

When God in man is one with man in God.

प्रेमीकी कसौटी

सजन ऐसा कीजिये, जामें कपट न प्रीत।
मीठ पड़ता बिरचे नहीं, सीख करे जगदीस॥

साजन ऐसा कीजिये, जैसा रेशम रंग।
सिर सूली धड़ कागरे, तोहूं न छूटै संग॥

यहाँ "सीस उतारै भुइँ धरै" इतनेसे ही प्रणय-संसारमें पैठनेकी इजाजत नहीं मिलती लेकिन "सिर सूली धड़ कागरा" रहनेपर भी प्रियतमका संग न छोड़नेपर प्रवेश-आज्ञा मिलती है। जीवनको ऐसा मिटाना होगा कि न जीवनका अस्तित्व रह और न मृत्युका। इस साधनाका आत्मसमर्पण ही अमरत्व है। फिर सत्यमार्ग जीवनके सामने चमक उठेगा।

प्रियतमके मिलनमें सांसारिक बाधाएँ बाधक नहीं हो सकतीं

कुम्हर बसै कमोदनी चंदो बसै अकास।
जो ज्याहीके मन बसै सो त्याहीके पास॥

जिसके हृदयासन पर जिसने स्थान पा लिया है, वह फिर अलग कैसे हो सकता है। कबीरने भी कहा है—

कबीर गुरु बसै बनारसी सिष समुन्दा तीर।

प्रेमिका प्रियतमसे सदा मिली रहना चाहती है। उसे किसी भी ऋतु में विरह पसन्द नहीं। इसीलिये वह तीनों ही ऋतुआंमें दोष दिखाकर उनको चलनेके अयोग्य बतलाती है

सीयाळै तो सी पडै उनाळै लू बाय।
बरसाळै सूंघ चीकणी, चालन रुत न काय॥

प्रियतमके चलनेके समय उसे रोकनेके लिये पागड़ेसे झूमती हुई नायिकाका चित्र कितना स्वाभाविक और हृदयस्पर्शी है

हालबाल हालण सामळै उरमी आगम छेह।
कामळ बळ सैठा करी मालीनाळा मेह॥
ढोले हरवाची करै बळ हालतां न देव।
हबकह दूबै पागडै डबडब नयन भरेय॥

विरहानुभवोंसे परिपूर्ण मेघोंके दो-चार मनोहर चित्र और लीजिये

सजन सिधाया है सखी ऊभी आंगन बीच ।
नैण चाल्या बादरा, काजळ माच्या कीच ॥

विहारी कहते हैं—नाहक मन बँध जाय। पर कवल मनही बंधनमें नहीं आता नयनोंके मिसे भी धार संकट आ जाता है—जिह्वा बंद हो जाती है।

बैरा हुयी न बोलणा, नैणा चाल्यी धार ।
सजन सिधाया है सखी पाछा फिर नह आर ।
जोय जोय ऊठी बावळी राख रैण पूरी आस ॥
सजन सिधाया, है सखी झांमी ऊ॰ नेह ।
हिवड़ो आरत उमड्यो नयन दहै मेह ॥
कामणिया कपमाई गोरी घणी सरस ।
मरिया नैण चकोर ज्यूं मूंधा हुई मयंक ॥
ऊभी पी रासंगो सावन स्मरियाह ।
प्यारी पल्ला चूनड़ी आंसू जळ भरियाह ॥

नयनोंकी धार-सावनका कविने क्या ही कारुणिक चित्र खींचा है। कबीरने भी इनकी साधनाके फल-स्वरूप इनको वैरागी की उपाधि दी है—

विरह कमंडल कर लिये वैरागी दो नैन ।

प्रियतमके जानेपर हृदय तो उनके साथ चला गया, पर नेत्रोंको बड़ी मुश्किलसे रखा है—

साजन चाल्या है सखी, गोडै चढ मैं दीठ ।
हियड़ो साथै ही गयो, नैण बहोड़्या नीठ ॥

मनके चले जानेपर बड़ी कठिनतासे नेत्र भी वैराग्य धारण कर लेते हैं। प्रणय-समारंभमें आंख और मनका ही तो शासन है। मानस-समर्पण बिना तो नजर जोड़ना भी कठिन है।

नायिकाको जो हर्ष हुआ, उसका कैसा मूर्तिमान चित्र कविने खींचा है

काग उड़ावण धन खड़ी आयो पीव भड़क्क ।
आधी चूड़ी काग-गळ, आधी गई तड़क्क ॥

प्रियतम के विरहमें नायिका इतनी दुबली हो गई कि जब उसने कौवेको उड़ानेके लिये हाथ फेंका तो हाथकी चूड़ियाँ खिसककर कौवेके गलेमें जा गिरीं। पर ज्योंही उसने प्रियतमका आगमन देखा त्योंही हर्षके मारे उसका दुबलापन काफूर हो गया यह अेकदम इतनी मोटी हो गई कि जो चूड़ियाँ अभी निकली नहीं थी वे तड़ककर टूट गईं और नीचे गिर पड़ीं। हेमचन्द्रके 'अद्धा वलया महिहि गय' के भाव की मनोहारिता 'आधी चूड़ी काग-गळ' के रूपमें कितनी बढ़ गयी है।

प्रियके आगमनसे मनोभाव हर्ष और उल्लासका कैसा रोचक और जीता जागता चित्र उपस्थित किया गया है

साजन आया है सखी ! हूँ ला मूल दिखाइ ।
सूका था स् पालव्या, पालविया फळियाइ ॥
साजन आया हे सखी ! ज्यांकी हूँ ती चाय ।
हिवड़ी हैमागर भयो तन-पंजरे न माय ॥
आजे रळी-बधावणा, आज नवळा नेह ।
सखी ! अमीणी गोठमें दूधा वूठा मेह ॥

नायिका का हृदय आनन्द में विभोर होकर नाच रहा है। यही नहीं यह सारे घरको समस्त वातावरणको, विश्वके प्रत्येक पदार्थको, समस्त विश्वको, उसी आनन्दमें नाचता हुआ देख रही है

साजन आया है सखी ज्यांकी जोती वाट ।
थामा नाचै घर हँसै खेलण लागी खाट ॥

बहुत दिनोंके बाद प्रेमातिथि आया है। उसे कुछ भेंट देनी चाहिये। पर भेंटका पदार्थ होना चाहिये कोई अपूर्व वस्तु। और इससे बढ़कर अपूर्व भेंट भला क्या होगी

नायिकाको जो हर्ष हुआ, उसका कैसा मूर्तिमान चित्र कविने खींचा है

काग उड़ावण धण खड़ी, आयो पीव भड़क्क।
आधी चूड़ी काग गळ आधी गई तड़क्क॥

प्रियतम के विरहमें नायिका इतनी दुबली हो गई कि जब उसने कौवेको उड़ानेके लिये हाथ फेंका तो हाथकी चूड़ियाँ उछलकर कौवेके गलेमें जा गिरीं। पर ज्योंही उसने प्रियतमका आगमन देखा त्योंही हर्षके मारे उसका दुबलापन काफूर हो गया वह अकस्मात इतनी मोटी हो गई कि जो चूड़ियाँ अभी निकलीं नहीं थीं वे तड़ककर टूट गईं और नीचे गिर पड़ीं। हर्षचन्द्रके 'अब्धा वलया सहिदि गय' के भाव की मनोहारिता 'आधी चूड़ी काग-गळ' के रूपमें कितनी बढ़ गयी है।

प्रियके आगमनसे संजात हर्ष और उल्लासका कैसा रोचक और जीता-जागता चित्र उपस्थित किया गया है

सावन आया, हे सखी! हुँवा मूक हियाह।
सूका था सू पालव्या पल्लविया पल्लियाह॥
सावन आया, हे सखी! प्यासी हूँ री पास।
हियड़ो हमगर मयो तन-मंजरे न मास॥
आज रळी-वधामणा, आज नवला मेह।
सखी! अमीणी गोठमें तूठा बूठा मेह॥

नायिका का हृदय आनन्द में विभोर होकर नाच रहा है। यही नहीं वह सारे परको, समस्त वातावरणको विश्वके प्रत्येक पदार्थको समस्त विश्वको, उसी आनन्दमें नाचता हुआ देख रही है

सावन आया है सखी, प्यारी बोली बात।
आभा नाचे पर हैरै तैलण लागी राग॥

बहुत दिनोंके बाद प्रेमातिथि आया है। उसे कुछ भेंट देनी चाहिये। पर भेंटका पदार्थ होना चाहिये कोई अपूर्व वस्तु। और इससे बढ़कर अपूर्व भेंट भला क्या होगी

मोर सिखर ऊँचा मिले मावे बुका निराम
फिर दहर्ड़ करता मेरे हरिये डूंगर इाम

टींबावाले खेत घन (अनाज) से भर गये हैं घन्य ओलोंसे उमड़ आए हैं और और आन्-ज्ञानेर बरस रही है, बादलमें बिजली नहीं समाती, मोर सिखरपर निराम बन हुये नाच रहे हैं फिर टहूक रही है, झरने गम्भीरमान होते हुये प्रचंड वेगसे गिर रहे हैं। ऐसे समयमें हे रमिए, हरी पहाड़ी पर चलो और झूम झीने रमावा।

राजस्थानी जीवनने माकृतिक सौंदर्यसे मुख नहीं मोड़ लिया है।

(४)

कुसुमाकर सौन्दर्यमय जीवनमें मुस्कानका जो स्थान है, वही स्थान हमारे जीवनमें हास्यका है। मकृतिके कण-कणमें हास्य बिखरा पड़ा है—उषा अपनी आकर्षक मोहिनी शक्तिके साथ मुसकाती है, सरिताओं सतत मन्द-हासके साथ जीवन-पथ पर चलती हैं, और पिकके मस्तानी अलाप के साथ कूक उठने पर निसर्गका कण-कण मौन हास्यमें स्वच्छगामी घोलकर निखर पड़ता है। हास्य-हीन जीवन शून्य है। हास्य शृंगारका प्रबल पोषक है।

हमारे पुराने नाट्यकारोंने हास्यको प्रशंसनीय सम्मान किया है, उनके नाटकोंमें विदूषकका एक विशेष स्थान है। धीरे-धीरे हमारे साहित्य से हास्यका वह रूप उठ गया। हिंदीके पुरातन और नवीन कवियोंने हास्यरसमयी कवितायें कम ही लिखी हैं और जो लिखी हैं उनको घटनात्मक स्वरूप दे दिया है, जिससे इस रसका निसर्गसे सम्बन्ध छूट सा गया। हास्य का घटनात्मक-विकास असम्भव नहीं है, पर निसर्गसे काव्य-जीवनमें बिलगाया जाना भी उचित नहीं है।

धीर वीर गंभीर होनेपर भी राजस्थान हास्यसे अछूता नहीं। यहाँ के हास्य-रसमें निसर्ग और मानव जीवनका अपूर्व सम्मिश्रण मिलेगा—

> बाडू बाबा ! केवड़ो पाणी ज्या कूवाह।
> भाभी रात कुराकरड़ा, ज्यूं माभल मुवाह॥

बाळू बाबा ! देसड़ो पाणी-सेंदी ताल।
पाणी-केरे कारण प्रिय छंडे मधरात॥
बाबा ! मत देइ मारवा वर कूंआरि रहेस।
हाथ कचोळो सिर घड़ो सींचती य मरेस॥

यहाँ पानी गहरे कुओं में मिलता है और पानी निकालनेके लिये आधीरातसे मरसिया गाया जाने लगता है तथा प्रियतम पानीके लिये अर्धरात्रिम छोड़कर चला जाता है ऐसी जगह ब्याही जाने की अपेक्षा लड़की कुमारी ही रहना चाहती है। यहाँ तो बचारीका सारी उम्र ही सिर पर पानी टालते-टालते बितानी पड़ेगी। मारवाड़की पनिहारियोंके 'पणिहारी' गीतका रसास्वादन करनेवाले महाशयोंने इन पनिहारियोंके हृदयकी बातको समझने का भी कभी कष्ट उठाया है! आगे यह मारवाड़की थोड़ी तारीफ और करती है

बिय धुंर मन्नग पीवणा कर-कँटाळा रूँख।
आकें-फोगे छाइनी, हूंछा भाजे भूख॥

ढूँढाड़ कुछ विशेष हरा-भरा देश है, अत वहाँ होनेवाले मेवोंके नाम सुन लीजिये और स्त्री-पुरुषोंका सौंदर्य भी देख लीजिये

गाजर मूळी काकड़ी पुरुष जु पूत-सुभाव।
ऊँचा ओसर अस्तरी भइ हो ! पर ढूँढाड़॥

मारवाड़की रक्त प्रसिद्ध है। महात्मा गांधी तक उसकी सूक्तियों (?) का वर्णन कर चुके हैं। उसी पर अेक नवीन कविकी उक्ति है

नदी नाळ, नहिं रैण है नहीं बणीमें तेल।
भा चाणें मसरे मते मारवाड़री रेल॥

न तो जानने पता है न टाइमका ख्याल। आर तो और बत्तीमें तेल भी नहीं! फिर चाल! उसकी तो बात ही मत पूछिये। नींद आ गयी तो नौ दिनमें अढ़ाई कोस तो अवश्य ही चल चुकी है। ऐसी रेल भी तो

मारवाड़की ठहरी जहाँ रेल क्या, सभी कामों की प्रगति इसी ढुल गतिके साथ होती है। यह बात कही गये हैं—मारवाड़ मनसूबें डूबी।

क्या आपको मालूम है कि अकाल का निवासस्थान कहाँ है? अजी, या तो इतने बड़े देशमें कहीं-न-कहीं उसके दर्शन हो ही जाते हैं, पर आइये हम आपको उसका निश्चित पता बतलावें

पग पूगळ धड़ कोटड़े बाहू बाड़मेर।
फिरतो फिरतो बीकपुर, ठावो जैसलमेर॥

उसके पैरोंसे पूगल पवित्र होता है, कोटड़ा धड़को सम्हालता है और भुजायें बाड़मेर तक पहुँच जाती हैं। सैर-सपाटा करनेके लिये अकसर बीकानेर पर आपकी कृपा-दृष्टि हो जाती है, पर जैसलमेरमें तो आप निश्चितरूपसे बारहकी जगह तेरहों महीने विराजमान रहते हैं।

बमरक सर प्रतापसिंहका नाम आपने सुना ही होगा। आप ब्रिटिश साम्राज्यके अेक महान सिंह थे। पर कवियोंने उन्हें भी न छोड़ा।

महाराज दाढ़ी-मूछ मुँड़ाये रहते थे और टोप लगाते थे। अेक दिन उनको देखकर कवि महोदय कह उठे

दाढ़ी मूँछ मुँडाय के सिर पर धरियो टोप।
प्रतापसी दरबारा! थारी बाकी मटै लँगोट॥

दाढ़ी और मोछें मुड़ा ही ली हैं टोपी भी धारण कर ली है, अब कमी केवल अेक लँगोटीकी है। वह भी धारण कर ली जाय तो फिर, बंदी स्वामिन् बननेमें क्या कसर रही!

सखियोंकी अेक मण्डली जुटी थी। स्त्रियोंके पास और विषय ही क्या? अपने-अपने पतियोंके विषयमें बातचीत होने लगी। अेकने कहा

मैं परणी परणियो, मक्ष मरै बछ नाड़।
पी न रन मैं भे [illegible] पाड़॥

दूसरी बोली

मैं परण्यी परखियो मूँछ मिळियो मोर ।
बासी स्वर्ग न भेजको थाली दळ ढंढोर ॥

तीसरीने तारीफ की

मैं परण्यी परखियो तोरणरी तमियाद ।
घर भव धानी पहरवा पहरे पग पनियाद ॥

अब चौथीकी बारी आयी । चुप कैसे रहती ? बोली

मैं परण्यी परखियो लाम्बो घणो लड़ाक ।
आलीरी भींत ज्यूँ पड़ै धड़ाक धड़ाक ॥

[मैंने विवाहके समय पतिको देखा कि वह बहुत ही लम्बा-लड़ाक (लम्बे मनुष्यके लिये हास्यपूर्ण शब्द) है और गीली भीतकी भाँति धड़-धड़ करता हुआ गिरता है ।]

अब राजस्थानकी जातियोंका वर्णन भी थोड़ा सुन लीजिये

अग्गमबुधी वाणियो पिच्छमबुधी जाट ।
तुर्तबुधी तुरकड़ो बामन सम्पमपाट ॥

बनिया पहले सोचकर काम करता है, जाटको अक्किल बादमें आती है, वह काम करके सोचता है, मुसलमानकी बुद्धि मौके पर काम देती है; और ब्राह्मण ? उनका तो क्या आगे और क्या पीछे, बुद्धि कभी होती ही नहीं—वे ता बुद्धिके नाम सफसफा होते हैं ।

आधुनिक राजपूत सरदारोंकी गिरी हुई दशा देखकर कवि आश्चर्यमें आता है

ने घोड़ा, ने गाम, रिजक नहीं राजा नहीं ।
राजपूतांरे राम भीतरम्यो भू भोपळा ॥
ठाकर गेया, ठग रह्या रह्या मुलकरा चोर ।
वे ठकराणा मर गया ठाकर बिजो और ॥

पाइ गइ, गाँव गये, जागीर-पट्टा आमदनी सब कुछ गई, राज्य भी गई पर फिर भी राजपूतोंका 'राम' न जाने क्या निकल गया ? सच्चे ठाकुर तो सब चले गये अेक भी बाकी नहीं रह गया बाकी रह गये ठग और मुल्क-मरुके चार जिन्होंने प्रजाको लूटन-खसोटनेका ही धंधा बना रक्खा है। जो ठकुरानियाँ सच्चे ठाकुरोंको जन्म देती थीं व अब पृथ्वी-तल पर नहीं रह गयीं।

जब अैसे सरदार रह गये हैं, तो फिर युद्धके लिअे प्रेरित करनेवाली वाणीके धनी कविराजोंकी क्या आवश्यकता ? इसलिअे हमारे कविजी उन कविराजोंको सलाह देते हैं

कविराजा ! कैसी करो हल्लम् हालो हेत।
कीत कमीनै गाड दो ऊपर राखो रेत॥

हे कविराजजी ! अब कविता करनेकी आवश्यकता नहीं। यदि पेट भरना है तो हलसे प्रेम करो और खेती करना शुरू कर दो। अपनी कविताको जमीनमें खूब गहरी गाड़ दो और ऊपर तक अच्छी तरहसे रेत चुन दो ताकि कहीं पातसाह औरंगजेब जह कभी बाहर न आने पावे।

अब साहजीसे भी हैं-गोपाल कर लीजिये

कळ नदियाँ मिळिया किके मिळिया समँद मँझार।
वित कर चढिया बाणिया पूगा खेंवा पार॥

जो जल नदीमें मिल गये वे फिर गहर समुद्रमें ही जाकर ठहरे और जो धन बनियोंके हाथ पड़ गया वे तो समुद्रके भी उस पार जा पहुँचे। वह जल समुद्रसे फिर हाथ आ सकता है पर इसकी संभावना नहीं कि साहजीके पास गया हुआ धन फिर कभी वापिस मिल जायगा।

दरसावै धरमै दया, पाप उठावै पोट।
हिरमैं, चितमैं, हाथमैं, बातमैं मनमैं खोट॥

ऊपरसे जगतको बड़ी दया दिखलाते हैं—तिलक लगाते हैं धर्म-

फिट बीदां फिट कायरां, चंगळवर भेवाड़ ।
दलपत हुड ज्यूं पांखियो माछ गयो भेवाड़ ॥

जोधपुर-महाराज विजयसिंहजीकी मराठोंके साथ लड़ाई हुई, जिसमें महेसदास बड़ी वीरताके साथ काम आया। उसीकी वीरतासे महाराजकी विजय हुई। पर उसकी कदर न करके जगरामसिंह नामक अेक दूसरे सरदारको जो युद्धसे भाग आया था, महाराजने आसोपका पट्टा देनेका विचार किया। कोई चारण भी वहाँ गया था। तुरन्त बोल उठा

मरज्यो मही महेस ज्यूं राड भिड़ै पग रोप ।
जगडामैं भागो जगो उण पायी आसोप ॥

कविके कथनका यह प्रभाव हुआ कि महाराजने अपना विचार बदल दिया।

अेक ताजा उदाहरण लीजिये। मेवाड़के महाराणा सज्जनसिंहजीको सरकारकी ओरसे G C S I की उपाधि मिली। बड़ा भारी उत्सव मनाया गया। अेक कविराज मन मलीन किये अेक ओर चुपचाप बैठ थे। पूछा गया—कविराजजी! मन मार कैसे बैठे हैं कुछ सुनाइये आज तो आनन्दका दिन है। आग्रह किये जानेपर चारण बोला

भागी भागी बावळा हिंद हुन्दा नूर ।
अब देखो मगजापत तारा हुआ हजूर ॥

कहाँ हिन्दुआ-सूरज और कहाँ हिन्दके सितारे! पतनकी भी कोई सीमा है!

भक्ति-काव्यमें भी यही स्वातंत्र्य-प्रियता दृग्गोचर होती है। भक्तके उपालंभ कैसे वीरोचित हैं

म्हांस्यो महिमा आप तणी रघुकुळरा तिलक ! ।
पाड मनो पाखाण धींगे दसरथराय उत ! ॥
थी ही तारण समय बळ ऊपर पगनाथ ।
ताहि तारियै अवतरण ! रघु नंदा नाथ ! ॥

न पूछना) और तीसरे बिना परिश्रमके बैठ-बिठाये पेट भर अनाज मिल जाता है। फिर इसिसे मिलकर क्या खास चीज़ !

यहाँ राजस्थानी जीवन स्वातंत्र्य-मय है वहाँ उसके कविलोग भी दृढ़ और स्वतंत्र प्रकृतिके पाये जाते हैं। सभी बातोंका स्पष्ट मुँहपर कह देनेमें वे कभी नहीं हिचकते।

किसी समय जयपुर-नरेश सवाई जयसिंहजी और जोधपुर-नरेश जसवन्तसिंहजी साथ-साथ बैठे हुअे थे। अेक कविराज भी वहाँ बैठे थे। फरमायश हुई कि कविराजजी दोनों नरेशोंके विषयमें कुछ सुनावें। पहले तो कविराजजीने टालना चाहा, पर जब बहुत आग्रह किया गया तो बोले

पत-जैपुर, जोधाण-पत दोनूं थाप उथाप।
कूरम मार्‍यो डीकरो कमधज मार्‍यो बाप॥

जयपुर-पति और जोधपुर-पति दोनों ही अेकसे अेक बढ़कर हैं। कछवाह (जयपुर-नरेश) ने बेटेको मारा तो कमधज (जोधपुर-नरेश) ने मारके द्वारा बापपर हाथ साफ किया।

एक सिपाही बगतसिंहजी अेकबार अपने घोड़ेको बापा-बापा कहकर पुकार रहे थे। अेक चारण वहींपर खड़ा था। उससे नहीं रहा गया। बोल पड़ा

बापो मत कह बखतसी! बापत है बेकाम।
अेकण बापो फिर कह्यां हुय तबीजो प्राण॥

हे बखतसिंह, घोड़ेको बापा कहकर मत पुकार, यदि अेक बार और बापा कह दिया तो बेचारा प्राणोंसे हाथ धो बैठेगा।

बीकानेर-नरेश रत्नसिंहजीने बादशाहसे बैर कर लिया। पर बीकानेरके सरदारोंने उन्हें छुड़ानेका यत्न नहीं किया। उसपर चारण उन्हें किस तरह फटकारता है

फिट मीतां फिट कावळाँ, जंगळभर जेहाड़ ।
दळमत हुअ ज्यूं पहाड़ियो भाग गयो भेहाड़ ॥

जोधपुर-महाराज विजयसिंहजीकी मराठोंके साथ लड़ाअी हुअी, जिसमें महमदास वकी वीरताके साथ काम आया। उसीकी वीरतासे महाराजकी विजय हुअी। पर उसकी कदर न करके जगरामसिंह नामक अेक दूसरे सरदारको जो युद्धसे भाग आया था, महाराजने आसोपका पट्टा देनेका विचार किया। कोअी चारण भी वहाँ खड़ा था। तुरन्त बोल उठा

मरज्यो मती महेस ज्यूं राड़ बिचै पग रोप ।
भगजाओ भागो जको उन पायी आसोप ॥

कविके कथनका यह प्रभाव हुआ कि महाराजने अपना विचार बदल दिया।

अेक ताजा उदाहरण लीजिये। मेवाड़के महाराणा सज्जनसिंहजीको सरकारकी ओरसे G C S I की उपाधि मिली। बड़ा भारी उत्सव मनाया गया। अेक कविराज मन मलीन किये अेक ओर चुपचाप बैठ थे। पूछा गया—कविराजजी ! मन मारे कैसे बैठे हैं कुछ सुनाइये, आज तो आनन्दका दिन है। आग्रह किये जानेपर चारण बोला

भागी भागी भाखता हिंद हमारा सूर ।
अब देखो मेवाड़पत तारा हुआ हजूर ॥

कहाँ हिन्दुआ-सूरज और कहाँ टिमटिमाते सितारे ! पतनकी भी कोअी सीमा है !

भक्ति-काव्यमें भी यही स्वातंत्र्य-प्रियता दृष्टिगोचर होती है। भक्तोंके उपालंभ कैसे वीरोचित हैं

भाग्यो महिमा आज थारी रघुकुलका तिलक ! ।
पान भयो पाषाण हूँगि दशरथराम उत ! ॥
थी ही तारण समय अब ऊपर पाषाण ।
ताहि तारिरै जगतरण ! अब बड़ा पाषाण ! ॥

इसी भावका यह प्राचीन राजस्थानी दूहा है

बड़ा बड़ाई ना करै, बड़ा न बोलै बोल ।
हीरा मुखसे ना कहै लाख हमारा मोल ॥

सिंहोंकि बहाने वीर मनस्वी पुरुषोंकी तेजस्विता, प्रताप और पराक्रम के क्या ही सुन्दर चित्र इन दूहोंमें खींचे गये हैं

जिण मारग केहर बुवो लागी घास डिगाह ।
ते खड़ ऊभा सूकसी नह चरसी हिरणाह ॥
पाखर पगां पर पमळ्या, भागो घरमें आप ।
सूतो नाहर नींद सुन पीवरो ग्यो प्रताप ॥
हाथळ कठ निरभै हियो सरभर भलो समथ्थ ।
सींह अरण्य संचरै, सींहा केहा सथ्थ ॥
सिंघा देस विदेस सम, सिंघा किसा वतन ।
सिंघ जका वन संचरै, वे सिंघारा वन ॥

जिस मार्गसे सिंह अेकबार भी होकर निकल गया है, उस मार्गके घास का पास चरनेकी हिम्मत हिरनोंको स्वप्नमें भी नहीं हो सकती । वे खेत तो खड़े-खड़े ही सूखेंगे । सिंह बनकोंको मारकर आया है पर निश्शंक सो रहा है सोते हुअे शत्रु उसपर आक्रमण कर देगा इसकी तो संभावना भी नहीं हो सकती । सिंह किसीको अपना सहायक नहीं बनाता, उसका सहायक उसका 'हाथका बल' है जिसके भरोसे वह निर्भय घूमता है । उसकी तेजस्विताका कारण कोई अेक स्थान नहीं है, वह तो जहाँ जाता है वहीं अपनी तेजस्विताके बलपर शासन करने लगता है ।

सिंह और हाथी अेक ही बनमें रहते हैं फिर भी क्या कारण है कि हाथी लाखोंमें बिकता है पर सिंहका कौड़ी मूल्य भी नहीं आता

अेकण बन बसंतड़ा अेकण अंतर काय ।
सिंह कवड़ी ना लहै गयवर लख्ख बिकाय ॥

राजस्थानी साहित्यमें प्रेमका आदर्श ऐसा है।

दूसरा उदाहरण लीजिये

> सीधी पाळ तळावरी ईसा बैठा आम।
> मीठा पुरखी करसी जुग-जुग चाकर राम॥

दुनियादारीकी दो चार बातें लीजिये। संसारमें सीधे आदमीके लिये कोई स्थान नहीं होता। सभी उसको सताया करते हैं। राजस्थानी कहावत भी है कि सीधे ऊँटपर दो सवारियाँ बैठती हैं, कुबड़ ऊँटपर चलते हुए सभी डरते हैं। इसीलिये सेठ भी अपने पतिसे कहती है

> बाका रहजो बालमा! बाका आदर होय।
> बाका बनका लाकड़ा, कटै न कोई काय॥

जंगलमें जो लकड़ी सीधी होती है, वही काटी जाती है।

संसार में प्राय: उसीका आदर होता है जो ऊपरी आडम्बर रखना जानता है, भीतर चाहे कुछ भी न हो। जो आडम्बर नहीं रखता उसकी कोई बात भी नहीं पूछता। इसी भावको इस दूहेमें उदाहरण देकर समझाया गया है

> लछमी वर हरि लार, हरनै दत दीनो जहर।
> आडम्बर अधकार रखै सारा रसिया!॥

देखो समुद्रने आडम्बरी विष्णुके पीछे तो चुपचाप लक्ष्मीको वर दिया पर सीधेसादे भोलानाथ बाबाको जानते हैं क्या दिया? जहर, हलाहल जहर।

धनकी महिमा अनन्त काल से गायी जाती रही है। सर्वे गुणा काञ्चनमाश्रयन्ति न वसु मध्ये धनहीनजीवनम् धनात्धर्मैः धनात्सर्व- पथ्य, दारिद्र्यपापा गुणराशिनाशी आदि संस्कृत कवियोंकी उक्तियाँ पंडितोंकी कहावतें बन गई हैं। राजस्थानी कवि अपनी शैलीमें धन महिमाका गान करते हुए कहता है

ढाळद भर दोळो हुवे परणी नावे पास।
रुपिया होवे रोकड़ा, छोरा आवे सास॥
रुपिया बिन गाना करे, हाथर जोड़े हाथ।
अेक अधेली आडमें, धोळो सुन है बात॥

यदि पैसा पास नहीं है तो चाहे जितनी हाजिरी भरो, हाथ जोड़ो और मीठी-मीठी रागें गाओ, कोई बात भी नहीं सुनेगा। पर यदि आपके पास ज्यादा नहीं अेक अधेली ही है तो बहरा भी आपकी बातको सुन लेगा, दूसरोंका कहना ही क्या।

मोडो पूछे गोरिया, किसो भलेरो देस।
पैसा होय तो घर भलो नहीं भलो परदेस॥

'न बंधुमध्ये धनहीन-जीवनम्' की भावको सवादात्मक रूप देनेसे उसमें नवीनता आ गयी है।

भाग्यके खेलका वर्णन कैसा रोचक उदाहरण देकर किया गया है

परमारथका पावणा, देख दशांका दाव।
मभीखणने लंक, अर हड़मानने तेल॥

कहाँ विभीषण और कहाँ हनुमानजी। पर विभीषणको मिली लंका और हनुमानजीको ? तेल और सिन्दूर।

अवसर बीत जानेपर कार्यसिद्धि हो जाय तो भी उससे क्या काम ? इसी भावको कवि कैसा सजीव बनाकर उपस्थित करता है

आभो रह्यो ऊँकळो आभो रह्यो आव।
सावण सूकै बण गयो (अब) बरसे बरसे भाव॥

मेघ आवश्यकताके समय तो बरसा नहीं अब अवसर नाश हो जानेपर चाहे मीठे स्वरसे गरजे। इसमें अन्तर्वेदनाके सिवाय अकालका भी सजीव रूप खड़ा कर दिया है—"सावण सूकै बण गयो"। तुलसीने इसी भावको इस प्रकार प्रकट किया है—'का बरषा जब कृषी सुखाने" और 'अवसर कौड़ी जो चुके, बहुरि दिये का लाख"। पर दोनों कथनोंमें यह

बात नहीं जो दूहेमें है। 'मोंगर मांहे मण गयी मधरा-मधरा गाज।" वेदना को साकार बना दिया है और भावकी व्याकरणिक-वचन-सरणीने और भी सजीवता भर दी है—'आधा रह्या ऊँगळी आधा रह्या हाथ"। महाकवि भारविने भी "विमलामलिन विलम्बता" आदि वचनोंसे असामयिकताकी निन्दा की है, पर ऐसा हृदय पिघलानेवाला वचन खोजनेसे भी नहीं मिलेगा।

गृहस्थ जीवनके सुख-दुःखोंका वर्णन नीचेके दूहोंमें किया गया है

खाटी चावळ भैंस-दुध घर सिलवंती नार।
चौथी पीठ तुरंगरी सुरग-निसाणी च्यार॥
भाग पुराणो घी नवो भाग्याकारी नार।
पंच तुरी घर चाकरी पुत्र वणा दळ च्यार॥
विद्या, भर घर नार, संपत गेह, शरीर सुख।
माम्या मिळै न च्यार, पूरब पूरा दत बिन॥

खानेको उत्तम चावल मिलें, भैंसका दूध हो, नया घी हो घरमें संपत्ति हो शरीर नीरोग हो विद्या प्राप्त हो पतिव्रता सुशीला स्त्री हो और सवारीको घोड़ा हो तो फिर क्या कहना। यदि ये प्राप्त हैं तो भाषाके शब्दोंमें—वहाँ छावि हुवि बैकुंठा।

ऊसो मोसम भू सुवन घर कळहारी नार।
चौपा टाम्या चापड़ा, नरक निसाणी च्यार॥
कायर ऐव कपूत हठ घर कळहारी नार।
मैला बिखरा कापड़ा, नरक निसाणी च्यार॥
खेत कुराक पाना कम्बा धूप बोस्यो गेह।
मामासू मेळप नहीं, विपत लिखी विध येह॥

रूखा मोसम मिले जमीनपर सोना पड़े कपड़ा फटे और मैले हों ऐव कसर हो एक सीधा चलनेवाला न हो कुसंगरोंर कानोंसे लगे रहें, घर घर टम्टा घोटे भाइयोंसे मेल न हो और सबसे बढ़कर भी कर्कशा

अेक बुढ़िया अपनी कथा कहती है

> यहि अँगना, यही देहरी, यही ससुरको गाम ।
> दुलहिन-दुलहिन टेरता, बुढ़िया पड़गयो नाम ॥

यही आँगन है, यही देहली है, यही वह ससुरका गाँव है जिसमें मैंने नव-वधूके रूपमें प्रवेश किया था और जहाँ मैं दुलहिन कहकर पुकारी गयी थी। दुलहिनके नामसे पुकारते-पुकारते आज मैं बुढ़ियाके नामसे पुकारी जाने लगी हूँ। कितनी करुण कथा है।

बचपनके साथियोंसे वियुक्त अेक भावुक हृदय उनकी स्मृतिसे ही करुणा-विह्वल हो उठता है

> आसी सावन मास, बरखा रुत आसी वळे ।
> हमसाथी साथ वळे न आसी, बीसरा ! ॥

यह सावनका महीना फिर लौट आयगा, वर्षा भी फिर आ जायगी, पर जिन साथियोंके संग बचपनमें खेले-कूदे हैं उनका संग जीवनमें फिर नहीं आयगा।

इनमें कितनी वेदना कितनी करुणा, कितनी विह्वलता और कितनी हृदय-वेधकता भरी है, इसे भुक्तभोगीके सिवाय कौन जान सकता है।*

— * —

* प्रस्तावना के बीच-बीच के कुछ अंश श्री रामनिवास हारीत के लिखे हुअे हैं।

७

"ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या" भारतका मूलमंत्र-सा रहा है। परिवारके शिशु, तरुण और वृद्ध सबके मुँह पर अेक ही बात मिलेगी—"जग झूठा सारा सोइया" और भारतीय संसार में "पद्मपत्रमिवाम्भसा" रहने का ही आदेश मिलेगा। राजस्थानी काव्यधारामें भी यह शान्ति मिलेगी। राजस्थानी-काव्योंमें शान्त रस भी अन्य रसोंकी तरह लालित्यपूर्ण मिलेगा। अेक दो उदाहरण ही आपके सामने रखे जाते हैं—ये ही मानुष-परिचय देनेमें पर्याप्त होंगे

पान झड़ंता देखकर, हँसी जु कूंपलियाह।
मो बीती तुझ बीतसी धीरी बापड़ियाह॥

वृक्षके पत्तोंको झड़ते देखकर कोंपलें हँस पड़ीं। उन्हें हँसते देखकर पत्ते कहते हैं—अरी बेचारी कोंपलों क्या हँसती हो जरा ठहर जाओ, जो हम पर बीत रही है वही तुमपर भी शीघ्र बीतनेवाली है। दूसरोंकी विपत्ति में सांसारिक जनोंको प्रसन्नता होती है। उस समय उन्हें यह ध्यान नहीं रहता कि कभी हम भी इस विपत्तिमें फँस सकते हैं।

वर्तमानकालीन क्षणिक वैभवमें फूलकर मनुष्य जानते हुअे भी वास्तविकताको भूल जाता है। इस बातको अन्योक्ति-रूपमें कैसे सुंदर ढंगसे समझाता है :

पाकी बाली देखकर पूर गुमान भयाह।
फिरता वाय जहानमें क्या-क्या सूल सयाह॥

समयके फेरसे मनुष्यकी अवस्थामें जो परिवर्तन हो जाता है, उसका कैसा सजीव और करुणा पूर्ण चित्र इन दूहोंमें अंकित किया गया है

छन भर खेलो पाछली मोल्या मखी भार।
अेक दिन अैसो आवसी पर बारी पिछ्मितार॥
मथिपत देखा मोत पर बैठ्या बोहा बना।
रोझ्या-केरो रोम मिठयो देख्यो नीपना॥

मावै नहीं घ मास, झमी बिवत्र विडावणा।
धीरामे दिस रात रोट्यां कारण, राविया ! ॥

जो सोने और मोतियोंके आभूषणोंसे लदी रहती थी वह आज घर-घर मटकनेवाली पनिहारी है। जिनको राजा लोग पर बैठे रीम चखाते थे उनके यहाँ आज रोटियों तकके लाले पड़े हैं। जिनको स्वादिष्ट व्यंजन भी अच्छे नहीं लगते थे, वे आज सूखा रोटियोंके लिये आजिजी करते फिरते हैं।

संसार के अस्थायी नश्वर जीवनका रूपक कितना स्पष्ट चित्रित किया गया है

नदी-किनारे देखियें, तम्मन, सब संसार।
कर उतरे, कर उतरें, (कइ) बुगचा बाघ तयार॥

सारा ससार नदी-किनारका यात्री-समाज है जिसमंसे कुछ नदीको पार कर चुके हैं कुछ कर रहे हैं और कुछ अपने-अपने बुगच बाँधकर पार जानेका तय्यार खड़े हैं—नावकी बाट जोह रहे हैं।

यौवनागम पर वृद्धावस्थाका भयंकर रूप देखकर प्राणी पुकार उठता है:

हा! हा! जौबन ! बाव मत, मैं बरजत हूं बाव ।

जब यौवनरूप चला गया तो फिर कोई बात भी नहीं पूछता। उस समय महारा इनकी दशा दयनीय हो रह जाती है

भार सुहागन लाकड़ी ! तेरा पड़िया काज।
मारा दी आलोचना वा दिन माया भाज॥

मारवाड़ में समझदार आती है। न जाने क्या जानकर उसने बीपायु की आशीष दी थी।

अेक बुढ़िया अपनी कथा कहती है

> वही अँगना, वही देहरी वही ससुरको गाम ।
> दुल्हिन-दुल्हिन टेरता, बुढ़िया कहयको नाम ॥

यही आँगन है, यही देहली है यही वह ससुरका गाँव है जिसमें मैंने नव-वधूके रूपमें प्रवेश किया था और जहाँ मैं दुलहिन कहकर पुकारी गयी थी। दुलहिनके नामसे पुकारते-पुकारते आज मैं बुढ़ियाके नामसे पुकारी जाने लगी हूँ। कितनी करुण कथा है!

बचपनके साथियोंसे वियुक्त अेक भावुक हृदय उनकी स्मृतिसे ही करुणा-विह्वल हो उठता है

> आसी सावन मास, बरखा-रुत आसी चले ।
> सर्मगारी साथ चले न आसी, बाँवरा ॥

यह सावनका महीना फिर लौट आयगा, वर्षा भी फिर आ जायगी, पर जिन साथियोंके संग बचपनमें खेले-कूदे हैं उनका संग जीवनमें फिर नहीं आयगा।

दूहेमें कितनी वेदना कितनी करुणा, कितनी विह्वलता और कितनी हृदय-वेधकता भरी है, इसे भुक्तभोगीके सिवाय कौन जान सकता है!*

— ❀ —

* प्रस्तावना के बीच-बीच के कुछ अंश श्री रामनिवास हारीत के लिखे हुये हैं।

अनुक्रमणिका

प्रवचन ३–४

प्रस्तावना १–१८

	पृष्ठ
१—विनय	१–७
(१) भगवानकी स्तुति	३
(२) गंगाजीकी स्तुति	५
(३) सरस्वतीजीकी स्तुति	६
२—नीति	८–३०
(१) मनस्वी पुरुष	११
(२) महापुरुष	१२
(३) सज्जन	१३
(४) सच्चा मित्र	१४
(५) संगतिका फल	१५
(६) सत्संगति	१६
(७) कुसंगति	१६
(८) दुर्जन	१७
(९) कृतघ्न	१७
(१०) दुर्मित्र	१८
(११) ओछे पुरुष	१९
(१२) अविवेकी पुरुष	१९
(१३) मूर्ख	२
(१४) उदारता	२१
(१५) कंजूस	२२
(१६) परोपकार	२३
(१७) मधुर भाषण	२३
(१८) आदरभाव	२४
(१९) आत्ममहिमा	२५
(२) प्रारब्ध	२६
(२१) उद्योग	२८
(२२) गरज (स्वार्थ)	२८
(२३) अवसरवाद	२९
(२४) नशेकी निंदा	
तमाखू दारू (शराब)	३
(२५) हिंसाकी निंदा	३१
(२६) परस्त्री निंदा	३१
(२७) अन्योक्तियाँ	३२
(२८) सामान्य नीति	३५
३—वीर	३६–६८
(१) सामान्य	३६
(२) वीर सम्बन्धी उपालंभ	७३
(३) विशेष वीर	५
(क) युद्धवीर	
१ महाराणा प्रतापसिंह	७५
२ बादल	८३
३ महाराणा अमरसिंह	८७

राजस्थानरा दूहा

१ विनय

सदा भवानी दाहणी सुनमुख रहा गणेस
पाच देव रिच्छया करो ब्रह्मा बिष्णु महस

राजस्थानरा दूहा

१ विनय

१—भगवानकी स्तुति

सिल ऊधरती सारि माठो धीवर नाव मैं।
महिमा चरण मुरारि ! देखे दसरथराव-उत ! ॥ १ ॥
फिरि फूटिमे कपाळ त्रीकम ! तूँ विमुखाँ तणा।
घड़ी घड़ी घड़ियाळ वाजै वसदेराव-उत ॥ २ ॥
आयो मान्तीह गरुड़ै ही माठो गणे।
ग्रह उबारण ग्राह मारण वसदेराव-उत ॥ ३ ॥

१—भगवानकी स्तुति

१—हे राजा दशरथके पुत्र भगवान् श्रीराम ! आपके चरणोंकी महिमा देखकर और शिला (शिला बनी हुई अहल्या) के उद्धारकी बात याद करके केवट मन डरकर नाव परे हुआ (यह सोचकर कि चरणोंके छूकर जब शिला भी बन गयी तो काठकी बनी नावके लिए ऐसा होना क्या असंभव है और यदि मेरी नाव भी बन गयी तो फिर मैं अपना और अपने परिवारका पेट कैसे पालूँगा)।

२—हे राजा वसुदेवके पुत्र भगवान् त्रिविक्रम ! जो तुमसे विमुख हैं उनका माथा अवश्य ही फूटने योग्य है जैसे घड़ी-घड़ीके बाद घड़ियालका सिर कूटा जाता है (बजाया जाता है)।

३—हे राजा वसुदेवके पुत्र ! आपने मस्त हाथीकी पुकार सुनकर उसे बचानेके

दीनानाथ दयाल ! तूं जोइ आपण आपरो ।
कांइ जमह समो कृपाळ ! देखै दसरथराज-उत ! ॥ ४ ॥
आयो महिमा आण म्हारी रघुकुळरा तिलक ! ।
पोत गयो पाखाण दीठै दसरथराज-उत ! ॥ ५ ॥
मूंदी ही तारण समथ जळ ऊपर पाखाण ।
ताहि तारियै जग-तरण ! तइ केहा वाखाण ? ॥ ६ ॥
जद मैं थांनै जाणिया राम ! गरीबनिवाज ।
मणि-माणक मूंघा किया मूंघा अन्न-त्रिण-नाज ॥ ७ ॥

लिए तुम दौड़े और दौड़ते समय पीताम्बरको भी तुमने भारस्वरूप समझा ।

४—हे राजा दशरथके पुत्र, हे दीनोंके नाथ ! हे दयालु ! तुम अपने प्रभुत्व की ओर देखो । हे कृपालु ! हमारी ओर क्या देखते हो ? (अपनी महानताका ध्यान करके हमारा उद्धार कर दो, हमारे दुर्गुणोंकी ओर मत देखो क्योंकि ऐसा करनेसे हमारा उद्धार असम्भव हो जायगा) ।

५—हे रघुकुलके तिलक और राजा दशरथके पुत्र श्रीराम ! तुम्हारी महिमासे पत्थर भी नावकी भाँति तैर गये थे । वही तुम्हारी महिमाका ध्यान करके मैं तुम्हारे पास आया था, पर मुझे जान पड़ता है कि पत्थरका नाव बनना तो दूर रहा, मेरी नाव ही तुम्हारे पास आनेपर पत्थर बन गयी है (प्रेमपूर्ण उपालम्भ) ।

६—हे श्रीराम ! तुमने जल पर पत्थर तैरा दिये तो यह कौन बड़ा काम किया ? मूंदी भी जल पर पत्थर तैरानेकी सामर्थ्य रखती है । हे जगतके तारनेवाले ! यदि उन्हें तैरा भी दिया तो क्या बड़ाई ? (बड़ाई तो तब है जब मुझ जैसे पापीको भी तारो) ।

७—हे राम ! जब मैंने तुमको दीनोंका पालन करनेवाला समझा, तब मैंने देखा कि तुमने मणि-माणिक आदि धनवानोंके कामकी चीजोंको महँगा बनाया है

२—गंगाजीकी स्तुति

काया लाग्यो काट सिकलीगर सुधरै नहीं ।
निरमळ होय निराट सब भेट्यां भागीरथी ! ॥ १ ॥
ताहरउ अदभुत ताप मात ! संसारे मानियउ ।
पाणी-मूँहडे पाप जो तूँ बाळै जान्हवी ! ॥ २ ॥
कीया पाप जकेह जनम-जनममें जूजुआ ।
ते भाजिया तकेह भेळा ही भागीरथी ! ॥ ३ ॥
पुळियै मग पुळियाह दरस हुवाँ अदरस हुवाँ ।
जळ पैठाँ गळियाह मदा क्रम मदाकिनी ! ॥ ४ ॥
जव-तिल जितरो जाय हेक कणूको हाडरो ।
मुवाँ पछै ही माय ! भेळै गत भागीरथी ! ॥ ५ ॥

और दोनोंके कामकी आवश्यक वस्तुओंको तैयार कर, अनन्त पाप भारको सुगम और सस्ता किया है ।

२—गंगाजीकी स्तुति

१—हे भागीरथी ! शरीरमें लगा हुआ मायाका जंग सिकलीगरसे साफ नहीं हो सकता परन्तु तुमसे भेंटनेपर वह जंग बिलकुल साफ हो जाता है ।

२—हे माता जाह्नवी ! तेरे अद्भुत प्रतापको समस्त संसारने मान लिया है क्योंकि तू कमाल पानीके द्वारा पापोंको जलाती है (पानीसे जलाना यह एक अद्भुत बात है)।

३—हे भागीरथी ! मैंने जो पाप अलग-अलग जन्मोंमें अलग-अलग किये थे उन सबको तूने एक ही साथ नष्ट कर दिया ।

४—हे मंदाकिनी ! जब मैं तुम्हारी ओर चला तो मेरे पाप भी अपने रास्ते लगे जब तुम्हारा दर्शन हुआ तो वे अदृश्य हो गये और जब मैं तुम्हारे जलमें घुसा तो वे गल गये ।

५—हे माता भागीरथी ! जौ या तिल जितना एक हड्डीका टुकड़ा भी यदि तुम्हारे पानीमें चला जाय तो वह मरनेके बाद भी, सद्गति दे देता है ।

करनळ किणियाणीह, धणियाणी जगळ-धरा ।
आळस मत जाणीह जोसहड़ी साजै बिड़द ॥ २ ॥
आई विखमी वार, जे ऊबर करमी नहीं ।
सरणाई साभार कुण जग कहसी करनळा ! ३ ॥
सुणियाँ साद सतैज आई ! आगळ औवता ।
जगदंब ! अब क्यां जेज करी इती है करनळा ! ४ ॥
देवी देसाणेह, धर बीकाणे तूं धणी ।
जोगण जोधाणेह, मानीजै मेहास-धू ! ॥५॥२१॥

२—हे जांगल देशकी स्वामिनी देवी करणी ! आलस्य मत करना नहीं तो हे बीस भुजाओंवाली ! तेरा बिरद लज्जित होगा।

३—हे माता करणी ! [illegible] की अवस्था आ गयी, उसपर यदि तू सहायता नहीं करेगी तो तेरी शरणको संसारमें कौन साभार (आभारसहित) कहेगा।

४—हे माता करणी ! शब्द (पुकार) को सुननेपर तू पहले तो सदा तुरन्त ही आती थी। हे जगदम्बा ! अब तूने इतनी देर क्यों की ?

५—हे माता करणी ! तू देशनोकमें देवी के रूपमें बीकानेरकी भूमिमें स्वामिनीके रूपमें और जोधपुर-राज्यमें योगिनीके रूपमें मानी जाती है (पूजी जाती है)।

२ नीति

३—सज्जन

तरवर सरवर, सज्जन चौथा बरसण मेह ।
परमारथरै कारणै च्यारां धारी देह ॥ १ ॥

तरवर कदै न फळ भखै नदी न सांचै नीर ।
परमारथरै कारणै साधां धरयो सरीर ॥ २ ॥

सज्जन बिराज्या जाजरा सठ बिराज्या खाट ।
कथवाळ्यो यूँ कहै दोनांमें कुण घाट ? ॥ ३ ॥

बरसण जातां साधकै जेता दीजै पांव ।
पैड-पैड असमेध जिग फळै न मनको भाव ॥ ४ ॥

सज्जण थोड़ा हंस ज्यूँ बिरळा कोइ दीसंत ।
दुरजण काळा काग ज्यूँ महियळ घणा भमंत ॥ ५ ॥

निज गुण ढांकण नेक नित परगुण गिण गावत ।
ऐसा जगमें सुजण जन बिरळा ही पावत ॥ ६ ॥

कथ्यनक । भाखै—इसमें कहता है । किसनिया—कविका नाम ।

३—सज्जन

१ बरसण—बरसनेवाला । च्यारां—चारोंने ।

२—भखै—खाते हैं । सांचै—जमा करती है । साधां—साधुओंने ।

३—सठ—खिड़ासनपर । जाजरा—भगवान् । कथवाळ्यो—कविका नाम । दोनांमें कु —दोनोंमें कौन कमतर है ।

४—जातां—जाते हुए । पैड-पैड—पग-पगपर । असमेध जिग इ०—अश्वमेध यज्ञ का फल पाता है ।

५—महियळ—पृथ्वीपर । घणा—बहुत । भमंत—घूमते हैं ।

६—ढांकण—ढकनेवाले, छिपानेवाले । गिण—गिन-गिनकरके । ऐसा—ऐसे । सुजण—सज्जन । पावत—मिलते हैं ।

बुरजणरी किरपा बुरी भलो सुजणरो त्रास ।
जद सूरज गरमी करै जद बरसणरी आस ॥ ७ ॥ २५॥

४—सखा मित्र

सांचा मित्र सचेत कहा काम न करै किसो ।
हर अरजनरै हेत रथ कर हांक्यो राजिया ॥ १ ॥
सभा सनेही और भर मुलम मिलै अनेक ।
विपत पड्यां दुख बांटलै सो लाखां में ओक ॥ २ ॥
मित ज औगण मितरा अनत नहीं भाखंत ।
कूप छांह ज्यूं आपणी हीयेमें राखंत ॥ ३ ॥२८॥

५—संगतिका फल

जैसा संगत बैठिये तैसो इज्जत पाय ।
सिर पर मखमल सेहरे पनहीं मखमल पांय ॥ १ ॥२६॥

७—जद—जब । जद—तब ।

४—सखा मित्र

१—किसो—कौनसा । हर—हरि, कृष्ण ।

२—और—दूसरे । मिलै—मिलते हैं । पड्यां—पड़ने पर ।

३—मित—मित्र । ज—अवधारणसूचक अव्यय । अनत—अन्यत्र । कूप छांह—जैसे कुँआ अपनी छायाको अपने ही भीतर रखता है वैसे ही सच्चे मित्र मित्रके अवगुणोंको हृदयमें ही रखते हैं किसीके सामने प्रकाशित नहीं करते ।

५—संगतिका फल

१—पाय—पाती है । सेहरे —पुरुषमें मखमल क्या होता है वा सिर पर रहता है पनहींमें क्या होता है वा पैरोंमें ।

६—सत्संगति

संगत कीजै साधकी हठ कर कीजै मोह ।
करम कटै काळ कहै, हिरै काठ सँग लोह ॥ १ ॥
मळयागिर मँझार, हर कोइ तर चंदण हुवै ।
संगत लहै सुधार, रूँखाँ ही राजिया ! ॥ २ ॥३१॥

७—कुसंगति

ओछेको सँग-साथ अहमद तजो अँगार ज्यूँ ।
तातो जाळै हाथ सीरो कर काळो करै ॥ १ ॥
पुन्न गया परवार, सज्जन-साथ छुट्या जदै ।
दुरजण-जमरी धार रहता फिरतै राजिया ! ॥ २ ॥
कहो नफो किण कामियो मुश्को पवै समाय ?
हींग-तणे सँग हालियो मृगमद गयो गमाय ॥ ३ ॥

६—सत्संगति

१—मोह—प्रेम । करम—पूर्व संचित कर्म । काळ—कालिका नाम । हिरै—दूर जाता है ।

२—मळयागिर—मलयाचल, जहाँ चन्दन बहुत होता है । रूँखाँने ही—पेड़ोंको भी ।

७—कुसंगति

१—सीरो—ठंडा बुझा हुआ ।

२—पुन्न ग—पुण्य नष्ट हो गये । जदै—जब । धार—पीठ । फिरै—फिरते हैं ।

३—नफो—लाभ । मृगमद—कस्तूरी, हींगके साथ रहनेसे कस्तूरीकी सुगंध उड़ जाती है ।

सदु-सभामें मैठ्तां पत पडितरी जाय।
एकण वाड़े किम बड़े रोम गधेड़ो गाय ॥ ४ ॥३५॥

८—दुर्जन

मुख ऊपर मीठास घट माँही खोटा घड़े।
इसड़ाँसूं इखळास राखीजै नहिं राजिया ! ॥ १ ॥
मिळियाँ थत ममवार बोछड़ियाँ मासै बुरी।
सानिव दे ज्यौं मार रजी उडावो राजिया ! ॥ २ ॥
मतलबरा पाजी कर जाड़याँ बिनती करै।
बिन मतलब राजी बोलै नहिं वै बापजी ! ॥ ३ ॥
रज्जब पारस परसके मिटगो माहु-विकार।
तीन मास ता ना मिटी बाँक धार अर मार ॥ ४ ॥३६॥

९—कृतघ्न

कोधाड़ो उपगार नर अवगण मानै नहीं।
मानवियाँ ज्यौं मार रजी उडावो राजिया ! ॥ १ ॥

४—पत—प्रतिष्ठा। पडितरी—पड़ितकी। एकण—एक ही। बड़े—मीतर जा रहे। रोम—गायकी किस्मका एक जानवर।

८—दुर्जन

१—घट इ०—हृदयमें बुरी बातें सोचते रहें। इसड़ाँसूं इ —ऐसोंसे मित्रता का ढ ध नहीं रखना चाहिए।

२—मिळियाँ—मिलनेपर। थत ममवार—बहुत ही मनुहार करते हैं। ज्यौं मार—उलट कीजे। रजी इ०—धूल उड़ाओ।

३—कर इ०—हाथ जोड़े हुये।

४—माह—मोह, विकार। बाँक—टेढ़ापन। मार—मारनेकी शक्ति।

९—कृतघ्न

१—कोधोड़ो—किया हुआ। अवगण—एहसान।

खोटा । धन-जळ आय जळ तिणरी खोटी करै ।
अडी-भूलमें आय राम न राखै राजिया ! ॥ २ ॥
उणही ठाम अरोग मायमरी मनमें मणै ।
आ तो बात अजोग राम न भावै राजिया ॥ ३ ॥ ४२॥

१०—कुमित्र

गिरसूं पड़िये आय आय समदाँ डूबिये ।
मरिये महुरो खाय मूरख मित्र न कीजिये ॥ १ ॥
सुपतमें ससार हर-कोई हेतू हुवै ।
बिपत पड़्यांरी बार नैण न निरखै नाथिया ! ॥२ ॥
सुधरीमें सौ बार भगत करै मन-मोडिया ।
बिगडीमें इक बार कोइ न रैवै किसनिया ! ॥३॥
पळ-पळ मे करै प्यार पळ-पळमें पलटै परा ।
ऐ मुतलबरा यार, रहवै अळगो राजिया ! ॥ ४ ॥
पळ-पळमें करै प्यार, पळ-पळमें पलटै परा ।
लागत है ज्यों लार रजी उडावो राजिया ! ॥ ५ ॥

२—खोटा—ओ बुरा । धन-जळ—धन-जल । तिणरी—उसीको । खोटी—बुराई । राखै—रक्षा करता है बचाता है ।

३—उणही—उसी । ठाम—पात्र, बर्तन । आरोग—भोजन करके । मायमरी—ठीक उसमेंही । आ—यह । बात—बात । अजोग—अनुचित । भावै—अच्छी लगती है ।

१०—कुमित्र

१—गिरसूं—पहाड़से । समदाँ—समुद्रोंमें । महुरो—जहर ।
२—हेतू—हितकारी, प्रेमी मित्र । बार—समय ।
३—भगत—आवभगत । रैवै—(साथ) रहता है ।
४—पलटै परा—बदल जाते हैं । मुतलब—स्वार्थ । अळगो—दूर ।

सुखमें मीठ सवाय दुखमें मुख टाळा दिवै ।
जो के कहसी जाम राम-कचेड़ी राजिया ? ॥ ६ ॥४८॥

११—ओछा पुरुष

मिणधर विस अणमाव मोटा नह धारै मगज ।
वाछू पूँछ बणाव राखै सिरपर राजिया ! ॥ १ ॥
गहवरियो गजराज मद-छकियो चालै मतै ।
कूकरिया बेकाज रोस मुसै क्यूं राजिया ! ॥ २ ॥
मद विद्या धन मान ओछा सो उकळै अवस ।
आधणरै उनमान रहै क विरळा राजिया ! ॥ ३ ॥५१॥

१२—अविवेकी पुरुष

कुन्दण पीतळ हूँत अेक रीत कर आदरै ।
है उण ठाकुर-हूँत भागर सधरा भैरिया ! ॥ १ ॥

६—सवाय—सवाई, अधिक । मुख द —मुख छिपा देते हैं । जं द०—जे ईश्वरकी कचहरीमें जाकर क्या जवाब देंगे ।

११—ओछे पुरुष

१—मिणधर—मणिधर साँप । विस—जहर । अणमाव—अननाप बहुत । नह—नहीं । मिणधर द —यद्यपि बहुत विष होता है पर तो भी वे उसे मस्तक पर नहीं रखते, उधर तुच्छ बिच्छू थोड़े-से विषवाली पूँछको ऊँचाकर सिरपर रखा रहता है ।

२—गहवरियो—मस्त गंभीर । मतै—स्वेच्छापूर्वक । चालै—चलता है । बेकाज—व्यर्थ । भुसै—भौंकते हैं ।

३—सो—से । उकळै—उबल पड़ते हैं । आधण द —अदहन के अनुसार ।

१२—अविवेकी पुरुष

१ कुन्दण द —सोने और पीतल (के गहने) को आदरकर जो दोनोंको एक-सी नजर करता है उस ठाकुरसे पत्थर ही अच्छा ।

खळ गुळ अणमूँलाँ अेक भाव कर आदरै ।
तै नगरी-हूँताँ रोही आछी राजिया ! ॥ २ ॥

गुण-अवगुण जिण गाँव सुणै न कोई साँभळै ।
मच्छ-गळागळ गाँव रहणो मुसकल राजिया ! ॥ ३ ॥

गुण-हीणा सिरदार गुण-हीणा राखै मिनख ।
अस जोधा असवार राम रुखाळो राजिया ! ॥ ४ ॥

सतहीणा सिरदार मतहीणा राखै मिनख ।
अंध मोडी असवार राम रुखाळो राजिया ! ॥ ५ ॥

मान्हा मिनख नजीक उमरावाँ आदर नहीं ।
ठाकर जिणनै ठीक रणमें पड़सी राजिया ! ॥ ६ ॥५७॥

१२—मूर्ख

पाणीमें पाखाण भीजै पर छीजै नहीं ।
मूरख आगे ग्यान रीझै पर बूझै नहीं ॥ १ ॥

२—खळ गुळ—खली और गुड़ । अणमूँलाँ—बिना मोल बुझे ही । हूँताँ—अपेक्षा । रोही—जंगल ।

३—सुणै, साँभळै—सुनता है । मच्छ गळागळ—जहाँ बलवान दुर्बलोंको खाते हैं । रहणो—निवास । मुसकल—मुश्किल ।

४—हीणा—हीन । मिनख—मनुष्य सेवक । अस—ऐसे अंधे असवार-का रक्षक राम ही है ।

६—मान्हा—छोटे । नजीक—पास (रहते हैं) । उमरावाँ—उमरावोंका, बड़े सरदारों का । जिणनै—उसको । ठीक पड़सी—पता लगेगा, मालूम होगा ।

१२—मूर्ख

१—पाणी—पानी । भीजै—भीगता है । बूझै—समझता है ।

नाम रहंदा ठकरां ! नाणा नहीं रहंत ।
कीरत-हंदा कोटड़ा पाड्या नांय पड़ंत ॥ २ ॥
दीवा कुळरा मनुष है, दिया करो सब कोय ।
दरसे घरा न पाइयै जे कर दिया न होय ॥ ३ ॥६७॥

१५—कंजूस

बावन आखरमें बड़ो नन्नो आखर सार ।
दद्दो तो जाणूं नहीं मम्मो आखर प्यार ॥ १ ॥
सूमण पूछे सूमनूं, काहे मुख मलीन ? ।
का गांठीसे गिर पड़्या का काहूको दीन ? ॥ २ ॥
ना गांठीसे गिर पड़्या ना काहूको दीन ।
देवत देख्या औरकूं ज्यासूं मुख मलीन ॥ ३ ॥
कीड़ी पण पावै नहीं मरदारां घर मांय ।
चीर घरांसूं आणियो जिको समाई जाय ॥ ४ ॥

२—पड़ंत—पड़ता है । ठकरां—हे ठाकुर लोग । हंदा—के । कोटड़ा—किले । पाड्या न —गिरानेसे भी नहीं गिरते ।

३—दीवा—दिया हुआ, दान । दिया—चिराग दीपक ।

१५—कंजूस

१—नन्नो—नकार, मांगनेवालेको इनकार कर देना । दद्दो—दकार, देना । मम्मो—मकार, लेना ।

२—सूमण—कंजूसकी स्त्री ।

३—देवत देख्या—दूसरोंको दान करते देखा । ज्यासूं—इससे ।

४—मरदारां—कंजूसोंके । चीर—दूसरोंके । आणियो—लायी । जिको—वह । समाई—खो बैठी है । जाय—कंजूसके यहाँ जाकर ।

दियो' सबद सुणतां दुसह उन-मम मागे साय ।
मूम दियो न करै सदन परख दियाळो पाय ॥ ५ ॥७२॥

१६—परोपकार

पर-कारज सीमाग्यमा, पर-कारज समरथ्य ।
ज्यांनै राखै सांइया आडा दे-दे हथ्य ॥ १ ॥
मर ज्याऊं मांगूं नहीं निज स्वारथरै काज ।
परमारथरै कारणै मोय न आवै लाज ॥ २ ॥
पछिलके पीयेनतै कद्दा घटत है नार ?
परची सम्पमी मा घटै सनमुख जो रघवीर ॥ ३ ॥७५॥

१७—मधुर भाषण

उपजावै अनुराग कोयल मन हरखित करै ।
कड़वो भावै काग रसना रा गुण राजिया ! ॥ १ ॥
सुक-पिक मगै सवाद मम थोड़ो ही भाखणो ।
द्रमा करै बकवाद भेक सबै ज्यूं भैरिया ! ॥ २ ॥

५—मम—ममत्व, भाग । सदन—घरमें । परख—स्वीकार । दियाळी—दियाळी ।

१६—परोपकार

१—पर इ०—अपने काममें देर करनेवाले । समरथ्य—तुरत करनेवाले ।
२—ज्यांनै—उनको । सांइया—परमात्मा ।
३—पीयेनतै—पीनेसे । सम्पमी—सम्पत्ती । सनमुख—अनुकूल । रघवीर—श्रीराम ।

१७—मधुर भाषण

१—कड़वो—कड़ । काग—कौवा । रसना—जिह्वा, बोली ।
२—सवाद—रुचिकर, स्वादिष्ट । मम—मम ही, थोड़े । भेक—मेंढक । सबै—बोलते हैं ।

काया किसका मन हुरै कोयल किसकूं देय ?।
मीठे वचन सुणायकर जग अपणो कर लेय ॥ ३ ॥
पाटा पीड उपाव तन लागां तरवारियां।
वहै जीभरा घाव रती न ओखद राजिया ! ॥ ४ ॥

१८—आदर-भाव

आवत मुख विगसै नहीं आवत नहिं कुमलाय।
सज्जन ऐसे नीचके नीच हुवै सो जाय ॥ १ ॥
आवत ही या हँस मिलै आवत देवै रोस।
टूटी खाटी झूंपड़ी सज्जनका घर सोम ॥ २ ॥
भाव नहीं आदर नहीं नहीं ममता नहिं प्रेम।
हँस कुसळ पूछै नहीं जठै न रहिये खेम ॥ ३ ॥
दादू, आदर-भावका मीठा भागै मोठ।
विण आदर व्यंजन बुरा जीमणवाळा ठोठ ॥ ४ ॥
आदर करै अपार तो भोजन माठी भली।
आवै मन अहंकार, कड़वा घेवर किसनिया ! ॥ ५ ॥

४—पाटा इ.—शरीरमें तलवार (का घाव) लगनेपर मलहम पट्टीसे पीड़ाका उपाय हो सकता है परन्तु जो जीभ के घाव हैं उनकी रत्तीभर भी दवा नहीं।

१८—आदर भाव

१—विगसै—खिल जाता है। कुमलाय—कुम्हलाता है।

३—भाव—मानसम्मान। कुसळ—कुशलक्षेम। खेम—क्षणिक नाम।

४—मोठ—एक साधारण अन्न। व्यंजन—पकवान। जीमणवाळा ठो०—उनके जीमनेवाले मूर्ख हैं।

५—माठी—मामूली [illegible] भोजन। आवै—मनमें अहंकार आवे तो।

हंसा तो छव लग चुगै जब लग देवै लाग ।
लाग-विहूणा जे चुगै हंस नहीं वे काग ॥ ६ ॥
उठे न आदर-आव हित चितभाव न हुवै हुलस ।
परत न दीजै पाव मन तूटां-पर मोतिया ! ॥७॥८६॥

१९—धन-महिमा

धनवाळां रै धाम जाण बिना जावै स जन ।
निरधणियांरो नाम कोइ न पूछै, किसनिया ! ॥ १ ॥
कोडी बिन कीमत नहीं सगा न राखै साथ ।
हुवै ज नाणो हाथमें बैरी बूझै बात ॥ २ ॥
दामतणूं दोलत वधै दोलत आवै द्वार ।
जस होवै सब जगतमें जोबन आवै जोर ॥ ३ ॥
दालद घर दाळो हुवै परणी नावै पास ।
रुपिया हावै रोकड़ा सोरा आवै सास ॥ ४ ॥
कळजुगमें कळदार बिन मायां पड़ियो मेव ।
जिण घर माया जारमें दरसण आवै देव ॥ ५ ॥

६—लाग—प्रेम । विहूणा – बिना, रहित ।

७—हित—प्रेम । हुलस—आनन्दित होकर । परत—प्रत्यक्ष, भूलकर भी । मनतूटां—जिनके मनमें प्रेम नहीं रह गया है उनके ।

१९—धन महिमा

१—जाण—जान-पहचान । निरधणियांरो—निर्धनोंका ।

२—कोडी—धन । सगा—सगे सम्बन्धी । हुवै—यदि हो । नाणो—रुपया ।

४—दालद दारिद्र्य । दोळो हुवै—चारों ओरसे घेर लेता है तो । परणी—स्त्री । नावै (न आवै)—नहीं आती है । रोकड़ा—नकद । सोरा—सुखपूर्वक ।

५—कळदार—कलदार, रुपया । मायां—मायामें । मेव—मेर पर्ण ।

हरी सिरजाया बहु सिरख्या सिख-सिख पाल्या अेक ।
राई घटै न तिल बधे यहु, र जोय निसक ॥ २ ॥
नहचै होय निसक चित महु मीजे चळ-विचळ ।
अै विधनारा अंक राई घटै न राजिया ! ॥ ३ ॥

सम्मन सपत-विपतमें जे मूरे ते कूर ।
मासा घटै न तिल बधे जे लिप लिख्या अंकूर ॥ ४ ॥
उद्दम करो अनेक अथवा अण-उद्दम करो ।
होसी निहचै हेक राम करै सो राजिया ॥ ५ ॥

अणहाणी होवै नहो होणी हो सो होय ।
मास मैणप भर त्रोड़ बुध कर देखो सम कोय ॥ ६ ॥
सा वैरी कटवण मिलै मस्तक लिख्या सो होय ।
मेख लिख्यासूं बाल्हा ! मट न सकै कोय ॥ ७ ॥
हिम्मत करो हजार गजपतियाँ पाको पणा ।
धीरज मिलसी धार करम-प्रमाणे किसनिया !॥ ८ ॥

२—हरी—भगवान । बेह—विधि विधाता । पाल्या अेक—पैदा करके ।
३—नहचै—निश्चय । नह—नही । चळ-विचळ—विचलित । अै—वे ।
४—कूर—नीच । मासा—अेक तोलेका बारहवाँ हिस्सा । अंकूर अक्षर ।
५—उद्दम—पुरुषार्थ । अण-उद्दम क०—उद्योग न करो । होसी—होगा ।
हेक—अेक ।
६—मैणप—सयानपन चतुराई । त्रोड़—करोड़ । बुध-बुद्धिमानी ।
७—सौ—सैकड़ो । कटवण—बुरा करनवाले ।
८—हिम्मत—युक्ति । पणा—बहुत । धीरज ध०—भाग्यके अनुसार मिल
ही जायगा अतः धीरज रखो ।

सोना घड़े सुनार कठाई घाता करै।
मोती नामण-हार करम-प्रमाणे निसनिया ॥ ९ ॥

दास भयो मुख पकड़ है, हाथ कामकूं रोम।
नामहोणकूं ना मिळे भलो सुसतको भाम ॥१ ॥

कहाँ कासी कहाँ कासमिर कहाँ जिसा गुजरात ?।
दाणो-पाणी परसरा ! बाँह पकड़ ले जात ॥११॥

परानवपना पावणा देख कईरा खेस।
मम्मीखमनी मक जर हडूमानने देख ॥१२॥१८॥

२१—उपाग

राम कहै सुगरीवने लंका केती दूर ?
आळसियाँ अळगी घणी उद्यम हाथ हजूर ॥ १ ॥

उदैराज उद्यम किय़ाँ सब सुख होवे त्यार।
गाय-भैस कुण्डमें मही दूध पिवे मजार ॥ २ ॥११ ॥

२२—गरज (स्वार्थ)

हुवी गरज मन और था मिटी गरज मन और।
उदैराज मनकी प्रकृति रहै न श्रेकी ठौर ॥ १ ॥

९—कठोई—कमाई।

१२—परानवप इ०—मारम्भसे प्रसिद्ध खाती है। कई—विपक्षा। मम्भीखम इ०—समीरज। हडूमान इ०—हनुमानजीके तेल-सिंदूर चढ़ते हैं।

२१—उपाय

१—आळसियाँ इ०—आळसियोंके लिये बहुत दूर है और उद्यम करनेवालोंके लिये हाथोंके पास है।

२—किय़ाँ—करने से। त्यार—तय्यार। मंजार—मार्जार, बिल्ली।

२—गरज

१—हुवी इ०—(जब गरज) थी तब। प्रकृति—स्वभाव। एकी—एक ही।

मतलबरी मनवार चुपकै लावै चूरमो।
मतलब विन मनवार राबनपावै राजिया! ॥ २ ॥
गरज-दिवांणी गूजरी अब आयी घर चूंध।
सावण छाछ न घालती जेठ परुसै दूध ॥ ३ ॥११३॥

२३—अवसर-नाश

समझदार सुजाण नर ओसर चूकै नहीं।
ओसररो ओसाण रहै घणा दिन राजिया! ॥ १ ॥
बधू विदेसां उठ गया तरुणी तज्या सनेह।
तृखी नास पसु मर गया (अब) वूठा बरसो मेह ॥ २ ॥
आधा रहम्या ऊंजळी आधो रहम्यो छाज।
सांगर-सटै घण गयी (अब) मथरा-मथरो गाज ॥३॥

२—मनवार—मनुहार। चूरमा—एक मिष्ठान्न। चुपकै—चुपचाप। राब—राबड़ी, मट्ठे में आटा डालकर पकाया हुआ एक भोजन। पावै—पिलाता है।

३—गरज दिवांणी—गरज से दीवानी बनी हुई। गूजरी—अहीरिन ग्वालिन। छाछ—मट्ठा। घालती—डालती देती। परोसै—परोसती है देती है।

२३—अवसर नाश

१—ओसर—अवसर। ओसाण—अहसान। घणा—बहुत।

२—तरुणी—स्त्री। अब इ०—अब इतनी बर्बादी हो चुकी तब फिर चाहे मूसला ही मेह बरसे तो भी क्या काम!

३—ऊंजळी—ओखलीमें। छाज—सूर्प। सांगर—शमी पेड़की फलियां, साधारण निकृष्ट खाद्य। सटै—बदले। सांगर इ०—अकालमें मैंने तो सांगरियोंके लिये पत्नीको बेच दिया अब हे बादल, चाहे तू मीठे स्वरसे गरज, मुझे क्या काम!

तन छीजै जोबन हटै घटै वयस धन धर्म ।
मवगत पसगत अेक-सी ज्यांमें हया न धर्म ॥ ५ ॥
दारू-परदारा पूंछूं है तन-धनरी हाँण ।
नर ! सांप्रत देखो नजर नफो और नुकसाण ॥६॥१२३॥

२५—हिंसाकी निंदा

जीव मार हिंसा करै खाता करै बखाण ।
पापा परतख देख ले थाळीमें समसाण ॥ १ ॥
खुस खाणा है खोपड़ो मांहि दुभिख्यक लूण ।
मांस पराया खायके गळा कटावै कूण ॥२॥१२४॥

२६—परस्यां विना

नीर-तीर बकके पकड़ा घोर न मारे मीन ।
निकट रहे पम है विकट परस्यां विना प्रवीण ? ॥ १ ॥
ग्रीषम गिर लाग्या जरन सरवर निकट पुलीन ।
बूझेगो कैसे विपिन परस्यां विना प्रवीण ? ॥ २ ॥

५—वयस—उम्र । पस-गत—पशुकी हालत । हया—लज्जा ।

६—हाँण—हानि कारक । सांप्रत—प्रत्यक्ष । नफो—लाभ ।

२५—हिंसाकी निंदा

१—खाता—खाते हुए । पीपा—कविका नाम । परतख—प्रत्यक्ष । समसाण—मसान ।

२—खुस—खुशका । लूंण—नमक । कूंण—कौन ।

२६—परस्यां विना

१—निकट रहे—पास है तो भी । पम है विकट—परन्तु कठिनतासे मिलता है । परस्यां विना—बिना छूये ।

२—गिर—पहाड़ । पुलीन—किनारा । विपिन—वन (की अग्नि) ।

गंगा जमना सरसुती सहर त्रिवेणी सीन ।
निकट गया पातक रया परस्यां विना प्रवीण ॥ ३ ॥
भीमपळ बीणा मुरज भरया सरस रसभीन ।
मधुरे सुर वाजै नहीं परस्यां विना प्रवीण ॥ ४ ॥
लोह-पुंज इलको भरया इत पारस-मणि दीन ।
सो कंचन कैसे बणै परस्यां विना प्रवीण ॥ ५ ॥
अमरितको भाजण निकट भरयो भरयो नही पीन ।
यूं देख्यां अमर न भया परस्यां विना प्रवीण ॥ ६ ॥
केसर, चंदण कुमकुमा भरया कटोरा तीन ।
मन रंग लागै नहीं परस्यां विना प्रवीण ॥ ७ ॥
भोजन भांत्या थाळ भर कर पकवान नवीन ।
तऊ छुधा भाजै नहीं परस्यां विना प्रवीण ॥ ८ ॥
निकट सुरो-सुराहरया श्याम-मुर्जंग इस मीन ।
विख व्याप्यो उतरै नहीं परस्यां विना प्रवीण ॥ ९ ॥१३४॥

२७—अन्योक्तियाँ

हंसा ! सरवर ना तजो जे जळ खारो होय ।
डाबर-डाबर डोलतां भला न कहसी कोय ॥ १ ॥

१—रया—रह गये ।
५—इलको—ढेर । दीन—दी रखी ।
६—पीन—पिया । यूं द॰—दी चमक देखनेसे ।
—कुमकुमा—कुंकुम । भर्‌या—भरे । मन र —मन में न भाव ही नहीं उत्पन्न होता ।
९—मुर्जंग—साँप । व्याप्यो—व्याप्त हुआ ।

२७—अन्योक्तियाँ

१—ज—यदि यद्यपि । डाबर—तलैया । कहसी—कहेगा ।

माळी ग्रीसम मांय पोख घणो द्रुम पाळियो ।
जिणरो जस किम जाय जल घण वूठां ही भाया ! ॥ २ ॥
दूध-नीर मिळ जाय एक जिसी आकृत हुवे ।
करे न न्यारा कोय राजहंस बिन राजिया ! ॥ ३ ॥
हंसा था सो उड़ गया कागा भया दिवान ।
जा ब्रामण ! घर आपणे सिंघ केरा जजमान ? ॥ ४ ॥
न्याइ चोज सखा मेक भारिजके भेळा वसै ।
रसणी भँवरो एक रसकी जाणे राजिया ! ॥ ५ ॥
आयो तूं जिण देस जळ ऊँडा थोथा थळा ।
भँवरपणारो भेस रख्यो कठासूं राजिया ! ॥ ६ ॥
कबूतर, तूं अदभूत भायल ज्यूं भूमत फिरै ।
ब्रममें धोळा वेस किण कारण कूवे पड़े ॥ ७ ॥
सूवा सेमळ देखके सभी गमायी बुध्य ।
फूल देखके रस रह्या फळकी रही न सुध्य ॥ ८ ॥

२—ग्रीसम—ग्रीष्म ऋतु । पोख इ०—बहुत पुष्ट करके । जिणरो—उसका । जाय—नष्ट हो । जल इ०—(वर्षामें) बहुत वर्षा होनेपर भी । भाया—हे भ्रातृगधि ।

३—जिसी—वैसी समान । आकृत—आकृति, रूप ।

४—हंसा—हंस जो पहले दीवान था । बामण—हे ब्राह्मण । आपणे—अपने । केरा—किसके ।

५—न्याइ—मित्र । चोज—चौक । सखा—मक्खी । रसणी—प्रेमी । मेक—एकस मेक हो । रसकी जाणे—रसकी कदर कर सकता है ।

६—आयो इ०—जिस देशमें तू जनमा है वहाँ तो पानी गहरा और जमीन थोथी है यह रसिकताका रूप तूने कहाँसे प्राप्त किया ।

दादू, हंस मोती चुगै मानसरोवर न्हाय।
फिर-फिर बैसे बापड़ा काग करंकां माय ॥१६॥
हरिया जाणै रूंखड़ा उस पाणीका नेह।
सूका काठ न जाणई कबहूँ बूठा मेह ॥१७॥
मान-सरोवर मांय जळ प्यासा पीवै आय।
दादू, दोस न दीजिये घर-घर कहण न जाय ॥१८॥१५२॥

२८—सामान्य नीति

१

साँई। इस संसारमें भाँति-भाँतिका लोग।
सबसूँ रिळमिळ चालिये नदी नाव संजोग ॥ १ ॥
जुगमें मिलणा अजब है, मिल बिछड़ो मत कोय।
बिछड़्याँ मिलणा दुलभ है राम करै जद होय ॥ २ ॥

१६—बापड़ा—बेचारे। करंकाँ—हड्डियों या अस्थिपंजरपर।
१७—उस—अर्थात् जो बरसता है। जाणई—जानता है (गुण या महत्त्वको)।
१८—प्यासा इ —जिसे प्यास होती है वह स्वयं आकर पानी पी लेता है।

२८—सामान्य नीति

१—इस—इस। रिळमिळ—हिलमिलकर। नदी-नाव-संजोग—संसारमें सारे प्राणियोंका साथ ऐसा है जैसा नदी पार करनेके लिये तत्पर अनेक यात्रियोंका; उनमें कोई कहींसे आता है और कोई कहींसे, थोड़ी देरके लिये नावमें उनका साथ हो जाता है पर पार पहुँचते ही फिर सब अलग अलग हो जाते हैं।

२—जुगमें—संसारमें। अजब—अद्भुत बात। बिछड़्याँ—बिछुड़नेपर। दुलभ—दुर्लभ।

दरसण-परसण देह लग सज्जण मिलिये धाय ।
घट छूटाँ काढू नहीं, कोण मिलैसो आय ? ॥ ३ ॥
मिलणा जोग संजोगका अपणे बस न बसाय ।
जद गोविंद किरपा करे जद ही मिलिये धाय ॥ ४ ॥
खाया सोई खरचिया दीया सो ही सथ्थ ।
जसवत धरिया ही रह्या माल पिराणे हथ्थ ॥ ५ ॥
खाणा-पीणा खरचणा ऐस खुसी आराम ।
करणा हो सो कर लेवो काळा केसाँ काम ॥ ६ ॥
ऊजड खेड़ा फिर बसै निरधणियाँ धन होय ।
बीत्या दिन नह बाहुड़ै मुवा न जीवै कोय ॥ ७ ॥
जनम अकारथ ही गयो भड-सिर खग्ग न भग्ग ।
तीखा तुरी न माणिया गोरी गळै न लग्ग ॥ ८ ॥
इण हिंदवाणै मांयनै खाणो-पीणो खूब ।
आखर नह रहणो अठै मर ज्यासी महबूब ॥ ९ ॥

३—देह लग—जब तक शरीर है तभी तक। सज्जण—सज्जनसे। घट छूटाँ—शरीर छूटनेपर। कोण—कौन।

४—अपणे इ० —अपने वशकी बात नहीं। जदही—तभी।

५—धरिया इ० —धरे ही रहे। पिराणे—पराये।

६—ऐस—ऐशो-आराम। खुसी—खुशी। करणा इ०—जो कुछ करना है सो बुढ़ापा आनेके पूर्व ही कर लो। काळा केसाँ—जब तक केश काले हैं तब तक।

७—ऊजड इ० —उजड़े गाँव। निरधणियाँ—निर्धनोंके। बाहुड़ै—लौटते हैं। बीत्या—बीते हुए। मुवा—मरे हुए।

८—अकारथ—व्यर्थ। भड सिर—योद्धाओंके सिरपर तलवार नहीं तोड़ी। तीखा तुरी—तेज घोड़े। माणिया—मौजसे आनंद उठाया। गोरी—सुन्दरी।

९—हिंदवाणै—हिंदुस्तानमें। आखर—अंतमें। नह—नहीं।

सूत मथेड़ो काम पैसारी माडी परे ।
मा मनसुगती माम रडके चितमें राजिया ! ॥१८॥

चवण पड्यो चमार-घर नित उठ कूटै चाम ।
चंदण बिचारो क्या करै पड्यो नीचसूं काम ॥१९॥

डूंगर जळती लाय जोवै सारो ही जगत ।
प्रजळती निज पाय रती न सूझै राजिया ! ॥२०॥

ऊंचै गिरवर आग जळती सौ देखै जगत ।
पग जळती निज पाग रती न सूझै राजिया ! ॥२१॥

मन्मथ करपो मत कामणी चोड़ाँ री बेसाह ।
आडा कदेयक आवसी भारकसी बहुताह ॥२२॥

आक भटूके पवन भख तुरियाँ आमक चाम ।
हूं तनै पूछूं सायबा ! हिरण किसा री लाम ? ॥२३॥

राव रती तो ब्यार रख मत राखी बालीस ।
भै पीसीसूं मामणा ले प्यारकै बालीस ॥२४॥

१८—पसारी—अनकी वासरे वोनोंकी किनसे हमारा कोई रतन नहीं। परे—सामने उस ओर। मनसुगती—अनुचित बात। रडके—खटकती है।

२०—डूगर—पहाड़पर जलती आगको सारा संसार देखता है पर अपने पैरोंके पास जलती हुई किसीको जरा भी नहीं दिखाई देती।

२२—हे कामिनी ! घोड़ोंको भी ऐसे समय न मन्मथ मत करना कभी वक्त समय ये कभी काम देंगे। भार—बोझ डाकुओंका पीछा करना।

२३—पत्नी उसरके कथनका उत्तर देती है—हे पति ! मैं तुमसे पूछती हूँ हिरण कौन की खाते हैं ? वे तो आकके पत्तों और हवापर ही गुजारा करते हैं और फिर भी घोड़ोंसे आगे निकल जाते हैं।

२४—राव—हे राजा। राखी—रखना। मामणा—मामनवाले। बालीस—बालीश नादान।

पंचमरी पुटकी भली माड़ो भलो न काठ ।
पातर तो अेक ज भलो मूरख भला न साठ ॥३२॥
जग-जगरे मुख जोय नहचै दुख कहणो नहीं ।
काढ न दे चित कोय रीतांमांसू राजिया ! ॥३३॥
बांका रहग्यो बालमा बांका आदर होय ।
बांका बनका साकड़ा काट न सकै कोय ॥३४॥
बणा सरस बणियै नहीं देखो ज्यूं वनराय ।
सीधा-सीधा काटतां बांका तरु बच ज्याय ॥३५॥
पवर विरोधी अगनजळ सै निज काज सुधार ।
पवर विरोधी मणियां सुपह काज सै सार ॥३६॥
पगबै पोखतांह करड़ापण सै कोड करै ।
भोरांमें भेंसतांह, आंसू आवै ईसिया ॥३७॥
कहणी मीठी खांड-सी करणी विख-सी होय ।
पै कहणी करणी हुवै विख ही अमरित होय ॥३८॥

३२—माड़ो इ —काटमें भरी हुई गाळी भी अच्छी नहीं । पातर—चतुर ।

३३—जग-जगरे इ०—प्रत्येक आदमीकी ओर देखकर निश्चय ही अपना दुख नहीं कहते फिरना चाहिअे । रीतापूर्वक खोलेसे कोई मन निकालकर नहीं दे देता ।

३४—बांका—टेढ़े । बालमा—हे प्यारे ।

३५—सरस—सीधे । वनराय—वनराजि, जंगल ।

३६—पवर—प्रबल । अगनजळ—अग्नि और पानी । सै इ०—अपने काममें लाता है । मणियां—मणियोंसे । सुपह—अच्छा मालिक । सै सार—बना लेता है ।

३७—पगबै इ०—महलोंमें सोते हुअे तो सभी अभिमान करते हैं पर जब पीसीमें चलना पड़ता है तो आँसू निकल आते हैं ।

कहणी प्रभु रीझै न कछु, रहणी रीझै राम ।
सपनैरी सो मोहरसूं कोडी सरै न काम ॥३९॥

लाज रखै ता जीव रख लाज बिन जीव न रख्ख ।
सांई तोमूं बीनती दोऊं भेळी रख्ख ॥४०॥

लाजां सपत पाइये लाजां मोटा मान ।
लाज-बिहूणा मानवी ज्यांरा लांबा कान ॥४१॥

माहू नहीं मज्जा नहीं नहीं रस नहिं राग ।
ते मानस इम छंडिये जिम अधारे माग ॥४२॥

कदे न नावे बाय आमारी तिस आमल्यां ।
छांगियां पर छाय मार न आवे नामिया ! ॥४३॥

बड़ा भया तो क्या भया जैसे पेड़ खजूर ।
बैठणनूं छाया नहीं फल लागे अत दूर ॥४४॥

माया मिली तो क्या भया हिवड़ा भया कठोर ।
ना नेजा पाणी चढ्या तोय न भीजी कोर ॥४५॥

३९—रहणी—रहनका ढंग । सपनरी ०—सपनेमें पाये हुये हजारों मुहरोंसे एक कौड़ीका काम भी नहीं निकल सकता ।

४०—सांई—हे भगवान । भेळी—एक साथ । दोऊं—दोनों ।

४१—लाजां—लज्जासे । मानवी—मनुष्य । ज्यांरा ०—उनके गधे जैसे कान हैं (? गधे हैं) ।

४२—माहू—मर्यादा (का ध्यान) । मानस—मनुष्य । इम—ऐसे । अधारे—अंधेरे ।

४३—कदे ० कोई आदमी प्यासा हो [illegible] नहीं बुझ सकता, इसी प्रकार यदि अपना [illegible] (का [illegible]) [illegible] ?

४५—हिवड़ा—हृदय । नेजा—भाला, [illegible] । तोय—तो भी ।
कोर—छोर ।

जगमें दाठो जाय हुक प्रगट बिमहार म्हं ।
काम न मादा कोम राटी मोटा राजिया ! ॥७९॥

मिहमी कर हरि सार, हरने दध दीधा जहर ।
जादर इधकार गमें सारा राजिया ! ॥८०॥

थोबा मुट्ठी धान मांगे ज्यांने ना मिने ।
पट वाते पकवान ना-ना करतां नापिया ! ॥८१॥

भादा हुवे उमराव हियाफूट ठाकर हुवे ।
जड़िया लोह जड़ाव रतन न फावे राजिया ! ॥८२॥

दीस्यां देय न माल पूस्यां पट बेठो करे ।
ज्यां ठाकरसी पाल रती न भावे राजिया ! ॥८३॥

गुण बिन ठाकर ठोकरो गुण बिन मीत गंवार ।
गुण बिन चदन लाकड़ी गुण बिन नार कुनार ॥८४॥

चौसठ दीवा हू सही बारा रवी उगंत ।
घार अंधारो तिण घरे जिण घर सुत न रमंत ॥८५॥

७९—जाय—देखकर । दीठो—देखा । भेद—भेद । म्हं—हममें ।

८०—हरि—विष्णु । सार—चीज । हरन—दिखने । दध—उदधि समुद्र । इधकार—उदार, सम्मान ।

८१—जो मांगता है उसे थोड़ा सा मुट्ठी भर धान भी नहीं मिलता पर ना-ना करनेवालेके लिये लोग अनेक पकवान निकालकर रखते हैं ।

८२—जड़िया इ —लोहेमें जड़े हुये रत्नोंकी तरह शोभा नहीं देते ।

८३—जो दीखनेपर इनाम नहीं देता पर कोई भूल होनेपर तुरंत सजा [illegible] हो जाता है उस ठाकुरके लिये किसीमें रत्ती भर भी प्रेम नहीं होता ।

८४—ठीकरा—ठिकरा । लाकड़ी—साधारण लकड़ीके बराबर ।

८५—चौसठ—चौसठ । दीवा—दीपक । बारा रवी—बारह सूर्य । रमंत—खेलता है ।

(२)

सिरस न बाज्यो बाजरो अदरा न बूठ्या मेह ।
जोबन न जायो बेटड़ो तीनूं हारी देह ॥८६॥

नींद न आवै तीन जण कहो सखी कै क्याह? ।
प्रीत-बिछोया बहु-रिणा खटकै बैर हियाह ॥८७॥

रण चढ़ण कंकण बंधण पुत्र बधाई चाव ।
ऐ तीनूं दिन त्यागरा कहा रंक कहा राव ॥८८॥

धन जातां धर पलटतां त्रिया पड़ंतां ताव ।
ऐ तीनूं दिन मरणरा कहा रंक कहा राव ॥८९॥

मांग्या मिळै न च्यार पूरब पूरा दत्त बिन ।
बिद्या बर घर नार, सपत गेह, सरीर सुख ॥९० ॥

८६—मृग-नक्षत्रमें हवा नहीं चली आर्द्रा-नक्षत्रमें पानी नहीं बरसा और यौवन अवस्थामें पुत्र उत्पन्न नहीं किया तो ये तीनों व्यर्थ ही हुओ।

८७—तीन मनुष्योंको निद्रा नहीं आती। हे सखी, कहो वे कौन हैं। अेक तो प्रेमका बिरही दूसरा बहुत कर्जवाला, और तीसरा जिसके हृदयमें वैर खटक रहा है।

८८—क्या रंक और क्या राजा—सबके लिये ये तीन दिन दान करनेके हैं—(१) जब युद्धके लिये चढ़ना हो (२) जब विवाह-कंकन बँधे और (३) जब पुत्रोत्पत्तिकी बधाई तथा उत्सव होते हों।

८९—क्या रंक और क्या राजा—सबके लिये ये तीन दिन मरनेके हैं—(१) जब धर्म जाता हो, (२) जब अपनी जमीन हाथसे जाती हो और (३) जब स्त्रीपर विपत्ति पड़ती हो।

९०—पूरब पूरा—पूर्वके पूरे सुकृतोंके बिना। दत—दान। बर—अच्छी

नाज पुराणो घी, नयो आज्ञाकारी नार।
पथ तुरी चढ़ चालणो पुन्न-तणा फळ च्यार ॥११॥

साठी चावळ भैंस दुध घर सिलवती नार।
चौथी पीठ तुरंगरी सुरग-निसाणी च्यार ॥१२॥

लूखो भोजन भू सुवण घर कळहारी नार।
चोथा फाटया कापड़ा नरक-निसाणी च्यार ॥१३॥

कासर खेत कमूत हळ घर कळहारी नार।
मैला जिणरा कापड़ा नरक-निसाणी च्यार ॥१४॥

मीठा बोलण नवि चलण परआगण ढकि लीन।
तीन्यूँ भगा नामका चौथो हत्थां दीन ॥१५॥

धन जोबन अर ठाकरी तिण ऊपर अविवेक।
ऐ च्यारूँ भेळा हुवै अनरथ करै अनेक ॥१६॥

११—तुरी—घोड़ा। पुन्न तणा—पुण्यका।

१२—दुध—दूध। सिलवती—शीलवती, सुशीला। पीठ—अर्थात् सवारी। सुरगनिसाणी—स्वर्गके लक्षण।

१३—लूखो—रूखा। भू सु०—भूमिपर सोना। कळिहारी—कलहप्रिया। कापड़ा—कपड़े हुये।

१४—कासर—ऊसर। कमूत—सीधा न चलनेवाला। कळहारी—कलह करनेवाली। कपड़ा—कपड़े। निसाणी—चिन्ह।

१५—नवि चलण—नम्र होकर चलना। पर ढ —दूसरेके दोषोंको छिपा देना। तीन्यूँ भ०—मानो कहते हैं कि तीनों अच्छे हैं। हत्थां दीन—हाथसे देना।

१६—ठाकरी—ठकुराई, प्रभुता। भेळा—भेकट्ठा।

सीतळ पातळ मन गत अलप अहार, निरोस । —
अै तिरियांमें पांच गुण अै तुरियांमें दोस ॥९७॥

(३)

बळ्ळ्या तो दीपक भला टळ्ळ्या भला विघन्न ।
गळ्ळ्या तो बैरी भला बळ्ळ्या भला सुदिन्न ॥९८॥
चावळ तो चढ़ियो भलो पड़ियो भलो न मेह ।
आम्या तो बैरी भलो साम्यो भलो न नेह ॥९९॥
रिण तूटा सूरा भला फाट्या भला कपास ।
भागा भला अबोलणा भागा चवण-वास ॥१००॥
माता तो मैंगळ भला ताता भला तुरंग ।
घाता तो बैरी भला राता भला न रंग ॥१०१॥
बैयण तो काचा भला पाकी भली अनार ।
ग्रीखम तो पतळा भला जाडा जाड सिंगार ॥१०२॥
काचर, पेळो आम फळ पीव मिंत परधान ।
इतरा तो पाका भला काचा कोइ न काम ॥१०३॥

९७—सीतळ—शीतळ स्वभाव । पातळ—पतला होना । गत—चाल । निरोस—रोस न आना । अै—ये । तिरियाँ—स्त्रियाँ । तुरियाँ—घोड़ों ।

९८—बळ्ळ्या—जलते हुये । टळ्ळ्या—दूर होते हुये । गळ्ळ्या—नाश होते हुये । बळ्ळ्या—लौटते हुये । सुदिन—अच्छे दिन ।

९९—चढ़ियो—चढ़ा हुआ (इस अवस्थामें चावल पकाया जाता है) ।

१००—रिणमें—युद्धमें हत या आहत । अबोलणा—शत्रु । वास—सुगन्ध ।

१०१—माता—मस्त । मैंगळ—हाथी । ताता—तेज । राता—लाल ।

१०२—जाडा—मोटे ।

१०३—काचर—कचरी । पेळो—[illegible] । पीव—पति । परधान—कामदार, दीवान । इतरा—इतने । पाका—पक्के, यहाँ अर्थ के दृढ़-स्नेही, दृढ़ अनुभवी ।

(४)

सरवर सारू पाळ रहै पिंड सारू परकत।
कर सारू कीरत रहै, मन सारू मरकत ॥१११॥

सोना काम्या न नीपजै मोती न लागै डाळ।
रूप उधारा ना मिलै भूल्या फिरो गमार ॥११२॥

चिंतामें बुध परखिये टोटै परख त्रियाह।
सगा कुवेळां परखिये ठाकर गुन्हो कियाह ॥११३॥

भूख न जाणै भावतो प्रीत न जाणै जात।
नींद न जाणै साथरो ज्यां सूता त्यां रात ॥११४॥

देवो भलो न बापरो बेटी भली न एक।
पैंडो भलो न कोसरो साहब राखै टेक ॥११५॥

सोरठियो दूहो भलो भलि मरवणरी बात।
जोबन-छायी धण भली तारां छायी रात ॥११६॥

१११—सारू—समान, अनुसार। परकत—प्रकृति। कर—हाथ, दान। मरकत—मरकत।

११२—काम्या—बोनेसे।

११३—बुध—बुद्धि। टोटै—धन-नाशके समय। सगा—सम्बन्धी। कुवेळां—आपत्तिके समयमें। ठाकर—मालिक। गुन्हो—अपराध करनेपर।

११४—भावतो—मन भाता अन्न अच्छा है या नहीं। साथरो—सेज। सूता—सोये।

११५—देवो—देना, ऋण। पैंडो—चलना। साहब—परमात्मा। टेक—लाज।

११६—सोरठियो—सोरठका। मरवण—ढोला मारवणकी। बात—कहानी। छायी—भरी हुई। धण—स्त्री।

सोरठियो दूहो भलो भाड़ो भलो कुमेत ।
नारी तो नवली भली कपड़ा भलो सुपेत ॥११७॥

रागाँ मीठी सोरठी चौपड़ मीठी सार ।
सेजाँ मीठी कामणी रण मीठी तलवार ॥११८॥

ओछाँरी बैठक बुरी पर-आँगणरी छाँय ।
थोरेरो रसियो बुरो नित उठ पकड़ै बाँय ॥११९॥

ग्यारस गोरी गंगजळ मोखम भला न बीर ।
बसबो तो प्रठको भलो मरबो गंगा-तीर ॥१२ ॥

नितरो भलो न बरसणो नितरी भली न धूप ।
नितरो भलो न बोलणो नितरी भली न चूप ॥१२१॥

मोराँ बिन डूँगर किसा मेह बिन किसी मलार ? ।
तियाँ बिना तीजाँ किसी पिव बिन किसा तिवार ? ॥१२२॥

कंथ बिना काँई कामणी सरवर बिन काँई नीर ? ।
सास बिना काँई सासरो बाँव बिना काँई बीर ? ॥१२३॥

क्या पाणीका बुदबुदा क्या बालूकी भीत ? ।
क्या ओछेका आसरा क्या दुरजणकी प्रीत ? ॥१२४॥

११७—कुमेत—स्याही लिये लाल रंगका घोड़ा । नवली—नवयुवती । सुपेत—सफेद ।

११८—सोरठी—सोरठ राग । चौपड़—चौसर । सार—गोटें ।

११९—पर-आँगण—दूसरेके आँगनकी । थोरेरो—पाजीका । रसियो—प्रेमी । बाँह—हाथ । सासरो—ससुराल ।

१२०—ग्यारस—एकादशी । गोरी—स्त्री ।

१२२—डूँगर—पहाड़ी । किसी—कौन-सी क्या । मलार—एक राग । तीजाँ—सावनकी तीजोंके त्यौहार । सासरो—ससुराल । १२३—क ई—क्या ।

सूम न जाणै देव-जस सूम न जाणै माज।
मुगल न जाणै गउ-दया मुगल न जाणै मोज ॥१३३॥
मड़ बुगलैंमूं बीगड़ै बानरमूं वण-राय।
गांव कु-ठाकर बीगड़ै वस कपूतां जाय ॥१३४॥
रोळ बिगाड़ै राजने मास बिगाड़ै मास।
सनै-सनै सरदाररी मुगल बिगाड़ै पास ॥१३५॥
सूरज-बैरी गहण है, दीपक बैरी पौन।
जीको बैरी काळ है, आतां राखै कोण ? ॥१३६॥
मितरमूं अतर नहो बैरीमूं नहिं मेह।
प्रीतमसूं पड़दो नहीं जिम मिरखो सब देह ॥१३७॥
मदह बैरी पावळो जस—बैरो सेवाळ।
माणस-बैरी नींदड़ो माछां बैरी जाळ ॥१३८॥
ठग कामती ठेठ गुर, मुगल न कीजै सैण।
चोर न कीजै पाहरू मुहसपतीरा बैण ॥१३९॥

१३३—सूम— हजार रुपये गिनि मानेवाली ओक नीच जाति। देव जस—भक्तिरूपक मजन। मुगल—मुसलमान। माज—मुमानित।

१३४—मड़—बड़का पेड़। वणराय—जंगल। वस—नष्ट होता है।

१३५—रोळ—शासनप्रबंधका अभाव। मास—मौसमाव।

१३६—गहण—ग्रहण। पौन—पवन। आतां—आते हुओ।

१३७—अतर—पर्दा, दुराव। पड़दो—पर्दा, छिपाव।

१३८—सेवाळ—शैवाल घास। माणस—मनुष्य। माछां—मछलियोंका।

१३९—कामती—कामदार, प्रधान दीवान। ठेठ—मूर्ख। सैण—मित्र। पाहरू—पहरेदार। मुहसपती—बृहस्पति। बैण—वचन।

घोड़ाँ दूभर भादवो भैंसाँ दूभर जेठ।
मरदाँ दूभर पीसणो नारी दूभर पेट ॥१४ ॥
बातां रीझै बाणियो, रागाँसूं रजपूत।
बामण रीझै लाडवाँ बाकळ रीझै भूत ॥१४१॥
रागाँरो पति काल्हड़ो धरतीरो पति इंद।
तारांरो पति चन्द्रमा सजन पति गोविंद ॥१४२॥

(५)

जिथा मारग समँद-जळ ऊँच तणो आकास।
उत्तर-पथ र देसपत पार नहीं प्रिथुरास ॥१४३ ॥
सरणाई सुरसाहु, केसरि-कस भुजग-मणि।
पड़त हाथ मुवाह सती-पयोधर, कृपण-धन ॥१४४॥
साथ सती अर सूरमा त्यागी अर भगवंत।
उलट पूठ फेरे नहीं जो जुग जाय अनंत ॥१४५॥

---

१४ —दूभर—कठिन। भादवो—भाद्रपदका महीना। पेट—गर्भ।

१४१—बाणियो—बनिया। रागाँसूँ—रागसे। बामण—ब्राह्मण। लाडवाँ—लड्डुओं से।

१४२—इंद—इंद्र।

१४३—मारग—मार्ग। समँद—समुद्र। ऊँच इ—आकाशकी ऊँचाई। उत्तरपंथ—उत्तरदिशाका मार्ग। देसपत—मानकी शक्ति। पार इ०—इनका कोई पार नहीं।

१४४—वीरोंका शरणागत, सिंहके बाल, साँपकी मणि, पतिव्रताके स्तन और कृपणका धन—इनकी चीजें इनके मरनेके बाद ही दूसरोंके हाथ पड़ सकती हैं (दूसरों को मिल सकती हैं)।

१४५—उलट इ०—चाहे अनंत युग बीत जायँ तो भी पीछे नहीं हटते।

सिंघ-सँगम सुपुरस-वचन कदळि फळै इकवार ।
तिरिया तेल हमीर हठ चढै न दूजी वार ॥१४६॥
वस्या नेह, कुवार घन काती अंबर छार ।
पाछल पौर, अऊत घर, जात न लागै वार ॥१४७॥
पूनम चाँद कुसुंम रँग नदी-तीर द्रुम-डाळ ।
रत भीत भुस लीपणा अ थिर नहीं जमाल ॥१४८॥
दुतिया चाँद मजीठ रँग साध-वचन–प्रतिपाळ ।
पाहण रेख र करम-गत अे नहिं मिटत जमाल ॥१४९॥
बाँधो माग अभागियो मरबो मायावार ।
परख न चाखे पाधरा समझायो सौ वार ॥१५०॥
मोड़ा लकडा चामड़ा पहलाँ किसा बखाण ?
बहू बछेरा डीकरा नीमटियाँ परवाण ॥१५१॥
जाँ॰ जँवाई भाणजा रैबारी सोनार ।
इतरा कदे न आपणा कर देखो व्यवहार ॥१५२॥

१४६—तिरियातेल—स्त्रीके विवाहके समय तेल चढाया जाता है । हम्मीर—रणथंभौर का सुप्रसिद्ध चौहानवंशीय राजा । हठ चढणो—हठ पकड़ना ।

१४७—कुवार—क्वारी । काती—कार्तिक महीना । पाछल पोहर—पिछला पहर, संध्या । अऊत—कुपुत्र । जात—नाश होते ।

१४९—पाहण रेख—पत्थरपर बनाई हुई लकीर । करम-गत—कर्मोंकी गति ।

१५०—अभागियो—अभागा मनुष्य । मरबो—मरणासन्न । मायावार—धनवान । परख—भूलकर भी । पाधरा—सीधे ।

१५१—डीकरा—बच्चे । नीमटियाँ हुओ—अंत तक अच्छे रहें तो प्रशंसाके योग्य हैं पहले प्रशंसा करने से क्या ?

१५२—जँवाई—जामाता, दामाद । रैबारी—ऊँट चरानेवाली अेक जाति । आपणा—अपने ।

पाखो भैंसो अगन जळ ठग ठाकर, सोनार ।
इतरा होय न आपणा अज बानर कुंभार ॥१५३॥

आसक नट-साधन सती सूराँ सहवा सेल ।
पगाधड़ीरी बात नहिं, खराखरीको खेल ॥१५४॥

माटो-झूटो भी भलो छूटो भैंसो नार ।
विना तिलक बामण मिळै निहचै छूटो काळ ॥१५५॥

काचो पारो ब्रह्म-रस सिव-निर्मायळ खाय ।
माय कहै, रे बाळका ! जड़ामूळसूँ जाय ॥१५६॥

विद्या बिंदु, सनेह, धन नाखो जे न कुठाम ।
जे उण ठौड़ाँ नाखिया जे आवै फिर काम ॥१५७॥

क्या कामण क्या कवितरस क्या धानुकरा सरोह ?।
लोयण मन तन लागताँ सीस न धुणिये ज्याँह ॥१५८॥

१५३—पाखो—पीपलकी गोह । अज—बकरा ।

१५४—आसक—प्रेमी । सेल—भाले ।

१५५—निहचै—निश्चय ही । छूटो काळ—आयु समाप्त हो गई ।

१५६—ब्रह्म-रस—ब्राह्मणका धन । सिव-निर्मायळ—शिवजीके चढ़ा हुआ भेंट आदि । जाय—नाश हो जाता है ।

१५७—बिंदु—वीर्य । नाखो—डालो । कुठाम—अनुचित स्थानमें ।

१५८—वह कामिनी क्या जिसके आँखोंमें लगते ही सिर न धुनना पड़े वह कविता क्या जिसके मनमें लगते ही सिर (आनन्दके मारे) न धुनना पड़े, और वह धनुषका बाण क्या जिसके लगते ही सिर (पीड़ाके कारण) न धुनना पड़े ।

सेरां मदवां मायसां मळ्वी मांसळ रात ।
मोड़ चिड़ां पारेवड़ां तिस लागै परभात ॥१५९॥
चाकर चकवो चतर-नर निस-दिन रहत उदास ।
खर, गम्मू, मूरख पसू, सदा सुखी प्रिथुदास ॥१६०॥

(६)

पगा मादू पर रह्यां ओ तिन अवगुण होय ।
कपड़ा फाटै रिण वधै नाँव न जाणै कोय ॥१६१॥
जोबन वरस न खट्टिया ज्यां परदेसां जाय ।
गमिया यूँ ही दोहड़ा मिनख-जमारै आय ॥१६२॥
दीयेका गुण तेल है दीया मोटी बात ।
दीया जगमें चानणा दीया चालै साथ ॥१६३॥
जा मत पाछै संचरै सो मत पहली होय ।
काज न बिणसै आपणा दुरजण हँसै न कोय ॥१६४॥

१५९—मळ्वी ह—मध्यरात्रि बीतते समय। चिड़ां—पक्षियोंको। पारेवड़ां—कबूतरोंको। तिस—प्यास।

१६०—मिलाओ दूहा सामान्य नीति नं० ।

१६१—स्वस्थ पुरुषके घर बड़े रहनेसे ये तीन हानियाँ होती हैं—(१) कपड़ा फटते हैं (२) ऋण बढ़ता है और (३) नाम नाम भी नहीं जानता (इसलिये घर में न पड़े रहकर परदेश जाना चाहिए)।

१६२—जिन्होंने परदेश जाकर युवावस्थामें धन नहीं कमाया उन्होंने मनुष्य जन्म आकर दिन यों ही (व्यर्थ) गँवा दिया।

१६३—दीया—(१) दीपक (२) दिया हुआ (दान किया हुआ)। चानणा—प्रकाश उजाला। साथ इ०—मरनेके बाद साथ चलता है।

१६४—जो बुद्धि बादमें जाकर (काम बिगड़ने पर) आती है वह यदि पहले ही आ जाय तो न अपने कार्यका नाश हो और न शत्रु हँसी करें।

पाखो भैंसो मगन भळ ठग ठाकर, सोनार ।
इतरा होय न आपणा मग बानर, कुंभार ॥१५३॥
आसक नट-धायम सती सूरां सहबो सेस ।
अड़ाअड़ीमें बात नहिं, करामरीको बैस ॥१५४॥
माटो-कूटो भी बड़ो कूटां केसां नार ।
बिना तिलक आमण मिळे निहचै कूटो काळ ॥१५५॥
काचो पारो ब्रह्म-रस सिव-निर्माळ नाम ।
आप कहै, रे बाळका ! जड़ामूळसूं जाय ॥१५६॥
बिन्दु बिन्दु, सनेहु, धन गाडो में न कुठाम ।
में ठग ठोड़ां नाखिये पे आवै फिर काम ॥१५७॥
क्या कामण क्या कवितरस क्या धानुस्खधरांह ?।
सोमण मन तन लागतां सीस न धुणिये ज्यांह ॥१५८॥

१५३—पाखो—चौकसकी गोठ । मगन—भंवरा ।

१५४—आसक—प्रेमी । सेस—मारो ।

१५५—निहचै—निश्चय ही । कूटो काळ—आयु समाप्त हो गई ।

१५६—ब्रह्म-रस—ब्रह्मचर्यका धन । सिव निर्माळ—शिवजीके चढ़ा हुआ भोग आदि । जाय—नाश हो जाता है ।

१५७—बिन्दु—वीर्य । गाडो—जमा । कुठाम—अनुचित स्थानमें ।

१५८—वह कामिनी क्या जिसके आंखोंमें लगते ही सिर न धुनना पड़े वह कविता क्या जिसके सुननेमें आते ही सिर (आनन्दके मारे) न धुनना पड़े और वह धनुषका बाण क्या जिसके लगते ही सिर (पीड़ाके कारण) न धुनना पड़े ।

सेरां मदवां भायसां मछ्वी मांसाळ रात ।
मोड़ मिड़ां पारेवड़ां तिस लागे परभात ॥१५९॥
चाकर, चकवो चतर-नर निस-दिन रहत उदास ।
खर पम्मू, मूरख पसू, सदा सुखी प्रिथुदास ॥१६ ॥

(६)

घमा माद्द घर रह्यां अे तिन अवगुण होय ।
कपड़ा फाटे रिण वधे नांव न जाणे कोय ॥१६१॥
जोवन दरव न खट्टिया ज्यां परदेसां जाय ।
गमिया यूं ही दीहड़ा मिनख-जमारे आय ॥१६२॥
दीयेका गुण तैस है दीया मोटी बात ।
दीया जगमें चानणा दीया चाले साथ ॥१६३॥
जो मत पाछे संचरे सो मत पहली होय ।
काज न विणसे आपणो दुरजण हँसे न कोय ॥१६४॥

१५—मछ्वी इ०—मच्छरादि जीवोंके समय। मिड़ां—पक्षियोंको। पारे वड़ां—कबूतरोंको। तिस—प्यास।

१६०—मिलाओ दूहा सामान्य नीति नं ।

१६१—स्वस्थ युवकके घर पड़े रहनेसे ये तीन हानियां होती हैं—(१) कपड़े फटते हैं (२) ऋण बढ़ता है और (३) कोई नाम भी नहीं जानता (इसलिये घर में न पड़े रहकर परदेश जाना चाहिये)।

१६२—जिन्होंने परदेश जाकर युवावस्थामें धन नहीं कमाया उन्होंने मनुष्य जन्म लेकर दिन योंही (व्यर्थ) गंवा दिया।

१६३—दीया—(१) दीपक (२) दिया हुआ (दान किया हुआ)। चानणा—प्रकाश उजाला। साथ इ०—मरनेके बाद साथ चलता है।

१६४—जो बुद्धि बादमें जाकर (काम बिगड़ने पर) आती है वह यदि पहले ही आ जाय तो न अपने कार्यका नाश हो और न शत्रु हँसी करे।

भूम परक्खो हे नराँ ! कहा परक्खो नीर ?।
भुँय बिन भला न नीपजै कण तृण तुरी नरींद ॥१६५॥२१७॥
॥३३८॥

१६५—हे मनुष्यो भूमि (स्त्री) की परीक्षा करो वर की क्या परीक्षा करते हो (वरके लिये परीक्षा करके अच्छी कन्या ढूंढो कन्याके लिये अच्छे वरका ढूंढनेकी आवश्यकता नहीं—यदि कन्या अच्छी है तो वर चाहे जैसा हो। क्योंकि जबतक भूमि अच्छी नहीं होगी तबतक उससे उत्पन्न अनाज, घास घोड़ा और मनुष्य भी अच्छे नहीं हो सकते (अच्छे अनाज और घासके लिये अच्छी भूमिकी आवश्यकता है और अच्छे घोड़े और मनुष्यके लिये माताका अच्छा होना आवश्यक है)। भूमि—क्षेत्र खेत माता।

३ वीर

१—सामान्य

जननी ! जण अहड़ा जणे के दाता कै सूर ।
नातर रहजे बाँझड़ी मती गमाजे नूर ॥ १ ॥
इळा न देणी आपणी रण-खेतां भिड़ जाय ।
पूत सिखावे पालणे मरण-बडाई माय ॥ २ ॥
हूँ बळिहारी राणियाँ जाया बंस छतीस ।
सेर सलूणो चूर ले सीस करै बगसीस ॥ ३ ॥
आहव नै आचार वेळयाँ मन आगो बधे ।
समझ कीरती सार रँग छै ज्याँनै राजिया ! ॥ ४ ॥
झालर वाज्याँ भगतजन बंब वज्याँ रजपूत ।
अेताँ ऊपर ना उठै आठूं गाँठ कपूत ॥ ५ ॥

१—सामान्य

१—हे जननी ! यदि पुत्र जने तो ऐसा जनना जो या तो दाता हो या शूरवीर नहीं तो बाँझ रहना पर निकम्मे पुत्रको जनकर अपने यौवनको नष्ट न करना।

२—अपनी जमीन किसीको न देना और रणक्षेत्रमें भिड़ जाना—इस प्रकार माता पालनेमें ही (झूलते हुए) पुत्रको मरने की महिमा सिखाती है।

३—मैं राजपूत-रानियों—वीरनारियों—पर बलिहारी जाता हूँ जिन्होंने छत्तीस वंशके राजपूत वीरोंको जन्म दिया जो नमकके साथ सेर धूल लेकर अपना सिर मालिकके लिये दे देते हैं।

४—युद्ध और सदाचार पालनके समय जिनका मन, इन्हींको कीर्तिका सार समझकर, आगे बढ़ता है उनका धन्य है।

५—झालरके बजनेपर भक्त-जन और युद्धका नगाड़ा बजनेपर राजपूत उठ बैठते हैं। इनपर जो नहीं उठते वे पूरे कपूत हैं।

सिंघां देस-विदेस सम सिंघां किसा वतन्न ?
सिंघ जका वन संचरै वै सिंघांरा वन्न ॥ ६ ॥
केहर कुंभ विदारियो गज-मोती खिरियाह ।
जाणे काळे बादळां ओळा ओसरियाह ॥ ७ ॥
केहर हाथळ घाव कर कुंजर दियसो कीध ।
हंसां नग हरणूं सुधा चीत किराडां बीध ॥ ८ ॥
सादूळो वन संचरै करण मयंदां नास ।
प्रबळ सोच भंवरां पड़ै हंसां होय हुलास ॥ ९ ॥
खाल धणा कर पाखरा आयो महमें आप ।
सूतो नाहर नींद सुख पोहरो दियै प्रताप ॥१० ॥

६—सिंहोंके लिये देश और विदेश बराबर हैं। सिंहोंका कौन-सा स्वदेश होता है? सिंह जिन वनोंमें पहुंच जाते हैं वे ही वन सिंहोंके स्वदेश हो जाते हैं।

७—सिंहने हाथीका कुम्भस्थल फोड़ दिया जिससे गजमोती बिखर पड़े। ऐसा जान पड़ता है मानो काले बादलसे ओले बरसने लगे हों।

८—सिंहने अपनी हथेलीसे घात करके हाथीका वेर कम किया और हंसों-को मोती, महाजनोंको गज-चर्म और भीलोंको मवाद दिये।

९—मदोन्मत्त हाथियोंका नाश करनेवाला शार्दूल (सिंह) वन में फिर रहा है। भौंरोंको भारी चिन्ता होने लगी है और हंसोंको हर्ष हो रहा है (भौंरे मद खानेके लोभसे हाथियोंके मस्तकों पर रहते हैं—हाथियोंके मरनेसे उन्हें मद-जल नहीं मिलेगा इसलिये वे चिन्तित हो रहे हैं, और हंसोंको मोती मिलेंगे इसलिये वे हर्षित हो रहे हैं)।

१०—बहुत-से वीरों की पाखर बनाकर (अर्थात् बहुत-से वीरोंको मारकर) सिंह अपने वनमें आया और सुखपूर्वक निद्रा में सो रहा। उसका पहरा स्वयं उसका प्रताप देने लगा (उसके प्रतापसे भय पाकर कोई पशु उसे हानि

जो मूवा तो अत भला जो उबरया तो सार ।
बेहूं प्रकारां हे सखी ! मावळ घूमै बार ॥४१॥
ढोल बजंतां हे सखी ! पति आया मुझ लेण ।
बागां ढोलां हूं चली पतिरो बदलो देण ॥४२॥
सांईं मूं सांची रहूं, बाज बाज रे ढोल ! ।
पंचसमें मोरी पत रहै, सखियनमे रहै बोल ॥४३॥
पथी ! एक सँदेसड़ो पाबसनै कहियाह ।
थारां बाळ न बज्जिया टामक ट्हटहियाह ॥४४॥
घोर नगारो राजरो गहर भरियो गाजै ।
दोख्यांरा मन ओचकै सोख्यांरा छाजै ॥४५॥

४१—युद्धमें पति यदि मर गया तो बहुत अच्छा है और यदि बच गया तो फिर क्या कहना । हे सखी ! दोनों प्रकार से द्वारपर हाथी घूमेंगे (उत्सव होगा)।

४२—हे सखी ! विवाहके समय पति ढोल बजाता हुआ मुझे लेने आया था। आज मैं उसका बदला चुकानेके लिये ढोल बजाती हुई उसके साथ जा रही हूं (सती होनेके लिये)।

४३—हे ढोल ! तू बारबार बज मैं अपने स्वामीके प्रति सच्ची रहूं, पाँच लोगोंमें मेरी प्रतिष्ठा रहे और सखियोंमें मेरा नाम रह जाय।

४४—हे पथिक ! मेरा एक छोटा-सा सँदेसा प्रियसे जाकर कह देना कि मेरे बचपनके समय तो तुमने धामी भी नहीं बजाई थी पर आज मेरे लिये मोटे मोटे ढोल बज रहे हैं । (इस प्रकार तुम्हारा नाम भी मैंने समुज्ज्वल किया है ।)

४५—पत्नीका कथन वीरके प्रति—तुम्हारा गंभीर मादलका नगाड़ा गम्भीर स्वरसे गरज रहा है जिसको सुनकर शत्रुओंके मन चौंक उठते हैं और मित्रोंके मन उत्कण्ठित होते हैं ।

कंथा! रिणमें पैसतां तू मत कायर होय।
तुम्हे लज्जा मुझ महणो भलो न भाखै कोय ॥४६॥

सूरा! रणमें जायकै झाड़ा करो निसंक।
ना मुझ चढै रंडापणो ना तुझ चढै कलंक ॥४७॥

भागे मत तूं कंथड़ा! तो भाग्ये मुझ खोड़।
मोरी संग सहेलड़्यां ताळी दे मुख मोड़ ॥४८॥

अमल कपोळां ऊझळै होठां कसर रंग।
पीव! चढ़ै घर जांवतां सीस न लीजै संग ॥४९॥

कंथा! रणमें पैसिकै कोइ जुवै थे साथ?।
साथी थारै तीन है,–हियो कटारी हाथ ॥५० ॥

४६—हे कंत! रणमें प्रवेश करते समय तुम कायर मत हो जाना। इससे तुम्हें लज्जा उठानी पड़ेगी, मुझे ताना मिलेगा और कोई भी इसे अच्छा नहीं बतलायेगा।

४७—हे शूर! रणमें जाकर निश्शंक होकर हथियार चलाओ जिससे न तो मुझे वैधव्य भोगना पड़े और न तुम्हें कलंक लगे।

४८—हे प्यारे कंत, तुम युद्धभूमिमें जाकर मत भागना। तुम्हारे भागने से मुझे कलंक लगेगा—मेरी साथ की सहेलियाँ मुख फिरा फिराकर ताली बजायेंगी (मेरा उपहास करेंगी)।

४९—कपोलोंमें अफीम उछल रहा है और होठोंमें कसुंबिया रंग; हे प्रियतम! उस घरमें (युद्धभूमिमें) जाते समय सिरको साथमें नहीं लेना चाहिये।

५०—हे कंत! रणमें प्रवेश करते समय साथमें क्या देखते हो? तुम्हारे तीन बड़े भारी साथी हैं—वीर हृदय, कटारी और कटारी चलानेवाला हाथ।

२—वीर क्षत्राणीका उपालंभ

मतवाळा हो पोढग्या सुधबुध दोन्यूं भूल ।
पर-हाथाँरा हो गया यो हिवड़ामें सूळ ॥ १ ॥
दुसमण देसाँ लूटकर, लै ग्यावै परदेस ।
राजना चुड़ल्याँ पहर लो धरो जनानो भेस ॥ २ ॥
तनपर घाडो आकर, महलाँ बैठा जाय ।
अन्यायी दिन-दिन बढै जोर जमाता जाय ॥ ३ ॥
दूध लजायो मायरो कीनो देस गुलाम ।
कै सलाम सुण झेलता कर दिया खुद सलाम ॥ ४ ॥
कहाँ गई वा वीरता कहाँ रजपूती आन ? ।
टुकड़ाँरा मोताज हो खो बैठ्या अभिमान ॥ ५ ॥
रजपूती सत खो दियो सतहीणा सरदार ।
पतहीणा रजपूत हो मतहीणा भरतार ॥ ६ ॥
पराधीन भारत हुयो प्यालाँरी मनवार ।
मातभूम परतन्त्र हा बार-बार धिरकार ! ॥ ७ ॥

२—वीर क्षत्राणीका उपालम्भ

१—पोढग्या—सो गये । पर-हाथाँरा—पराधीन । हिवड़ा—हृदय । सूळ—शूल ।

३—महलाँ—महलोंमें जनानेमें । जोर इ०—अपनी प्रबलता और प्रभुता जमाते जाते हैं ।

४—मायरो—माताका । कै—या तो । झेलता—स्वीकार करते थे । कर इ०—स्वयं सलाम करने लगे ।

५—मोताज—मुहताज ।

६—हुयो—हुआ । प्यालाँरी—शराबके प्यालोंकी । मनवार—मनुहारसे (शराब पीते-पिलाते हुए) । मातभूम—मातृभूमि । धिरकार—धिक्कार ।

३—विशेष वीर

(क)—उदयपुर (मेवाड़)

१—महाराणा प्रतापसिंह

माई ऐहा पूत जण जेहा राण प्रताप ।
अकबर सूतो ओधकै जाण सिराणै साँप ॥ १ ॥
धर बाँकी दिन पाधरा मरद न मूकै माण ।
घणाँ नरिंदाँ घेरियो रहै गिरंदाँ राण ॥ २ ॥
पातळ राणा प्रवाड मल बाँकी भडा-बिभाड ।
खूँदाडे कुण है खुराँ तो ऊभाँ मेवाड ? ॥ ३ ॥
पातळ पाघ प्रमाण साँची साँगाहर-तणी ।
रही सदा लग राण ! अकबरसूँ ऊभी अणी ॥ ४ ॥
चोथो चीतोडाह ! बाँटो बाजंती-तणो ।
माथै मेवाडाह ! थारै राण प्रतापसी ॥ ५ ॥

३—विशेष वीर

१—हे माता ! जैसे पुत्रोंको जन्म दे वैसा राणाप्रताप है जिससे अक्खड प्रतापी सम्राट् अकबर सोता हुआ चौंक पड़ता है मानो सिरहाने साँप आ बैठा हो ।

२—उसकी भूमि अत्यन्त विकट है उसके दिन सानुकूल हैं वह वीर अपने मानको नहीं छोड़ता, वह राणा अनेक राजाओंसे घिरा हुआ पहाड़ोंमें रहता है ।

३—विकट शत्रुओंका नाश करनेवाले अद्भुतकर्मा वीर राणा प्रताप ! तेरे रहते हुए मेवाड़को कौन खुरोंसे रौंद सकता है ।

४—साँगाके वंशज प्रतापकी पगड़ी ही सच्ची और प्रामाणिक है जो अकबर के सामने सदैव सीधी खड़ी रही ।

५—हे चित्तौड़वाले ! बजती हुई घड़ियालका चौथा भाग (पावघड़ी अर्थात् पाघड़ी यानी पगड़ी), हे मेवाड़वाले राणा प्रताप ! तुम्हारे ही सिरपर है ।

तीतर लवा बटेर बर, गुस्सा सूर सिकार ।
इणहीं रजपूतो नहीं नाम सिंघ रखणार ॥ ८ ॥
सिंघ खाबो के मरण सो सरवरियारी थाह ।
कै करबौ सिंघ भाग सो भाभरियारी थाह ॥ ९ ॥
बीरपणो धारण करो मा कायरता छोड़ ।
बैरी लोहो मान ले मूँछो मेले मोड़ ॥१०॥
बस्त्र कसूमल पहर सो कसो कम्मर तलवार ।
बरछी और कटार से हूओ तुरंग-असवार ॥११॥
पाछा फिर मत झाँकज्या पग मत दीज्यो टार ।
कट भल जाज्यो खेतमे पर मत माज्यो हार ॥१२॥
धीज रावरी होय तो हूँ भी चालूँ साथ ।
दुसमण भी फिर देख ले म्हाँरा दो-दो हाथ ॥१३॥
यो सुवाग थारो सगी जद कायर भरतार ।
रंडापो लागे भलो होय सूर सिरदार ॥१४॥१४॥

८—इणहीं—इनमें। नाम र०—तुम तो 'सिंह' यह नाम धारण करने वाले हो (राजपूतोंके नामोंके अंतमें 'सिंह' पद होता है)।

९—सरवरिया र —सरोवरकी गहराईमें। कै—अथवा। थाह लो—थाह लो। भाभरिया र०—अंगारा पहन लो।

१०—लोहो मान लै—लोहा मान ले, पराक्रम मान ले। मूँछो र —मूँछ मोड़ लें नीचे किया दें।

११—कसूमल—कुसुमी रंगके।

१२—भल—भले ही चाहे। खेतमें—रणक्षेत्रमें। माज्यो—मानना।

१३—धीज—आज्ञा। रावरी—आपकी। हूँ—मैं। दो दो हाथ—दो दो हाथ करना, वीरताका युद्ध।

१४—यो सु —जब पति कायर हो तो वह सौभाग्य भी बुरा लगता है पर यदि वह शूरवीर हो तो वैधव्य भी अच्छा है।

महाराणा प्रतापका उत्तर

तुरक कहासी मुख पतै इण तनसूं, इकलिंग ।
ऊगै ज्यांही ऊगसी प्राची बीच पतंग ॥११॥
खुसी-हूंत पीथळ कमध । पटको मूंछाँ पाण ।
पछटण है जैते पतो कलमाँ सिर केवाण ॥१२॥
साँग मूंड सहसी स को समजस जहर सवाद ।
भड पीथळ जीतो भलाँ बण तुरकसूं वाद ॥१३॥

भाला दुरसा कृत—

अकबर घोर अँधार, ऊँघाणा हिंदू अवर ।
जागै जग-दातार पोहर राण प्रतापसी ॥१४॥
अकबर समँद अथाह, तिहँ डूबा हिंदू-तुरक ।
मेवाड़ो तिण माँह पायण-फूल प्रतापसी ॥१५॥

११—भगवान् अेकलिंग इस शरीर (अर्थात् जन्म) में प्रतापके मुखसे अकबरके लिये तुर्क शब्द ही कहलवायेंगे और सूर्य जहाँ उगता है वहीं, पूर्व दिशामें उगेगा।

१२—हे राठौड़ पृथ्वीराज ! खुशीसे अपनी मौंछोंपर ताव दो जबतक यवनोंके सिरपर तलवार पछाड़नेके लिये प्रताप जीवित है।

१३—यह प्रताप अपने माथेपर सभीका प्रहार सहेगा क्योंकि बराबरवालेका यश मनुष्यके लिये विष जैसा (असह्य) होता है। हे वीर पृथ्वीराज ! तुर्कके साथ वचनोंके विवादमें विजयी होवो।

१४—अकबर घोर अन्धकार है जिसमें दूसरे सब हिंदू निद्रा-मग्न हो गये। परन्तु जगतका दातार राणा प्रतापसिंह पहरेपर खड़ा जाग रहा है।

१५—अकबर गहरा समुद्र है। उसमें हिंदू और मुसलमान सभी डूब गये। परन्तु उस समुद्रमें मेवाड़का राणा प्रतापसिंह कमलके फूलकी भाँति ऊपर ही स्थित है।

मारूो अकबरियाह ! तेज तुहालो तुरकड़ा ! ।
नम-नम नीसरियाह, राण बिना सह राजवी ! ॥ ६ ॥

सह गावड़िये साथ एकण बाड़ै बाड़ियो ।
राण न मानी नाथ ताँडै साँड प्रतापसी ॥ ७ ॥

पहु गावड़िया पास भाखूझा अकबर भणी ।
राणो खिजै न रास अपटो साँड प्रतापसी ॥ ८ ॥

महाराज पृथ्वीराजका पत्र

पातल जो पतसाह बोलै मुख हूँतां बयण ।
मिहर पिछम दिस माँह ऊगै कासपराव-उत ॥ १ ॥

पटकूँ मूँछां पाण कै पटकूँ निज तन करद ।
दीजै लिख दीवाण । इण दो महली बात इक ॥ २ ॥

६—अरे तुर्क अकबर ! तेरा तेज अद्भुत है जो एक राणाके सिवाय सारे राजा झुक-झुककर तेरे सामनेसे निकले ।

७—अकबरने गायोंके सब साथको एक ही बाड़ेमें बन्द कर दिया पर राणा रूपी साँडने उसकी नाथ (नाकका बन्धन) को नहीं स्वीकार किया और बाहर घूमा कर रहा है ।

८—बैलोंके समान राजा लोग अकबरके पाशमें फँस गये परन्तु राणा-रूपी [illegible] साँड उसकी रस्सीमें नहीं फँसा ।

—यदि प्रताप मुँहसे अकबरके लिये बादशाह शब्द कहे तो [illegible] कश्यपका पुत्र सूर्य पश्चिम दिशामें उदय हो (जैसे सूर्यका पश्चिममें उगना असम्भव है वैसे ही प्रतापका अकबरको बादशाह कहकर पुकारना असंभव है) ।

२—हे मेवाड़के दीवान महाराणा ! मैं अपनी मूँछोंपर ताव दूँ अथवा अपने शरीरपर तलवार चला दूँ ? इन दोनोंमें से एक बात लिख दो ।

महाराणा प्रतापका उत्तर

तुरक कहासी मुख पतौ इण तनसूँ, इकलिंग ।
ऊगै ज्यांही ऊगसी प्राची बीच पतंग ॥११॥
खुसी-हूँत पीथळ कमध । पटको मूँछाँ पाण ।
पछटण है जेते पतो कलमाँ सिर केवाण ॥१२॥
साँग मूँड सहसी स को समजस जहर सवाद ।
भड़ पीथळ जीतो भलाँ बण तुरकसूँ वाद ॥१३॥

चारण दुरसा कृत—

अकबर घोर अँधार, ऊँघाणा हिंदू अवर ।
जागै जग-दातार पोहरै राण प्रतापसी ॥१४॥
अकबर समँद अथाह, तिहँ डूबा हिंदू-तुरक ।
मेवाड़ो तिण माँह पोयण-फूल प्रतापसी ॥१५॥

११—भगवान् एकलिंग इस शरीर (अर्थात् जन्म) में प्रतापके मुखसे अकबरके लिये तुर्क शब्द ही कहलायेंगे और सूर्य जहाँ उगता है वहीं, पूर्व दिशामें उगेगा ।

१२—हे राठौड़ पृथ्वीराज ! खुशीसे अपनी मूँछोंपर ताव दो जबतक यवनोंके सिरपर तलवार पछाड़नेके लिये प्रताप जीवित है ।

१३—यह प्रताप अपने मस्तकपर बर्छीका प्रहार सहेगा क्योंकि बराबरवालोंका यश मनुष्यके लिये विष जैसा (असह्य) होता है । हे वीर पृथ्वीराज ! तुर्कके साथ वचनोंके विवादमें विजयी होओ ।

१४—अकबर घोर अन्धकार है जिसमें दूसरे सब हिंदू निद्रा-वश हो गये । परन्तु जगत्का दातार राणा प्रतापसिंह पहरेपर जाग रहा है ।

१५—अकबर गहरा समुद्र है । उसमें हिंदू और मुसलमान सभी डूब गये । परन्तु उस समुद्रमें मेवाड़का राणा प्रतापसिंह कमलके फूलकी भाँति ऊपर ही स्थित है ।

अकबरियै इक बार दागल की सारी दुनी ।
अणदागल असवार रहियो राण प्रतापसी ॥१६॥

अकबर जासी आप दिल्ली पासी दूसरा ।
पुन-रासी पटरापा सुजस न जासी सूरमा ! ॥१७॥

अकबर ! गरब न आंण हींदू सह चाकर हुवा ।
दीठो काई दिवाण करतो लटका कटहड़ै ? ॥१८॥

मन अकबर मजबूत फूट हींदवां बेफकर ।
काफर—कौम—कपूत पकड़ूं राण प्रतापसी ॥१९॥

अकबर कीन्हा याद हींदू नृप हाजर हुवा ।
मेदपाट — मरजाद पण लायो न प्रतापसी ॥२ ॥

१६—अकबरने अेक ही बारमें सारी दुनिया (के घोड़ों) के दाग लगवा दिया परन्तु राणा प्रतापसिंह बिना दाग हुअे घोड़ेपर ही सवार रहा (अकबरने अपने अधीनस्थ सरदारों आदिके घोड़ोंपर दाग लगवानेकी प्रथा जारी की थी)।

१७—अकबर स्वयं चला जायगा और दिल्ली भी दूसरोंके हाथोंमें चली जायगी। पर हे शूरवीर और पुण्यकी राशि प्रतापसिंह तेरा सुयश कभी नहीं जायगा।

१८—हे अकबर, तू यह गर्व मत कर कि सब हिंदू तेरे चाकर बन गये। क्या किसीने दीवाण (महाराणा प्रतापसिंह) को कटहरेके आगे लटका करते देखा है ? (कटहड़े—बादशाहके सिंहासनके कटहरा लगा रहता था। लटका—झुकना, प्रणाम, हाथ जोड़कर सलाम करना)।

१९—अभाग्यवश हिन्दुओंमें परस्पर फूट है और अकबरका मन दृढ़ है। वह सोचता है कि काफिरोंकी कौममें कपूत प्रतापसिंह ही बचा रह गया है (बाकी तो सभी सपूतोंकी भांति मेरा कहना मानते हैं)। उसे भी पकड़ लूँ।

२०—अकबरने याद किये तो सभी हिंदू राजा अेक-अेक करके उसके सामने हाजिर हो गये (और अधीनता स्वीकार कर ली) पर मेवाड़का मर्यादास्वरूप राणा प्रतापसिंह उसके पैरों नहीं पड़ा।

मेछाँ आगळ माथ निवै नहीं नर-नाथरो ।
सो करतब समराथ पाळै राण प्रतापसी ॥२१॥
वृहा बडेरा बाट बाट तिकण बहणी बिसद ।
खाग-त्याग-खत्रवाट पूरो राण प्रतापसी ॥२२॥
कदे न नामै कंध अकबर ढिग आवै न वा ।
सूरज-वंस सबंध पाळै राण प्रतापसी ॥२३॥
अकबर कुटळ अनीत और बिटळ सिर आदरै ।
रघुकुळ-उत्तम- रीत पाळै राण प्रतापसी ॥२४॥
लागै हीदू लाज सगपण रोपै तुरकसूं ।
आरज-कुळरी आज पूँजी राण प्रतापसी ॥२५॥
अकबर पथर अनेक के भूपत भेळा किया ।
हाथ न लागो हेक पारस राण प्रतापसी ॥२६॥

२१— जो नरोंका नाथ है उसका मस्तक म्लेच्छोंके आगे नहीं झुक सकता इस कर्तव्यका पालन केवल समर्थ प्रतापसिंह ही करता है ।

२२—जिस मार्गपर बड़े चले हैं उसी बड़े मार्गपर चलना चाहिये । क्षत्रियोंमें इस मतका पालन करनेवाला अेक खड्ग (पराक्रम) और दान (देने) में पूरा महाराणा प्रतापसिंह ही है ।

२३—यह राणा न तो कभी अकबरके पास आता है और न मस्तक ही झुकाता है । प्रतापसिंह सूर्यवंश सम्बन्धका पालन करता है ।

२४—दूसरे विगड़े हुअे राजा अकबरकी कुटिल अनीतिको सिरपर रखकर आदर देते हैं पर राणा प्रतापसिंह रघुके कुलकी उत्तम रीतिका पालन करता है ।

२५—हिन्दू लज्जा का क्षेप करते हैं और मुसलमानोंके साथ विवाह सम्बन्ध स्थापित करते हैं । आज आर्य कुलकी पूँजी तो अेकमात्र प्रतापसिंह ही (रह गया) है ।

२६—अकबरने अनेक राजारूपी पत्थरोंको इकट्ठा कर रखा है । पर पारस पत्थरके समान अेक राणा प्रतापसिंह उसके हाथ नहीं लगा ।

घींगो घरम-ध्रहाम बाबरसूं मिड़ियो बिहस ।
अकबर-ववमां आय पड़े न राण प्रतापसी ॥२७॥
घुव-हितस्याळ-सभाव हींदू अकबर-वस हुवा ।
रोसीलो मृगराज पजै न राण प्रतापसी ॥२८॥
अकबर कूट घमांण हिय-फूट छोड़ै न हठ ।
पगां न लागण पाण पणधर राण प्रतापसी ॥२९॥
अकबर हियै उचाट रात-दिवस लागी रहै ।
रजवट वट समराट पाटम राण प्रतापसी ॥३ ॥
जग जाडा जूझार अकबर-पग चांपै अधिप ।
मऊ-राखण धुमार सिंहमै राण प्रतापसी ॥३१॥
अकबर-कनै अनेक नम-नम नीसरिया नृपत ।
अनमी रहियो एक पुहमी राण प्रतापसी ॥३२॥

२७—धरमकी रक्षाके लिये महाराणा सॉगा बाबरसे भिड़ा था उसी प्रकार धरमरक्षाके लिये राणा प्रतापसिंह अकबरके पैरोंमें आकर नहीं गिरता ।

२८—मुग-धीमके लिये हिन्दू राजा गीदड़ोंकी भाँति अकबरके वश हो गये पर रोषवाले सिंहकी भाँति राणा प्रताप उसके वशमें नहीं आता ।

२९—नीच और मूर्ख अकबरकी हृदय की (आँखें) फूट गई हैं जो वह अपना हठ नहीं छोड़ता । प्रतिज्ञाका पालन करनेवाला राणा प्रतापसिंह उसके पैरों पड़ने-वाला नहीं ।

३०—अकबरका हृदय रात-दिन उचाट रहता है । राणा प्रतापसिंह क्षत्रियोंके धर्मके पालन करनेवालोंमें पाटवी सम्राट है ।

३१—जगतमें जो जबर्दस्त योद्धा हैं ऐसे राजा भी अकबरके पैरोंकी सेवा करते हैं परन्तु पृथ्वी और गौका रक्षक प्रतापसिंह अकबरके हृदयमें निवास करता है (प्रतापके कारण अकबरके हृदयमें सदा चिन्ता बनी रहती है) ।

३२—अकबरके पास अनेक राजा झुक-झुककर मिले । पृथ्वीपर एक प्रतापसिंह ही उसके आगे नहीं झुका ।

४—महाराणा राजसिंह

मानपुरैरो मान मळपुरै घर-घर किया ।
सबळ त्रिसींग साम ऊभो राणो राजसी ॥७२॥

(ख) मारवाड़

राठौड़ वीरांगनायें

राठोड़ारी कुळ-त्रिया सीखी गम न परव ।
पती तरवार न मगणा है मँगणा न जणन्त ॥७३॥

राव जगमाल

पग-पग नेजा पाड़िया पग-पग पाड़ी ढाल ।
बीबी   पूछे   खानने   जग कता जगमाल ? ॥७४॥

राव अमरसिंह राठौड़

उण मुखसूँ गग्गो कह्यो इण कर लिवी कटार ।
वार कहण पायो नहीं हो गई जमधर पार ॥७५॥

दुर्गादास राठौड़

जननी ! सुत ऐहड़ा जणे जेहड़ा   दुर्गादास ।
भार मूँडासा थामियो बिन   थम्भां   आकास ॥७६॥

७२—मानपुरेको लूटकर उसका धन मलपुरेके घर-घर में बाँट दिया ऐसा दिल्ली सम्राट्का प्रत्यक्ष रूपसे शत्रु महाराणा राजसिंह खड़ा है।

७३—राठौड़ोंकी कुल-स्त्रियाँ निकम्मा (कायरता) गर्भ धारण नहीं करतीं। जिनके पति मांगनेवाले नहीं वे मांगनेवाले पुत्रोंको जन्म नहीं देतीं।

७४—बीबी खानसे पूछती है कि पग-पगपर भाले गिरे हैं और पग पगपर ढालें पड़ी हैं, भला कहो तो जगतमें कितने जगमाल हैं।

—उस खानखानाने अमरसिंहको 'गँवार' कहनेके लिये मुँहसे 'ग' इतना ही कहा था—वार ये दो अक्षर कहने भी नहीं पाया था—कि अमरसिंहकी कटार उसके शरीरमें पार हो गई।

७६—हे माता ! पुत्र जने तो ऐसा जनना जैसा कि दुर्गादास था—जिसने सिरपर मूँडासा रखकर उसपर बिना खंभोंके आधारके ही आकाशको थाम लिया।

वीरतसिंह

तन झड़ लागो तोक मार मणा खळ पाड़िया ।
फिरतो मग कोसीक जड़ियो गढ़ जोधाणरै ॥८२॥

मोकमसिंह

गढ़ साखी गहलोत कर साखी पातळ कमध ।
मुकन-रुघारी मोत भली सुधारी मोकड़ा ! ॥८३॥

पहर इक लग पोळ जडी रही जोधाणरी ।
गळमें पेलापेळ भली मचायी मोकड़ा ! ॥८४॥

आधूणी अवरात महल जळ रमी मुकनरी ।
पातळरी परभात भली रमाड़ी मोकड़ा ! ॥८५॥

मुकनूं पूछे बात को पातळ ! आया कठै ? ।
सुरगापुरमें साथ भेळा मेल्या मोकड़ै ॥८६॥

८२—जिसका शरीर तेज तलवारोंसे निढाल हुआ और जो बहुतसे शत्रुओंको मारकर युद्धभूमिमें सोया ऐसा वीरतसिंह मोतीके मूल्यवाले रत्नके समान जोधपुरके किलेमें जड़ा हुआ है ।

८३—मुकन रु —हे मोकमसिंह ! तूने मुकनसिंह और रघुनाथसिंहकी मृत्यु को खूब सुधारा (खूब अच्छा बदला लिया) ।

८४—जोधपुर दुर्गका द्वार एक पहर तक बन्द रहा । हे मोकमसिंह ! तूने दुर्गमें खूब रेलमपेल मचायी ।

८५—आज आधीरातको मुकनसिंहकी पत्नी महलमें रोई । हे मोकमसिंह ! तूने अभी प्रभातको प्रतापसिंहकी पत्नीको खूब रुलाया ।

८६—मुकनसिंह स्वर्गमें प्रतापसिंहसे बात पूछता है कि हे प्रताप ! कहो तुम कब आ गये ? प्रतापसिंहने उत्तर दिया कि मोकमसिंहने हम दोनोंको स्वर्गमें साथ ही साथ भेज दिया ।

(ग) बीकानेर

राव कांधल

कमधज राज भतीजरो सज बांध्यो बळ सार।
जिया कांधळ जोम्या जबर चौदह भूमी-चार ॥८७॥

पदमसिंह

अेक घड़ी आळोच मोहणरै करतो मरण।
सोह जमारो सोच करता हि जातो करणवत॥८८॥

कुशळसिंह

कुसळो पूछै काटनैं विसको किम बीकाण।
मो ऊभां तो पाल्टै भळै न ऊगै भाण॥८९॥

(घ) जयपुर

महाराजा मानसिंह

जननी! जण अैसो जणै जैसा मान मरद।
कांठो समंद पखाळियो काबल बांधी हद ॥९०॥

महाराजा जयसिंह (बड़े)

घट न बाजै देहरां संक न मानै साह।
अेकमता फिर आवज्यो माहरा जयसाह॥९१॥

८७—भतीज—बीकाजी या कांधलजीके भतीज थे।

८८—हे करणसिंहके पुत्र! मोहनसिंहकी मृत्युपर यदि तू अेक घड़ी भर भी आलोच करता तो तेरा सारा जीवन सोच करते ही बीतता।

८९—कुशलसिंह पूछता है कि हे बीकानेर! तू क्यों चिन्तत रहा है? मेरे रहते तुझे दुखी कोई विश्वस्त कर दे तो फिर सूर्य उदय नहीं हो सकता।

९०—हे माता! पुत्र जन तो अैसा जन जैसा कि मर्द मानसिंह था जिसने अपनी तलवार समुद्रमें धोई और काबुल तक राज्यसीमाका विस्तार किया।

९१—मंदिरोंमें घट नहीं बजते, मुसलमान बादशाह भय नहीं मानते, इसलिये हे मानसिंहके बेटे जयसिंह! अेक बार फिर यहाँ आओ।

अमरसिंह (सेखवी)

खगाँ न वाँको सेतड़ी भट वाँको अभमाल । —
गढपत राख्यो गोदमें नव-कूँटीरो लाल ॥१७॥

सुलतानसिंह

मन चाया पायो मरण हुयी फतेपुर हल्ल ।
रहसी रे सुलतानिया ! गौड़ा घणा दिन गल्ल ॥१८॥

सावंतसिंह

कळियो चाखा कीचमें रजवट-हंदो रथ्थ ।
सौवतिया सुलताणरा तूँ काढण समरथ्थ ॥१९॥

(क) श्लेषोक्ति

राठोड़ ऊगो

छाती ऊपर सेलड़ा माथै ऊपर घाट ।
मरहृयो ऊग भाणेजने कढ-पीजर कहवाट ॥२०॥

१७—अभमाल—अमरसिंह । राख्यो ६०—किशन नवकोटी (मारवाड़) के राजा चौकलसिंहको शरण दी ।

१८—हे गौड़ सुलतानसिंह ! फतहपुरपर आक्रमण हुआ और तुने मनचाही मृत्यु पाई संसारमें तेरी कथा बहुत दिनों तक रहेगी ।

१९—हे सुलतानसिंहके बेटे सावंतसिंह ! राजपूतीका रथ गहरे कीचड़में फँस गया है उसे निकालनेमें अब तू ही समर्थ है ।

२० —राजा मनोहरदासके यहाँ काठके पिंजरेमें कैद किया हुआ राजा कहवाट अपने मामेसे कहता है कि तुम बाहर मेरे मामाजी ऊगोको कहना कि तुम्हारा भाणा कहवाट काठके पिंजरेमें पड़ा है उसकी छातीपर भाले हैं और माथेपर छाट बनी है जिसपर अन्न पकते हैं ।

४—दानवीर

१—जाम ऊनड़

माई ! अेहा पूत जण जेहा ऊनड़ जाम ।
दीधो सारूं सिंध इम जिम दीजै अेक गाम ॥१॥

२—गोड़ बछराज (अजमेर)

देतो अरब-पसाव दत जिना गोड़ बछराज ।
गढ़ अजमेर सुमेरसूं ऊँचो दीसै आज ॥ २ ॥

३—साँगो

जळ डूबतै जाम साद ज साँगरिये दियो ।
कहज्यो मोरी माय कविनै देवै कामळी ॥ ३ ॥

४—जगदेव पँवार

इग्यारह इक्कावनै चैत तीज रविवार ।
सीस कँकाळी भट्टनै जगदेव दियो उतार ॥ ४ ॥

४—दानवीर

१—हे माता ! अैसा पुत्र उत्पन्न कर, जैसा कि ऊनड़ जाम था जिसने सिन्धके सारे प्रान्त इस प्रकार दान कर दिए जैसे अेक गाँव दान देता हो ।

२—गौड़ बछराज धन्य है जो नित्य अरब-पसावका दान करता था जिसके कारण आज अजमेर गढ़ सुमेरु पर्वतसे भी ऊँचा दिखाई देता है ।

३—जलमें डूबते हुए साँगेने आवाज दी कि मेरी माँको जाकर कह देना कि कविराजको कंबल बनाकर अवश्य दे दे (साँगेने कविराज ईसरदासजीको कंबल देनेकी प्रतिज्ञा की थी पर प्रतिज्ञा पूरी होनेके पूर्व ही डूबनेसे उसकी मृत्यु हो गई) ।

४—संवत् ११५१ की चैत्र-तृतीया रविवारके दिन जगदेव पँवारने अपना सिर उतारकर कंकाली भाटिनीको दानमें दे दिया ।

४—दानवीर

१—जाम ऊनड़

माई ! ऐहा पूत जण जेहा ऊनड़ जाम ।
दीधो सारो सिंध इम जिम दीजै ऐक गाम ॥१॥

२—गौड़ बछराज (अजमेर)

देतो अरब-पसाव नत किमो गौड़ बछराज ।
गढ अजमेर सुमेरसूं ऊंचो दीसै आज ॥ २ ॥

३—सांगो

काळ डूबतै आय सात न सांगरियै दियो ।
कह्यो मोरी माय कविसै देवै कामळी ॥ ३ ॥

४—जगदेव पँवार

ग्यारह इक्कानवें चैत तीज रविवार ।
सीस कंकाळी भट्टनी जगदे' दियो उतार ॥ ४ ॥

४—दानवीर

१—हे माता ! ऐसा पुत्र उत्पन्नकर, जैसा कि ऊनड़ जाम था जिसने सिंधके सारे प्रान्त इस प्रकार दान कर दिये जैसे ऐक गाँव दान देता हो ।

२—गौड़ बछराज धन्य है जो नित्य अरब-पसावका दान करता था जिसके कारण आज अजमेर गढ सुमेरु पर्वतसे भी ऊँचा दिखाई देता है ।

३—पानीमें डूबते हुए सांगाने आवाज दी कि मेरी माँ! जाकर यह देना कि कविराजको कंबल बनाकर अवश्य दे दे (सांगने कविराज ईसरदानजीको कंबल देनेकी प्रतिज्ञा की थी पर प्रतिज्ञा पूरी होनेके पूर्व ही डूबनेसे उसकी मृत्यु हो गई) ।

४—संवत् ११९१ की चैत्र-तृतीया रविवारके दिन जगदेव पँवारने अपना सिर उतारकर कंकाली भाटिनीको दानमें दे दिया ।

५—करणसिंह राठाड़ लूणकरणोत

सौ दूजा सुथार माटीमूँ गढ़िया मेंदळ ।
तूँ गढ़ियो करतार कामामूँ ही करणसी ।। ५ ।।

६—महाराज रायसिंह

कोड़ दरब दीधा क्रमे सवा कोड़ पह सोग ।
बीकाणे दाता बडा उभै हुवा अरझोग ।। ६ ।।

७—रहीम खानखाना

खानाखान नवाबरो दीठो अेहो दैण ।
ज्यूँ ज्यूँ कर ऊँचा करै त्यूँ त्यूँ नीचा नैण ।। ७ ।।
खानाखान नवाबरो मोपँह अचमो अेह ।
केम समाणो मेर-मन साढ़ तिहत्थी देह ।। ८ ।।

८—किशनसिंह ([illegible])

मेड़ौ मोटौ मरुधरा राजा माही रोस ।
विसम बढ़ाया करहले माझे न चढ़िया भीत ।। ९ ।।

५—दूसरा सारा संसार मिट्टीके ही द्वारा बना हुआ है परन्तु हे करणसिंह तुझे विधाताने शरीरके द्वारा बनाया है (वास्तवमें तू ही सच्चा मानवदेहधारी है)।

६—रायसिंहने अेक करोड़का दान किया और प्रभु रायसिंहने सवा करोड़का। बीकानेरमें ये दो बड़े जबर्दस्त दानी हुओ।

७—खानखाना रहीमके दान करनेका यह ढंग देखा कि ज्यों-ज्यों हाथ ऊँचा करता है त्यों-त्यों नेत्र नीचे होते हैं (दानशक्तिके साथ विनयकी भी वृद्धि होती है)।

८—खानखाना नवाबके विषयमें मुझे यह अचंभा होता है कि उनका मेरुके समान बड़ा मन साढ़े तीन हाथकी देहमें कैसे समाया ?

कविया माग पधारजो कँवर ज मुरधर देस ।
फूलाणी जाले जिसो सादाणी किसनेस ॥१०॥
थारे जोड़े किसनसी । जन्मो कँवर अमेर ।
ओक-ज हूवो करणरे पदमो बीकानेर ॥११॥

५—महाराणा जगतसिंह (पहले)

सिंधुर दीधा सात सौ हैवर छप्पन हजार ।
चौरासी सासण दिया जगपत जग-दातार ॥१२॥
करणारे जगपत कियो कीरत काज कुरख्ख ।
मन बिच धोखो ले मुआ साह दिलीस सरख्ख ॥१३॥
जगतो तो जाणे नही मात-पितारो नाम ।
दात-पिता रटतो रहै निसदिन यो ही काम ॥१४॥
साँइ ! करपे पारेवड़ा जगपतरै दरबार ।
पोथोळे पाणी पियाँ कण चुगाँ कोठार ॥१५॥

१०—मुरधरदेस—मारवाड़ यहाँ 'जोधपुर' के विशेष अर्थमें प्रयुक्त न होकर 'राजस्थान' के साधारण अर्थमें प्रयुक्त हुआ है । जलो फूलाणी—कच्छका सुप्रसिद्ध दानी और वीर राजा । सादाणी—सादूलसिंहका बेटा ।

११—हे किशनसिंह ! तुम्हारी जोड़ीका दानी आमेरका राजकुमार अमरसिंह है या ओक पदमसिंह बीकानेरमें करणसिंहके यहाँ हुआ था ।

१२—जगतके दानी महाराणा जगतसिंहने सात सौ हाथी छप्पन हजार घोड़े और चौरासी गाँवोंके परवाने (अर्थात् गाँव) दानमें दिये ।

१३—करणसिंहके बेटे जगतसिंहने कीर्तिके लिये वह महान् कार्य किया जिसका धोखा मनमें लिये-लिये ही दिल्लीके सारे बादशाह मर गये ।

१४—जगतसिंह माताके पिता यानी 'नाना' का नाम नहीं जानता (अर्थात् वह कभी ना ना नहीं करता) । वह तो रातदिन पिताके पिता यानी 'दादा' का नाम (अर्थात् देना देना) रटता रहता है ।

१५—हे परमात्मा ! हमें जगतसिंहके दरबारके कबूतर बनाना जिससे

१०—महाराणा भीमसिंह

राणै भीम न रखियो दत बिन दीहाड़ोह ।
हय-गयंद देतो हुयो भुवो न मेवाड़ोह ॥१६॥
भीमा ! तूं माठा मोटा मगरा मायसो ।
कर राखूं काळ्ठे संकर ज्यूं सेवा करूं ॥१७॥

११—ठाकुर बगतसिंह (खोष)

साबाणो जस लूंटियो माडाणो जग मांय ।
चीरच-रंगा कोरड़ा जातां सुणां न जाय ॥१८॥१८७॥
॥१२५॥

पीछोलेमें पानी पीयें और राजमहल बैठकमें मन खुशी रहें। (पीछोला—उदयपुर का सुप्रसिद्ध तालाब)।

१६—महाराणा भीमसिंहने एक भी दिन बिना दानका (जिस दिन दान न दिया हो) नहीं रखा। हाथीसे हाथी और घोड़े दान करता हुआ वह मेवाड़का अधिपति मानो अभी तक नहीं मरा है।

१७—हे भीमसिंह ! तू बड़े मस्तकवाला पत्थर है जिसे मैं अपने पास रखूँगा और शंकरकी भांति पूजा करूँगा।

४ ऐतिहासिक और भौगोलिक

ज्यां पमांर त्यां धार है धारा जठै पमार ।
बिन पमांर धारा नहीं धारा बिना पमार ॥ ६ ॥

यदुवंशी-चूडासमा

तै गरवा गिरनार ! काईं मन मछर धरयो ? ।
मरतां रा' खेंगार ओकी सिखर न ढालियो ! ॥ ७ ॥

मायेरा ! मत रोय मत कर रत्ती अखियां ।
कुळमें खामी खोय मरतां मां न सँभारवै ॥ ८ ॥

पांपणमें पड्यांह, कह्यो तो कुवा भराविये ।
मांभेरो मरयांह सरीरमें सरमां वहै ॥ ९ ॥

यदुवंशी-भाटी

रावळ भोजदे

तोडां पड तुरकाणरी भोजो खाग भजेज ।
वारां अणमी भोजदे बादम करै न वेज ॥ १० ॥

६—जहां पँवार है वहां धारा है । जहां धारा है वहां पँवार है । पँवारोंके बिना धारा नहीं और धाराके बिना पँवार नहीं ।

७—हे गौरवशील गिरनारके पहाड़ ! तूने मनमें यह क्या मत्सर धारण किया जो राव खेंगारके मरनेपर ओक भी शिखर नहीं गिराया (खेंगार गिरनारका राजा था ।)

८—हे माता ! तू रो मत, रोकर आंखोंको लाल मत कर, मरते समय माताको कभी याद नहीं करना चाहिये इससे कुलमें कलंक लगता है ।

९—जब पलक पड़ती है तब कहो तो कुएँ के कुएँ भर दूँ, माताके मरनेसे शरीरमें पसीने बह चली है ।

१०—पड—पड़ा । तुरकाण—यवन मंडल । [illegible]—कहता है । अणमी—जो किसीके आगे नहीं झुकता । बादम—[illegible] जैसलमेरके भाटी [illegible] राजपूत हैं । वेज—[illegible] ।

भटियाणी राणी उमादे

माण रखै तो पीव तज पीव रखै तज माण।
दोय-दोय गयंद न बंधसी अेकै खंभू – ठाण ॥११॥

कछवाहा

महाराजा मानसिंह

सबै भोम गोपालकी तामें अटक कहा।
जाके मनमें अटक है, सोई अटक रहा ॥१२॥

महाराजा ईश्वरीसिंह

मन्त्री मोटा मारिया खत्री केसोदास।
जद ही छोड़ी ईसरा! राज करणकी आस ॥१३॥
ईसर नेह मिटै नहीं जुग-जुग यह गाथा।
प्यासा केसोदासने पाया सो पाया ॥१४॥

केसरीसिंह (खंडेला)

बीकानेर सु-बस बसो दिन-रैण सवाई।
मरग्यो राजा बहुरी वळ जाज्यो बाई ॥१५॥

११—माण—मान प्रतिष्ठा। बंधसी—बंधेगा।

१२—भोम—भूमि। अटक—पंजाबका अेक प्रसिद्ध नगर, उसके आगेकी भूमि म्लेच्छभूमि मानी जाती थी इसलिये हिंदू अटक पार नहीं जाते थे।

१४—नेह—स्नेह। प्यासा—विरहका प्यासा।

१५—सुबस—अच्छी तरह। सवाई—ज्यादा अधिकाधिक। बहुरी—केसरीसिंह। वळ जाज्यो—जल जाए। बाई—बीकानेरकी राजकुमारी जो केसरीसिंहको ब्याही गयी थी (इनके आत्मघातका कारण)।

सीसोदिया

राणा राजसिंह

ओडा रतन सँभारिया राजड़ आसकरन्न।
वो हिंदवाणी बादसा वो बादसा बरन्न ॥१६॥

राणा अड़सी

अड़सीसूँ अड़िया जिके पड़िया करै पुकार।
महापुरसाँरो मूँडक्याँ गिळग्यो गाँव गँवार ॥१७॥

मेवाड़के सिरायत

तिहुँ साखा तिहुँ पूरब्या चूँडावत नव च्यार।
दुय सगता दुय राठवड़ सारँगदेव पँवार ॥१८॥

राठौड़ (जोधपुर)

ईंदाँरो उपगार, कमधज ! मत भूली कदै।
चूँडो चँवरी चाड दियो मँडोवर दायजै ॥१९॥

१६—ओडा—अेक गाँव। सँभारिया ह —दो रत्न मारे गये। राजड़—राणा राजसिंह। आसकरन—चारण आसकरण। वो ह —वह राजसिंह हिंदुओं का बादशाह था और यह आसकरण चारण बरनका बादशाह था।

१७—अड़सी ह —उदयपुरके राणा अड़सीसे जो भिड़े वे पड़े हुये पुकार कर रहे हैं। गमार गाँव महापुरुषोंके मुंडोंको खा गया। महापुरुष—साधु या जंगली संप्रदाय था।

१८—मेवाड़—मेवाड़। मेवाड़के सोलह सिरायतों (प्रधान सरदारों) में तीन शाखा राणावत तीन पुरबी (चौहान) राजपूत चार चूँडावत (चूँडाके वंशज, सीसोदिया) दो शक्तावत (शक्तसिंहके वंशज, सीसोदिया), दो राठौड़ अेक सारंगदेवोत और अेक पँवार राजपूत हैं।

१९—राठौड़ इंदा राजपूतोंके उपकारको कभी मत भूलना जिन्होंने चूँडाको कन्या देकर दहेजमें 'मंडोर' का दुर्ग दिया था (राजस्थानमें राठौड़ोंके

राव सीहोजी

भीनमाळ लीधी भड़ै सीहै सेल बजाय ।
दत दीधो सत संग्रह्यो ओ जस कदे न जाय ॥२०॥

राव चूँडो

चूंडा ! तनै न चीत कायर काळाऊवणा ।
भूप भयो भैभीत मंडोवररै माळियै ॥२१॥

गोगादे

भूखा तिसिया चाकड़ा राखीजै नेड़ाह ।
दळियां हाथ न आवसी गोगादे । घोड़ाह ॥२२॥

महाराजा रामसिंह

रामो मन भाव नहीं उत्तर दीनो देस ।
जोधाणा झाला करै आव धणी बगसेस । ॥२३॥
बहुर, देवो छत्तरसी दोसो राजकंवार ।
मरतै मोड़ै मारिया चोटीवाळा च्यार ॥२४॥

महत्व यहाँ था। राव जोधा तक मंडोर राठौड़ोंकी राजधानी रहा)। ति—
ंवरा परिहार राजपूतोंकी अेक शाखा है ।

२०—भड़ै—योधा ने । सेल—भाला । दत—दान ।

२१—हे राव चूँडा ! कलाऊ गाँवके कायरो अब तुम्हें याद नहीं है, अब तो मंडोरके महलमें तुम निर्भय होकर बैठे हो।

२२—तिसिया—प्यासे । चाकड़ा—थके हुओ । नेड़ाह—पास । दळियाँ—भाग चले जानेपर, नष्ट जानेपर ।

२३—रामो—महाराजा रामसिंह । उत्तर दीनो—जवाब दे दिया । झाला—आह्वानके लिओ हाथका इंगित, हाथका बुलाना ।

२४—मोड़—मुंडित साधु, यहाँ स्वामी आत्माराम संन्यासी। चोटीवाळा—चोटीवाले, अमुंडित ।

राठौड़ (बीकानेर)

बीकानेरकी स्थापना

पनरै सै पैंताळवै सुद वैसाख सुमेर।
थावर बीज थरप्पियो बीकै बीकानेर ॥२५॥

महाराजा रायसिंह

तूं सै देसी रूंखड़ो म्हे परदेसी लोग।
म्हांनै अकबर तेड़िया तूं कद आयो फोग ॥२६॥

महाराजा जोरावरसिंह

डाढाळी डोकर थयी का तूं थयी विदेस।
खून बिना क्यों खोसजे निज बीकांरा देस ॥२७॥

अभो ग्राह, बीकाण गज मारू समँद अथाह।
गरुड़ छाँड गोविंद ज्यूं साय करो जगसाह ॥२८॥

बीकाणै चोखो नहीं चोखो है जोधाण।
अभो अपूठो जावसी मेले मोटो माण ॥२९॥

पृथ्वीराज

अस वीसो पिव पीथळो पाणावळी पग भार।
ऐ तीनूं ही ऐकठा सिरज्या सिरजणहार ॥३०॥

२६—सै—है। म्हे—हम। म्हांने—हमको। तेड़िया—बुलाये। कद—किसलिये।

२७—डाढाळी—दाढ़ीवाली। डोकर—बूढ़ी। थयी—हुई। का—अथवा। खून—अपराध।

२८—अभो—जोधपुर-महाराजा अभयसिंह। साय—सहायता।

२९—चोखो—वाजिब। अपूठो—वापिस, पीठ देकर। मेले—त्यागकर।

३०—अस—अश्व, घोड़ा। पिव—पति। पीथळो—पृथ्वीराज (बीकानेर)। ऐ—ये। ऐकठा—एकत्र।

प्रशंसक

मुहणोत नैणसी

लाख लखाँरी नीपजै बड़-पीपळरी साख ।
नटियो मूँतो नैणसी ताँबो देण तलाक ॥३७॥
लैसो पीपळ लाख लाख लखारा लावसी ।
ताँबो देण तलाक नटिया सुन्दर-नैणसी ॥३८॥

भाखा चारण

घर जाजी जासी अंबर, जासी चारण जोय ।
जासा नाम अलायरा और न जासी कोय ॥

वीरमजी

पीपळमूँ मजलिस गयी तामसेमसूँ राग ।
रीझ बोल हँस खेलबो गयो बीरमर साथ ॥४ ॥

उपालंभ

उदयसिंह हस्यारा (मेवाड़)

ऊदा ! बाप न मारजे लिखियो लाभै राज ।
देस बसायो रायमल सरियो अेक न काज ॥४१॥

३७—नटियो—इनकार करनेपर । मूँतो नैणसी—महाराज जसवंतसिंहका अेक मंत्री और प्रसिद्ध इतिहास लेखक । ताँबो इ०—ताँबा देनेकी भी तलाक है (महाराजाके अेक समझा पूर्मीना करनेपर नैणसीका कथन) ।

३८—लखारा—लाखका काम करनेवाले ।

३९—जासा—मौसा । अलायरा—पुराका, परमात्माका ।

४ —पीपळमूँ—पृथ्वीराजके साथ । बीरमर—बीरमका ।

४१—ऊदा इ०—हे ऊदा ! पिताको नहीं मारना चाहिये था, राज्य तो भाग्यमें लिखा होता है तो मिलता है । सरियो—पूरा हुआ । रायमल—ऊदाका बड़ा भाई था राणा हुआ ।

मारू देस उपन्नियाँ सर ज्यूँ पाधरियाँह।
कड़वा कदे न बोलही मीठा बोलणियाँह॥ ४॥
मारू देस उपन्नियाँ त्यांका दंत सु-सेत।
कूँझ-बचाँ गोरंगियाँ खंजर जेहा नेत॥ ५॥
देस सुरंगा जळ सजळ मीठा-बोला लोय।
मारू कामण घर दखण जे हर देय तो होय॥ ६॥
देस सुरंगा जळ सजळ न दिया दोस घळाँह।
घर-घर चंद-बदन्नियाँ नीर चवै कमळाँह॥ ७॥
माटा काठा सीजिये गेहूँ छीला खाण।
भड़ बाँका छीला तुरी अह हो घर आपाण!॥ ८॥

मारवाड़की नदियाँ

रेलीयो रणका करै लूणी लहराँ खाय।
घोड़ी चपड़ी क्या करै गुहियासूँ घर जाय॥ ९॥

४—सर—तीर। पाधरिया—सीधे, अच्छे। कदे—कभी। बोलणिया—बोलने वाले (होते हैं)।

५—उपन्नियाँ—उत्पन्न हुए। कूँझ इ०—क्रौंचके बच्चोंके समान गौरवर्ण वाली। खंजर इ०—खंजनकी तरह नेत्र होते हैं।

६—लोय—लोग। मारू इ०—मारवाड़की कामिनी दक्षिणकी भूमिमें, भगवान् विशेष अनुग्रह करते हैं तभी, पत्नीरूपमें मिल सकती है।

८—गहूँ—प्रधान जिसमें उत्तम जाति गहूँ उत्पन्न होता है।

९—रेलीया लूणी, घोड़ी गुहिया—मारवाड़की ४ नदियाँ। रणका—शोर। चपड़ी—बेचारी। जाय—नष्ट होते हैं क्योंकि वह बहुत थोड़े पड़ता है।

बीकानेर

ऊँठ मिठाई अस्तरी सोनो-गहणो साह।
पाँच चीज पिरथी सिरै वाह बीकाणा वाह! ॥१०॥

ढूँढाड़ (जयपुर)

ऊँचा परवत सैर घन कारीगर करतार।
इतरा बधका नीपजै रंग देस ढूँढाड़! ॥११॥
बागाँ-बागाँ बावड्याँ फुलवाड़ा चहुँ फेर।
कोयल करै टहूकड़ा मद छो घर अंबेर! ॥१२॥
माल घ उमदा नीपजै गेहूँ अर गुड़ खाँड़।
नर नाहर तो नीपजै सेखा-धर ढूँढाड़ ॥१३॥

उदयपुर

उदियापुर सजा सहर मानस मण-मोलाह।
के झामा पाणी मरै आयाँ पीछोल्याह ॥१४॥
माता! तू सम्भागियो पीछोल्यारी रम्म।
गुणसजा पाणी भरै ऊमर देवै पग्ग ॥१५॥

१०—अस्तरी—स्त्री। साह—साहूकार। पिरथी सिरै—पृथ्वीमें सबसे बढ़कर। बीकाणा—हे बीकानेर।

११—इतरा इ०—इतनी चीजें श्रेष्ठ उत्पन्न होती हैं। रंग—धन्य है।

१२—बागाँ इ०—प्रत्येक बाग में वापिकाएँ हैं चारों ओर पुष्पवाटिकाएँ हैं।

१३—सेखा धर—शेखाकी भूमि। जयपुरमें शेखा प्रसिद्ध वीर हो चुका है।

१४—सजा—सुन्दर। मानस इ०—यहाँके मनुष्य बहुमूल्य हैं। पीछोल्याह—उदयपुरकी सुप्रसिद्ध झील।

१५—माता—हे पत्थर। सम्भागियो—सौभाग्यशाली। रम्म—उदारा देने की चीज। गुणसजा—गुणवती।

उदियापुररी कामणी गोखाँ काढे गात ।
मन तो देवाँरा डिगे मिनखाँ कितोक मात ? ॥१६॥

आबू

टूकै-टूकै केतकी झिरणै-झिरणै जाय ।
अरबुदकी छवि देखताँ और न लागै दाय ॥१७॥
जाणै जिके सुजाण नर, नहिं जाणै सो बोक ।
जमी और असमान बिच आबू लीजो लोक ॥१८॥
बनसपती पाखर बणी बणिया टूक बिहद ।
घटा बिछूटे नीझरण आयो मद अरबुद ॥१९॥
गह भूमी भूमी घटा बीजाँ सहिराँ बद ।
बादल माँय बिराजियो आबूलो अरबुद ॥२०॥
थपा मायो गिर थको आँबा भलो अवल्ल ।
अरबुदसूँ अलगा रहे, जिणरो काय हवल्ल ? ॥२१॥

१६—उदियापुररी इ०—उदयपुरकी कामनियाँ जब झरोखोंके बाहर अपने सुन्दर शरीरको निकालती हैं तो उन्हें देखकर देवोंका भी मन डिग जाता है मनुष्योंकी तो बात ही कितनी।

१७—लागै दाय—पसंद आता है।

१८—जिके—जो। बोक—मूढ़। जमी—पृथ्वी।

१९—पाखर—प्रखर, मधुर, सुन्दर। बिहद्द—बहुत अधिक। नीझरण—झरने। आयो इ०—मानो अर्बुद हाथीकी भाँति मद-युक्त हो रहा है।

२०—बीजाँ—बिजली। सहिराँ—शिखरोंपर। आबूलो—आबूका।

२१—अवल्ल—अव्वल। हवल्ल—हाल।

बीकानेर

ऊँठ मिठाई अस्तरी सोनो-गहणो साह।
पाँच चीज पिरथी सिरै, वाह बीकाणा वाह! ॥१०॥

ढूँढाड़ (जयपुर)

ऊँचा परबत सेर बन कारीगर तरवार।
इतरा चमकत नीपजै रंग देस ढूँढाड़! ॥११॥
बागाँ-बागाँ बावड्याँ फुलवाड़ी चहुँ फेर।
कोयल करै टहूकड़ा अइ हो भर आँबेर! ॥१२॥
आम अ उमदा नीपजै गेहूँ अर गुड़ बाड़।
मर नाहर तो नीपजै मैवा-घर मैवाड़ ॥१३॥

उदयपुर

उदियापुर सभा सहर, मारुस मण-मोलाह।
दे झाला पाणी भरै बाधाँ पीछोलाह ॥१४॥
माटा! तू सम्मागियो पीछोलारी टम्म।
गुलसका पाणी भरै ऊमर दे-दे पम्म ॥१५॥

१०—अस्तरी—स्त्री। साह—साहूकार। पिरथी सिरै—पृथ्वीमें सबसे ऊपर। बीकाणा—हे बीकानेर।

—इतरा इ०—इतनी चीजें श्रेष्ठ उत्पन्न होती हैं। रंग—धन्य है।

१२—बागाँ इ०—बाग बाग में बावड़ियाँ हैं चारों ओर फुलवाड़ियाँ हैं।

१३—मेवा घर—मेवोंकी भूमि। जयपुरमें मेवा प्रसिद्ध माना जाता है।

१४—सभा—सुन्दर। मारुस इ०—जहाँके मनुष्य बहुमूल्य हैं। पीछोलाह—उदयपुरकी सुप्रसिद्ध झील।

१५—माटा—हे पत्थर। सम्मागियो—सौभाग्यशाली। टम्म—लहरा देने की चाल। गुलसका—गुलगिरियाँ।

५ दास्य और त्याग

राडधड़ा

घर ढामी आलम धणी परगळ लूणी पास ।
सिखियो जिणनै साम्हसी राडधड़ारो वास ॥२२॥

गोढाण

अडवे औवळियाँह । गुणसागर गोढाणरी ।
फूलाँ बहु फळियाँह, मीका वाँसम नीपजै ॥२३॥७ ॥
॥१९५॥

२२—घर ढ —जहाँ ढाँगी नामक खेतके बीचकी जमीन है जहाँ आलमजी नामक देवता स्थापक है और जहाँ प्रचुर जलवाली लूणी नदी पासमें हो है वैसे राडधड़ाका निवास जिनके भाग्यमें लिखा है उन्हींको मिलेगा।

५ हास्य और व्यंग

घर धींगी आल
सिखिया जिणं

आखे आ
फूलां बहू

२२—घर इ —
मानक देवता संरक्षक है,
मैं राजस्थानरा निवास

पवसाणो भखणो पहर, पाळो चलणो पंथ ।
आबू ऊपर बैसणो भलो सराणो कंथ ! ॥१५॥

जैसलमेर

पग पूगळ धड़ कोटड़े बाहू बायड़मेर ।
फिरतो-फिरतो जोधपुर, ठावो जैसलमेर ॥१६॥

मालवो

मालूं थावा ! देसड़ा ज्यां फीफरिया लोग ।
अेक न दासी मारियाँ घर-घर दीसै सोग ॥१७॥
मालूं बावा ! देसड़ो ज्यां पाणी सेवार ।
ना पणियारी झूलरो ना कूव लैकार ॥१८॥

विभिन्न देश

पच्छिमनें पूरब भली म्यानीनें पंजाब ।
मारवाड़ भलि मूर्खांनें कपटीनें गुजरात ॥१९॥

१५—हे पति ! आबूके निवासको आपने अच्छा कहा जहाँ लानेको भी मिलते हैं, नहर का पानी पीना पड़ता है और पैदल मार्ग चलना पड़ता है ।

१६—(अकालका कथन) मेरे पैर पूगलमें, धड़ कोटड़े और भुजाएँ बाड़मेरमें रहती हैं; घूमता-घामता बीकानेर भी पहुँचता रहता हूँ पर जैसलमेर में तो निश्चितरूपसे मिलता हूँ ।

१७—ज्याँ—जहाँ । फीफरिया—फीके चेहरे । दीसै—दिखाई देती है । मोरियाँ—मुंदरी किसमें । सोग—शोक, मातम (काले कपड़े पहननेका रिवाज होनेसे) ।

१८—सेवार—सेवाल । ना इ०—न तो पनिहारियाँ झुंड बनाकर पानी भरनेको जाती हैं और न कुँओंपर चड़सवालोंका सुरीला शब्द ही होता है (जैसा कि मारवाड़में हुआ करता है) ।

बगळ घात न छेड़िये हाटी बीच किराड़ ।
रंघड़ करे न छेड़िये जद-तद करै बिगाड़ ॥२७॥
तिरियां तुरकां वाणियां भीस मसा मत जाण ।
दैख गरीब न मूसजे लिपट कपट्टी खाण ॥२८॥
अग्गमबुधी वाणियो पिच्छमबुधी जाट ।
तुर्तबुधी तुरकड़ो बामण सप्पमपाट ॥२९॥
अग्गमबुधी वाणियो पिच्छमबुधी बह्म ।
तुर्तबुधी तुरकड़ो मुल्लो मारै बम्म ॥३ ॥
सबमूं बुरो सुनार वाण्यो उणसूंही बुरो ।
दरजी यानतदार दीठो कोइ न दाखिया ॥३१॥

राजपूत सरदार

वै घोड़ा वै मौज रिजक वही राजा वही ।
रजपूतारो राम नीसरग्यो क्यूं, मोतमा ॥३२॥

२७—किराड़—बनिया । रंघड़—मुसलमान । जद-तद—जब कभी, कभी-न कभी ।

२८—देख इ —इन्हें गरीब, सीधा सादा, देखकर धोखा न खाना । खाण—खान ।

२९—अग्गमबुधी—आगमें सोचनेवाला, दीर्घदर्शी । पिच्छमबुधी—पीछे सोचनेवाला । तुर्तबुधी—तत्कार सोचनेवाला । सप्पमपाट—सर्वनाश, [illegible] ।

३०—बह्म—ब्राह्मण । बम्म—बमकी आवाज ।

३१—वाण्यो—बनिया । उणसूंही—उससे भी । यानतदार—ईमानदार । दीठो—देखा ।

३२—वै—वे । राम इ —तत्वहीन कैसे हो गये ।

बाण न छोडै बाणियो टाणै आयी टेव ।
दाम पड़न्ती विदरो कहै, ठमी सभो गुरु-देव ॥३९॥

थी पुरखी हाजर हुमी विनय सुणाव बास ।
गावी-हूँत भगाबियो जमराजा इण आस ॥४०॥

वणक-पुत्र कायद लिखै काना-मात्र न देत ।
हींग-मिरच-जीरो लिखै हुँग-भर-भर कर देत ॥४१॥

साधु-महत

पैसा साथ मांगकर, बैठा माळ मध ।
राम-भजनका नाम है, पेट भरणका पथ ॥४२॥
मूंड मुँडाया तीन गुण—मिटी टाटकी खाज ।
बाबा बाज्या जगतमे मिल्या पेट-भर नाज ॥४३॥

फूहड़ पति

नर-रिपु-वाहन तास रिपु, ता पति वाहण जोय ।
सखी ! हमीणा कपनै मत सराजो कोय ॥४४॥

३९—बाण—आदत । दाम पड़न्ताँ—दाम आनेपर । ठमी इ —ऐसे गुरुको भी ठग देता है ।

४०—थी पुरखी—दान की हुई जगह । गावी हूँत इ —बनियेने इस जमीन परसे जमराजको भी अपने सिंहासनसे भगा दिया (कहानी नीचे टिप्पणीमें देखिये) ।

४२—मध—महत ।

४३—गुण—लाभ । टाट—खोपड़ी । खाज—खुजली । बाज्या—कहलाये ।

४४—नर इ —मनुष्यका शत्रु सर्प उसका वाहन मयूर उसकी शत्रु बिल्ली, उसका पति महादेव उसका वाहन बैल । सखी इ —हे सखी ! ऐसो मेरा पति पूरा बैल है उसे कोई मत पुकारो ।

मैं चॉण्यो अमसेर है पिव तो पूरा सेर।
हेम-सुता-पत—वाहणा सामे रती न फेर ॥४५॥
मैं परणती परखियो मूँछां-तणो मरट्ट।
सायधण फेरै भरटियो फेरै पीव घरट्ट ॥४६॥
मैं परणती परखियो सांसो घणो सड़ाक।
आलेडाकी भीत ज्यूं पड़ै दड़ाक-दड़ाक ॥४७॥
सखी! हमीणा कपटी दिलमें आयी दाय।
घर रोवाळै मांगणा माल पराया खाय ॥४८॥
सखी! हमीणा कपटी काई कहूं वणाय।
आटा काढै मौरड़ा घर्रां पराया जाय ॥४९॥६४४॥

४५—हेम-सुता पत-वाहणा—हेमसुता अर्थात् पार्वती उनके पति अर्थात् महादेव उनका वाहन अर्थात् बैल। फेर—फरक।

४६—परखियो—देखा। भरटियो—अरहट। घरट्ट—भारी चक्की।

४७—सांसो सड़ाक—बहुत लंबा (परिहासात्मक प्रयोग)। आलेडा—गीला। दड़ाक-दड़ाक—धड़ाधड़।

४८—रोवाळै—निगरानी करता है।

नोट—मिलाओ वीर-रसमें दूहा नं २० स ३१।

बाज न छोड़े बाणिया टाबै जाबो देस ।
दाव पड़्यां बिदरो सहू, ठगो सगो गुरु-देव ॥३९॥
दी सुरही हाजर हुयी बिनय सुणाके बात ।
गायी-हूँत भगावियो जमराजा इण भात ॥४०॥
सयण-सुत साजन सिरी माता-मात न देव ।
हींग-मिरच-जीरो मिली हैम-भर-जर कर देव ॥४१॥

साधु-महत्व

पैसा मार्ग मांगकर, बैठ खाते मघ ।
राम-भजनका ढोंग है, पेट भरणका पथ ॥४२॥
मूँड मुँडायाँ तीन गुण—मिटी टाटकी खाज ।
बाबा बाज्या जगतमें मिल्या पेट-भर नाज ॥४३॥

पूरण पति

नर-रिपु-वाहण तास रिपु ता पति वाहण जोय ।
सखी ! हमीणा कन्तनै मत बतळावो कोय ॥४४॥

३९—बाम—मावड़ । दाव पड़्यां—दाव आनेपर । ठगो इ —ठगो गुरुको भी ठग लेता है ।

४०—दी सुरही—दान की हुई गाय । गायी हूँत इ —गायोंको इस बातसे जमराजको भी अपने सिंहासनसे भगा दिया (कहानी पीछे टिप्पणीमें देखिये) ।

४२—मघ—मद्य ।

४३—गुण—लाभ । टाट—खोपड़ी । खाज—खुजली । बाज्या—कहलाये ।

४४—नर इ०—मनुष्यका शत्रु यम उसका वाहन महिष उसका शत्रु दुर्गा, उसके पति महादेव उनका वाहन बैल । सखी इ —हे सखी ! देखो, मेरा पति पूरा बैल है उससे कोई मत बुलावो ।

६ प्रेम

प्रेम-महिमा

पोथा सो पोथा भया पण्डित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेमका पढ़ै स पण्डित होय ॥ १ ॥
साजन ! प्रेम सनेहड़ी किणसूं कही न जाय।
जैसे छहियां फूलकी मांहोमांह समाय ॥ २ ॥
प्रेम-कहाणी कहत हूं सुणो सखी री ! आय।
पिव ढूंढणको हम गयी आयी आप हिराय ॥ ३ ॥
प्रीत-रीतके काम पखी पण बमण सहै।
तीतर बहरी बाज गगन गया क्यूं आवड़े ॥ ४ ॥

प्रेम निर्वाहकी कठिनता

सब कोइ प्रीत बटाऊते सब कोइ करते माप।
सज्जन ! वे कुण कैसड़ा ज्यां न झकोळे बाव ॥ ५ ॥
प्रीत प्रीत सब कोई कहै, कठिन प्रीतकी रीत।
माट-भर निबहै नहीं ज्यां बाळूकी भीत ॥ ६ ॥

प्रेम महिमा

१—किणसूं—किसीसे भी। छहियां—छाया। मांहोमांह—भीतर ही भीतर।

३—आय—सुनो ही। हिराय—खोकर।

४—पण—भी। बहरी—ओक पक्षी। आवड़े—लौट आते हैं। गगन इ०—यहाँ तो आकाशमें उड़ जानेके बाद भी फिर क्यों लौट आते हैं ?

५—बटाऊते—प्रदर्शन करते हैं। माप इ०—मोलभाव करते हैं। —कौन। ज्यां—जिनको। बाउ—वायु। झकोळे—झकझोरता है।

प्रीत-प्रीत सब कोइ करै कहा करणमें जात ।
करणो और निभावणो बड़ी कठिन या बात ॥ ७ ॥
खड्ग-धारपर काय चालै तो चलबो सहल ।
मुसकल पगरै मांय नेह निभावण नागजी ! ॥ ८ ॥
प्रीत निभावण कठन है, प्रीत करो मत कोय ।
भांग भखण है सहज पण लहरां मुसकल होय ॥ ९ ॥
जाणै सोई जाणसी प्रीत-रीतको भेद ।
बंध्या पीर प्रसूतको कहा बतावै खेद ? ॥१०॥
अकथ कहाणी प्रीतकी कही न मानै कोय ।
जाणै सो जाणै मरे ! जिण सिर बीती होय ॥११॥

सच्चा प्रेम

प्रीत करै जैसी करे, करके क्यों छिटकाय ।
जैसे रोगी नीमडूं घाण-कोट पी ज्याय ॥१२॥
ऐसो नेह लगाइये जैसो काजळ रंग ।
मैलो हुय न मैल घटै धोयो छुटै न अंग ॥१३॥
केसरको रंग चार है, चूनेको रंग सेत ।
दोनूं मिल लाली करै ऐसो राखो हेत ॥१४॥

७—करणमें—करनेमें । कहा जात—क्या जाता है ।
८—काय—कोई कमी । सहल—सरल ।
९—कठन—मुश्किल । लहरां—नशेकी तरंगें ।
१०—जाणसी—जानेगा । बंध्या—वन्ध्या स्त्री प्रसूतिकी पीड़ाके कष्टको क्या बता सकती है ।
१२—छिटकाय—छोड़े । नीमडूं—खारा होनेपर भी ।
१३—मैल—मैल, कम । छुटै—छुटता है ।

सज्जन ! असी प्रीत कर, ज्यां हिन्दूकी जोय ।
जीतां-जी तो संग रहै मरयां पै सत्ती होय ॥१५॥
साजन ! असी प्रीत कर, निस अर चंदै हेत ।
चंदै बिन निस सांवळी, निस बिन चंदो सेत ॥१६॥

बड़ोंका प्रेम

प्रीत मन्नी पारै मजा रूपै रुडा मोर ।
प्रीत करै नै परहरै माणस मांहि वे चोर ॥१७॥
पहली परख न कीजिये ऊंच-नीचसूं प्रीत ।
कर पीछे कहिये नहीं रहिये अेकहि रीत ॥१८॥
सदा न नवलो नेह जिण-तिणसूं करणो नहीं ।
आपसकारै छेह आप-तणो दीजै नहीं ॥१९॥
सज्जन । प्रीत न जोड़िये जाइ न तोड़ा कोय ।
तोड़यां पीछे जोड़िये गांठ गंठीली होय ॥२०॥

१५—जोय—स्त्री । जीतां जी—जीते हुओ । मरयां पै—मरनेपर ।

१६—निस इ०—जैसा प्रेम रात्रि और चन्द्रमामें है । सांवळी—काली, दुखी । सेत—श्वेत, कान्तिहीन मलिन ।

१७—पारै—पालते हैं निभाते हैं । मजा—बड़े चाव । नै—और । परहरै—छोड़ देते हैं । माणस—मनुष्य । वै—वे । पाठान्तर, पारेरहत—कहलाती ।

१८—परख—भूलकर भी ।

१९—सदा इ०—नित्य नया प्रेम जिस किसीसे बिना समझेबूझे नहीं करना चाहिये, और सामनेवालेका (दूसरेका) छेह देनेपर स्वयं अपना छेह नहीं देना चाहिये । छेह देना—अन्त देना, जुदा होना ।

२०—गंठीली—अनेक गांठोंवाली ।

अगन घोर, गज केहरी पारस-पदम सिर-मोड़।
उँवराव केसें बणै प्रीत-कपट अेक ठोड़॥३९॥
काच-कटोरो नैण-जळ मोती दूध र मन्न।
इतरा फाटया ना मिलै लाखूं करो जतन्न॥४०॥
मन मोती चख मेर, पाको घट मूंगो मुकर।
फूट्या अेता फेर मेळ्या मिलै न मोतिया!॥४१॥
मोती फाटयो बींधता मन फाटयो अेक बोल।
मोती फेर मैमाय लो मन तो मिलै न मोल॥४२॥
मन फाटया कण-कण हुआ फेर घड़ै तो राम।
हरीदास जग मूं कहै, नहीं औरका काम॥४३॥१८७॥

३९—अग्नि और घोरा, हाथी और सिंह, पारस और मणिका मुकुट, तथा प्रेम और कपट—ये अेक ठौर कैसे रह सकते हैं।

४०—र—और। इतरा इ०—इतने फटनेके बाद नहीं मिल सकते।

४१—चख—आँख। पाको घट—पका घड़ा। मूँगो—मूँगिया। मुकुर—काच। अेता—इतने। फेर—फिर। मेळ्या इ०—मिलाने जानेपर नहीं मिल सकते।

४२—बींधतां—बेधते हुए। अेक बोल—अेक कटु-वचनसे।

४३—कण-कण—कन-कन, टुकड़े-टुकड़े। फेर—फिर ज्यौंका-त्यौं बना दे ऐसा तो अेक ईश्वर ही है।

अगन छोर गज केहरी पाव-पदम सिर-मोड़ ।
उदैराज केम बणै प्रीत-कपट अेक ठोड़ ॥३९॥
काच-कटोरो नैण-जळ मोती दूध र मन्न ।
इतरा फाटया ना मिलै लाखूं करो जतन्न ॥४०॥
मन मोती पल मेर, पाका घट मूँगो मुकुर ।
फूटा भेळा फर मेळया मिळै न मोतिया ॥४१॥
मोती फाटयो बीधतां मन फाटयो अेक बोल ।
मोती फेर मँगाय लो मन तो मिलै न मोल ॥४२॥
मन फाटया कण-कण हुआ फेर घड़ै तो राम ।
हरीदास जन यूं कहै, नहीं औरका काम ॥४३॥६८७॥

३९—अग्नि और धोरा, हाथी और सिंह, चरण और माथेका मुकुट, तथा प्रेम और कपट—ये अेक ठौर कैसे रह सकते हैं ।

४०—र—और । इतरा इ०—इतने फटनेके बाद नहीं मिल सकते ।

४१—पल—आँख । पाको घट—पक्का घड़ा । मूँगो—मूँगिया । मुकुर—काच । भेळा—इकने । फेर—फिर । मेळ्या इ०—मिलाने जानेपर नहीं मिल सकते ।

४२—बीधतां—बेधते हुअे । अेक बोल—अेक कटु-वचनसे ।

४३—कण-कण—कन-कन, टुकड़े-टुकड़े । फेर—फिर ज्योंका-त्यों बना दे अैसा तो अेक ईश्वर ही है ।

७ शृंगार रस

१—प्रियतम

साजन-साजन हूँ करूँ साजन जीव-जड़ी ।
साजन फूल गुलाबरो निरखूँ घड़ी-घड़ी ॥ १ ॥
साजन-साजन हूँ करूँ साजन जीव-जड़ी ।
सजन मिळा मूँ पूछसे झापूँ घड़ी-घड़ी ॥ २ ॥
साजन ! तुम-मुख जोय जग सारो ही जोइयो ।
अैसो मिल्यो न कोय ज्यां देख्यां तुम वीसरूँ ॥ ३ ॥
सज्जन भूली मानवी कोड़ी-कोड़ी देख ।
जब गळ लागो पीवके लाख टकांकी अेक ॥ ४ ॥
साजन थारा थोड़-सा कसर जिसा फुरण ।
मैंता मोती सारखा आछा जाण समय ॥ ५ ॥
साजन अैसा कीजिये जामें लखण बतीस ।
भीड़ पड़्यां विरचे नहीं सीस धरे बगसीस ॥ ६ ॥

१—प्रियतम

१—साजन—प्रियतम । जीव-जड़ी—प्राणोंके लिये संजीवनी बूटी ।

२—पूछसे—पूछेगा । सजन—साजन का रूप ।

३—जोय—देखकर । जोइयो—देखा । ज्यां (०)—जिन देखनेसे तुम्हें भूल जाऊं ।

४—भूली (०)—[illegible] मूल्यमें बिकती देख पड़ती है यहाँ ।

५—प्रियतम तेरे [illegible] हैं [illegible] समान [illegible] ([illegible]) है [illegible] समान [illegible] है और [illegible] आते हैं (भावार्थ और वर्णन [illegible] लिये [illegible]) ।

६—लखण—लक्षण, सामुद्रिकमें बतीस लक्षण प्रसिद्ध हैं । भीड़—संकट । विरचे—[illegible] । बगसीस—बख्शीश, इनाम ।

साजन ऐसा कीजिये जैसा रहम रंग।
सिर मूंडी घड़ नांगरै तोइ न छूटै संग ॥ ७ ॥
साजन ऐसा कीजिये जैसा कूप कोस।
पग दे पाछा ठेल दे रती न मानै रोस ॥ ८ ॥
साजन इसा न चाहिजे जैसा झाड़ी-बोर।
ऊपर लाली प्रेमकी हिरदा मांय कठोर ॥ ९ ॥
हूं बलिहारी सज्जणां सज्जण मो बलिहार।
हूं सज्जण पग-पानही सज्जण मो गळ-हार ॥१०॥
जलहर बसै कमोदणी चन्दो बसै अकास।
जो ज्यांहीके मन बसै सो त्यांहीके पास ॥११॥
सुसनेही समदां परै बसत हिया मझार।
कुसनेही घर आंगणै जांण समदां पार ॥१२॥

८—कूप कोस—कुएँसे पानी निकालनेका चमड़ेका पात्र (चरस), जिसमें पानी इकट्ठा होनेके बाद निकालनेवाला पैर मारकर फिर कुएँमें डाल देता है। रती—जरा भी। रोस—रोष।

९—इसा—ऐसे। बोर—बेर।

१०—मैं प्रियतमपर बलिहारी हूं और प्रियतम मुझपर बलिहारी है। मैं प्रियतमके पैरोंकी पगरखी हूं और प्रियतम मेरे गलेके हार हैं।

११—जलहर—जलाशय।

१२—सच्चे प्रेमी समुद्रके पार भी रहते हों तो भी हृदयमें ही रहते हैं। और जो प्रेमी सच्चे नहीं हैं वे घरके आंगनमें रहते हुए भी मानो समुद्रके पार रहते हैं।

साजन ऐसा कीजिये जैसा रेसम रंग ।
सिर मूळी घड़ कांपरै ताइ न छूटै संग ॥ ७ ॥
साजन ऐसा कीजिये जैसा कूप कोस ।
पग दे पाछा ठेल दे रती न मानै रोस ॥ ८ ॥
साजन इसा न चाहिये जैसा झाड़ी-बोर ।
ऊपर लाली प्रेमकी हिरदा मांय कठोर ॥ ९ ॥
हूं बलिहारी सज्जणां सज्जण मो बलिहार ।
हूं सज्जण पग-पानही सज्जण मो गल-हार ॥१० ॥
जव्हर बसै कमोदनी चंदो बसै अकास ।
जो ज्यांहीके मन बसै सो त्यांहीके पास ॥११॥
सजनेही समदां परे बसत हिया मझार ।
कुसनेही घर आंगणै जाण समदां पार ॥१२॥

८—कूएँ कोस—कुएँसे पानी निकालनेका चमड़ेका पात्र (चरस), जिसमें पानी उँडेल देनेके बाद निकालनेवाला पैर मारकर फिर कुएँमें डाल देता है। रती—थोड़ा भी। रोस—रीस।

९—इसा—ऐसे। बोर—बेर।

१ —मैं प्रियतमपर बलिहारी हूँ और प्रियतम मुझपर बलिहारी है। मैं प्रियतमके पैरोंकी पगरखी हूँ और प्रियतम मेरे गलेके हार हैं।

११—जव्हर—जलाशय।

१२—सच्चे प्रेमी समुद्रके पार भी रहते हों तो भी हृदयमें ही रहते हैं। और जो प्रेमी सच्चे नहीं हैं वे घरके आँगनमें रहते हुए भी मानो समुद्रके पार रहते हैं।

मन प्रवीण कुंदन मुहर प्रेम प्रकासै जोत ।
विरह-अगिन ज्यूं-ज्यूं तपै त्यूं-त्यूं कीमत होत ॥ २ ॥३१॥

५—प्रियका प्रवास

सजन सिपाही हू सखी ! किस बिध बांधूं नेह ।
रात रहै, दिन उठ चलै आंधी गिणै न मेह ॥ १ ॥
सीयाळै तो सी पड़ै उनाळै लू बाय ।
बरसाळै भुंय चीकणी चालण रुत न काय ॥ २ ॥
थळ तत्ता लू सामुही बाळोला पथियाह ! ।
म्हांको कहियो जो करो घर बैठा रहियाह ॥ ३ ॥

वर्षा

कम्मड़ चीण कमाण-गुण भींजै सब हथियार ।
इण रुत साहब ना चलै, चालै तिका गँवार ॥ ४ ॥

२—मन इ०—प्रवीण कहता है कि मन सोनेकी मुहर है जो प्रेमकी ज्योतिसे प्रकाशमान् है । यह विरहकी अग्निमें ज्यों ज्यों तपता है त्यों-त्यों मूल्यवान् होता जाता है ।

५—प्रियका प्रवास

१—आंधी इ०—न आंधीकी परवाह करता है न मेहकी ।

२—जाड़ेमें शीत पड़ता है, गर्मीमें लू चलती है, बरसातमें पृथ्वी कीचड़से भरी होती है अतः हे प्यारे, प्रवास करनेके योग्य ऋतु कोई नहीं है ।

३—भूमि गर्म है, लू सामने है, हे पथिक तुम जल जाओगे । यदि हमारा कहा करो तो घर ही बैठे रहो ।

४—चीण—चीन । गुण—धनुषकी डोरी । साहब—प्रियतम, अथवा प्रेमी । तिका—वे ।

मन प्रवीण कुंदन मुहर प्रेम प्रगासै जोत ।
विरह-अगिन ज्यूं-ज्यूं तपै त्यूं-त्यूं कीमत होत ॥ २ ॥२१॥

५—प्रियका प्रवास

सजन सिपाही हे सखी ! मिस बिच बांधूं नेह ।
रत रहै, दिन उठ चलै आंधी गिणै न मेह ॥ १ ॥
सीयाळै तो सी पड़ै ऊनाळै लू वाय ।
बरसाळै भुंय चीकणी चालण रुत न काय ॥ २ ॥
बळ तत्ता भू सामुही वामोला पहियाह ! ।
म्हांनो कहियो जो करो घर बैठा रहियाह ॥ ३ ॥

वर्षा

कज्जळ औस कमाण-गुण भीनी सब हथियार ।
गुण रुत साहब ना चलै चालै तिका गैंवार ॥ ४ ॥

२—मन इ०—प्रवीण कहता है कि मन सोनेकी मुहर है जो प्रेमकी ज्योतिसे प्रकाशमान् है । यह विरहकी अग्निमें ज्यों ज्यों तपता है त्यों-त्यों मूल्यवान् होता जाता है ।

५—प्रियका प्रवास

१—आंधी इ०—न आंधीकी परवाह करता है न मेहकी ।

२—जाड़ेमें शीत पड़ता है गर्मीमें लू चलती है बरसातमें पृथ्वी कीचड़से भरी होती है अतः हे प्यारे, प्रवास करनेके योग्य ऋतु कोई नहीं है ।

३—भूमि गर्म है तू थमने दे हे पथिक तुम घर जाओगे । यदि हमारा कहा करो तो घर ही बैठे रहो ।

४—औस—शीत । गुण—धनुषकी डोरी । साहब—प्रियतम, सच्चे प्रेमी । तिका—वे ।

सावण आयौ सायबा ! आणा-आणा रूप ।
आणा घर आणा नहीं टाणौ बाग तुरंग ॥११॥
गह घूमी भूमी घटा पावस उलटया पूर ।
सावण महिनै सायबा ! वदे न रावै दूर ॥१२॥

गीत

जिण रित मोती नीपजै सीप समदाँ मांय ।
तिण रित ढोलो ऊमह्यो इण का मारग जाय ॥१३॥
जिण रुत नाग न नीसरै दाझै वनखंड दाह ।
तिण रुत हे साहब ! कह्यो तुम परदेसां जाह ॥१४॥
प्रीतम ! प्यारा प्राणसूँ मत होवो न्याराह ।
थाँ बिन पलक न आवड़ै तन छूटै म्हाराह ॥१५॥
साजन ! गहरा समंद-सा गुण जल भरियो गात ।
ओछा माणस ज्यूं इसी किसीं करो छो बात ? ॥१६॥
सज्जन प्रीत सनामकै दूर देस मत जाव ।
बसो हमारी नागरी हम मांगें तुम खाव ॥१७॥

११—टीवण्याँ—टीबका त्यौहार मनानेवाली स्त्रियाँ । बार—पीछे, साथ । साईनां—वयस्य—अेक उमरके साथी साथी । पदो इ —हे प्रियतम आप मौजरीके लिये प्रवास करनेको क्यों तयार हो रहे हैं ।

१२—घूमी—घुमी फिरी । पावस इ —वर्षाकालमें नालों समय पर्व ।

१३—रित—ऋतु । ढोलो—प्रियतम नायक । ऊमह्यो—उमड़ा, चलनेको तय्यार हुआ ।

१४—साहब – प्रियतम । जाह—जाता है ।

१५—आवड़ै—लगते हैं । म्हाराह—मेरे ।

१६—गुण जल—शरीरमें गुणरूपी जल भरा है । ओछा माणस इ—छिछले आदमीकी तरह अब कैसी बातें करते हो ।

१७—नागरी—नगरी ।

(४)

ढोलो हल्लाणो करै धण हल्लण न देय ।
झब-झब झूबै पागड़ै डब-डब नयण भरेय ॥२४॥
सायधण हल्लण सांभळै ऊभी आंगण-छेह ।
काजळ-जळ भेळा करी नांखी-नांख भरेह ॥२५॥
जोड ज्यूं ही जोड बिणजारारा ब्याज ज्यूं ।
तमक जोड मत तोड नाखो-वाँखो नागजी ॥२६॥
डूंगर-केरा वाहळा ओछां-करा नेह ।
वहता वहै उतावळा छिटक दिखावै छेह ॥२७॥
पिव छोटीरा भेहणा जेहा काती मेह ।
आडंबर मत दाखवै आस न पूरै देह ॥२८॥

---

(४)

२४—ढोलो इ०—पति जानेको करता है पर प्रिया जाने नहीं देती। वह घोड़ेकी रिकाबको पकड़कर झब-झब झूलती है और डब डबाकर आँखें भर लेती है।

२५—प्रिया आँगनके कोनेमें खड़ी हुई प्रस्थानकी बात सुन रही है और नेत्रोंका काजल और आंसू इकट्ठे कर-करके बार-बार गिरा रही है और फिर नेत्र भर रही है।

२६—बिणजारा—एक जाति विशेष, जो व्यापारकी वस्तुएँ बैलोंपर लिये हुए देश विदेश घूमती है। अब इनका व्यापार बिल्कुल नष्ट हो गया है। नागजी—हे प्रियतम !

२७—वाहळा—नाले, झरने। उंतावळा—वेगसे। वहता वहै—चलते हुए (अर्थात् बरसातमें) वेगसे चलते हैं। छिटक—छिटककर थोड़ीसी देरमें अपना अन्त दिखा देते हैं।

२८—छोटीरा—भाग्यहीनोंके (या छोटे) काती मेह—शरद् ऋतुके मेघ। दाखवै—दिखाते हैं। देह—न।

आडा डूंगर, दूर घर, बणै न आणै मत्त ।
सज्जण-मदै कारणै हियो हिलूँबै नित्त ॥ ९ ॥

जिम-जिम साजन साँमरै तिम-तिम लागै धोर ।
पख हुवै तो जाय मिलूँ मनाँ बँधाड़ो धीर ॥ १० ॥

आडा डूंगर, भुंय घणी सज्जण रह्या बिदेस ।
झाँमी-ताँगी पाँखड़ी केती बार महेस ? ॥११॥

पाँखड़ियाँ हरि किउं नहीं देण अथाह ज्यांह ।
चकवीकै हूं पाँखड़ो रैण न मेळो त्यांह ॥१२॥

आडा डूंगर भुंय घणी तियाँ मिळीजै केम ।
मनहूँ बिसरम न मेल्हिये चकवी दिनयर पेम ॥१३॥

ज्यूं भे डूंगर सम्मुहा त्यूं जे सज्जण हुंत ।
चपा-वाळी भमर ज्यूं नैण मगाय रहंत ॥१४॥

९—बणै—बनानेका उपाय नहीं बनता। घरे—घर। हिलूँबै—व्याकुल होता है।

१०—साँमरै—याद आते हैं। मनाँ १०—मनको धीरज बँधावें।

११—भुंय—भूमि। सज्जण—प्रियतम। कती बार—कितनी बार।

१२—किउं नहीं—क्यों नहीं। अथाह—बाधक प्रतिकूल। रैण १०—जो भी रात्रिके समय जिससे उनका मिलाप नहीं होता।

१३—तियाँ १०—उनसे कैसे मिलना चाहिये। मनहूँ—मनसे। मेल्हिये—दूर कीजिये बिसारिये। दिनयर—सूर्य, जैसे चकवी दूर रहती हुई भी सूर्यको नहीं भूलती।

१४—डूंगर—पहाड़ी। सम्मुहा—अभिमुख सामने। जे—यदि। हुंत—होते। भमर—भौंरा। नैण १०—आकर्षक देखती रहती।

जिण देसे सज्जण बसइ तिण दिस वज्जउ वाव ।
उवाँ लगे मा लग्गसी ऊ ही लाख-पसाव ॥१५॥
सो कोसाँ वीजळ खिवै ज्याँमूं किसो सनेह ? ।
किसना तिसना जद मिटै औगण बरसै मेह ॥१६॥
कउवा ! दिऊँ बधाइयाँ प्रीतम मिळवै मुझ ।
काढ कळेजो आपणो भाखन दिऊँसा तुझ ॥१७॥
कागा ! नैण निकास दूं पीव पास ले जाय ।
पहली दरस दिखायकै पोछै खोजो खाय ॥१८॥
हे सखिये ! परदेस प्री सनह न आवै हाथ ।
बाबहियो आसाढ जिम विरहिण करै विलाप ॥१९॥
बाबहियो नै विरहणी दानूं अेक सुभाव ।
जब ही बरसै घन घणो तबही कहै प्रियाव ॥२ ॥

१५—वजउ—चलो । बाव—वायु, हवा । उवाँह —हवा उनके अंगका स्पर्श कर मुझे लगेगी । ऊही—वही (प्रियका स्पर्श की हुई हवाका स्पर्श) । लाख-पसाव—लाख रुपयोंका दान (लाख पसाव अेक प्रकारका दान होता है जो राजा लोग प्रसन्न होकर कविजनोंको दिया करते थे । इसमें या तो नकद लाख रुपए दिए जाते थे या लाख रुपयकी जागीर या संपत्ति । आगेमें वस्तुतः लाखका धन दिया जाता था पर पीछे केवलका नाम ही-नाम रह गया ।)

१६—किसना—कविका नाम । तिसना—तृष्णा प्यास लालसा ।

१७—मिळ[illegible]—मिलाये । दिऊँसा—दूंगी । तुझ—तुझे ।

१ —सनह—संदेसा । बाबहिया १—पपीहा जैसे आसाढमें पानीको देखकर पुकारता है ।

२०—प्रियाव—१ प्रिय+आव २. पपीहेकी पी आ, पी आ जैसी [illegible] ।

बाबहिया ! तूं चोर, थारी चाँच मढावसूं ।
रस न दीनी सोर, मैं जाण्यो प्रिय आवियो ॥२१॥

बाबहिया ! पिउपिउ म कहि, पिउको नाँव न लेय ।
काहक लागे बिरहणी तड़फ-तड़फ जिव देह ॥२२॥

बाबहिया ! निस-पछिया बाअड़ दे-दे सूण ।
पिउ मेरो मैं पीवकी तूं पिव कहै स कूण ॥२३॥

पीहू-पीहू करणरी बुरी पपीहा ! बाण ।
थारो सहज-सुभाव यो म्हांरै लागे बाण ॥२४॥

अरे पपैया बावरा ! आधीरात न कूक ।
होळे-होळे सुळगती सो तैं मारी फूंक ॥२५॥

सिर काटूं, रे मोरिया ! काढूं सिररो फूल ।
ढळ्ळी रात न गहकियो हिवड़ै पाड़्यो सूळ ॥२६॥

मोरा ! मैं तने बरजियो मत कर बोल जरूर ।
थारा चख्खर टहूकडे म्हारा साजन दूर ॥२७॥

२१—चोर—दुष्ट कपटी । चाँच—चोंच । मढावसूं—मढाऊंगी । सोर ड—धम्म किया तो मुझे भ्रम हुआ कि प्रियतम आ गया ।

२३—निस-पछिया—आधी पिछली रात । बाअड़ द —ममता व्यथा-कातर वाक्य कहता है । तू क०—तू 'पी' की कहनेवाला कौन ।

२५—होळे ह —जो विरहाग्नि धीरे धीरे सुलग रही थी उसे तूने फूँककर एकदम प्रज्वलित कर दी । फूल—मोरके सिरकी कलँगी । ढळ्ळी—ढलती हुई आधीरातके पीछेकी रात । गहकियो—बोला । पाड़्यो—पैदा किया । बरजियो—मना किया ।

२७—तने—तुझे । चख्खर—मत । टहूकडे—बोलने से ।

म्हे कुरझां सरवर-तणी पांखां किणहि न देस ।
भरिया सर देखी रहां उड आथेरि वहेस ॥३४॥
उत्तर दिस उपराठियां दक्खिण साम्हियांह ।
कुरझां ! अेक संदेसड़ो ढोलाने कहियाह ॥३५॥
माणस हुवां त मुख चवां म्हे छां कूंझड़ियांह ।
पिव संदेसो पाठविस लिख दे पांखड़ियांह ॥३६॥
पांखे पाणी बाहरे जळ काजळ पड़िस्याह ।
सयणां-तणा संदेसड़ा मुख-बचने कहियाह ॥३७॥
या तन की पूठी करूं काढ रंगाऊं खाल ।
पायनसूं लिपटी रहूं आठूं पहोर, जमाल ॥३८॥
जे जनमूं उण देसमें करियो यूं करतार ।
पिव-पिव करतां नीसरे जिव-जिव मरतां बार ॥३९॥
कागा ! सब तन खाइयो चाख्यो चुण-चुण मांस ।
दो नैणां मत खाइयो पीव मिलणरी आस ॥४ ॥

३४—किणहि न —किसीको नहीं देंगी । भरिया स —पानीसे भरे हुये तालाब देखकर ठहर जाती हैं और फिर उड़कर दूर चली जाती हैं ।

३५—उपराठियां—पीठ पीछे देकर । ढोला—प्रियतम ।

३६—माणस ह०—मनुष्य होतीं तो मुखसे कहतीं पर हम तो कुरझ हैं । पाठविस—यदि भेजती है तो ।

३७—बाहरे—उतरता है या तैरे । काजळ—स्याही । जळ क०—जल लगनेसे स्याही बह जायगी । सयणां—प्रेमियोंके । मुख—मौखिक ही कहे जाते हैं ।

३८—पहोर—पहर ।

३९—जनमूं—जन्म लूं । उण—उस (जहां प्रियतम है) । नीसरे—निकले ।

गया सनेही दूर, कुसनेही मंडळ भया ।
रहु रहु, हिया ! न भूर कर कायर ! काठो हियो ॥४९॥
ऊभी थी रायगणै सायब सांभरियाह ।
ध्यारैह पल्ला भूनती आंसू-जळ भरियाह ॥५०॥
राति ज रुन्नी निसह भर, सुणी महाजन लोय ।
हाथाळी छाला पड्या चीर निचोय-निचोय ॥५१॥
सज्जन चल्ले गुण रह्या, गुण भी चल्लणहार ।
सूकण लागी बेलड़ी गया ज सींचणहार ॥५२॥
सज्जन गुणे-समुद्द तूं, तर-तर थक्की तेण ।
अवगुण अेक न सांभरे रहूँ विलूंबी जेण ॥५३॥
पिव कारण सब परहियो तन मन जोबन मास ।
प्रिया पीव आवे नहीं किणसूं करूं जमास ? ॥५४॥
साजन बिसराया भला सुमरयां करे बेहाल ।
देखो चतर ! बिचारके साची कहूं जमाल ॥५५॥
सारसड़ी मोती चुगै चुगै त कुरळै काय ? ।
सगुण पियारा साजना मिळै त बिछड़ै काय ? ॥५६॥

४९—काठो हियो—हृदय मजबूत कर ।
५०—रायगणै—राजप्रासादमें आंगनमें । सायब इ०—प्रियतम याद आनेमें ।
१—रुन्नी—रोई । महाजन—गुरुजन । लोय—लोग ।
५२—चल्ले—चले । चल्लणहार—चलनेवाले हैं ।
५३—सज्जन इ०—हे प्रियतम तुम गुणोंके समुद्र हो उस समुद्रमें तैर-तैर करके मैं थक गई पर उसका अन्त नहीं मिला । सांभरे—याद आता है । विलूंबी इ०—जिसका सहारा लूं ।
५६—चुगै—चुगती है । काय—किसलिये ।

हित बिण प्यारा सज्जणा ! छळ कर छेतरियाह ।
पहली साथ सजायके पाछे परहरियाह ॥५७॥

(३)

ढोला ! ढीली हर किन्हीं मूक्या मनह विसार ।
सदेसोय न पाठवै जीवाँ किसै अधार ? ॥५८॥

कहो कनक कागद भया मसि भइ माणक-मोल ? ।
लाख टका लेखण भयी नही लिख्या दो बोल ॥५९॥

कागळ नही क मस नही नही क लेखणहार ? ।
सँदेसा ही नाविया जीवूं किसै अधार ? ॥६०॥

कागळ नही क मस नही लिखताँ आळस थाय ? ।
कै उण देस सँदेसड़ा मूँघे मोल बिकाय ? ॥६१॥

वायस बीजो नाम तै आपळ सस्सो ठवै ।
जे तूं हुवै सुजाण तो तूं वाहिसो मोकळे ॥६२॥

सदेसा बिन पाठवै मरिस्यूं हीया फूट ।
पारेवाका झूल ज्यूं, पड़सै आँगण चूट ॥६३॥

५७—हित—प्रेम । छेतरियाह—ठगा, धोखा दिया । परहरियाह—छोड़ दिया ।

५८—ढीली इ —प्रेमको शिथिल करके । मूक्या—मनसे भुलाकर छोड़ दिया । सदेसोय—सदेसा भी । पाठवै—भेजता है ।

५९—कनक इ —क्या कागद सोनेके मोलका महँगा हो गया । टका—रुपया ।

६०—कागळ—कागज । मस—स्याही ।

६१—थाय—होता है । मूँघे—महँगे ।

६२—वायस—वायसका जो दूसरा नाम है । (अर्थात् काग) उसके आगे ळ कार लगाकर (अर्थात् कागळ यानी पत्र) चीज भेजना ।

६३—बिन—मत । पारेवा—कबूतर । झूल—घोंसला । चूट—टूटकर ।

घर-घर बगो गोरड़ी गावै मगळचार।
कंथा! मतो चुकावजो तीजाँ-तणो तिवार ॥७१॥

(४)

वर्षा

ऊनमियो उत्तर दिसाँ गाज्यो गहर गँभीर।
मारवणी पिव समरियो नैणाँ वूठो नीर ॥७२॥
ऊनमियो उत्तर दिसाँ मेही ऊपर मेह।
हूँ भीजूँ घर आँगणे पिव भीजै परदेह ॥७३॥
आज धरा दिस ऊनम्यो महुली वरसै मेह।
बाहर था जे ऊबरे भीजाँ मांझ घरेह ॥७४॥
ऊनम आयी बादळी ढाल्यो आयो चित्त।
या बरसै रित आपणी नैण म्हारा नित्त ॥७५॥
बीजळियाँ पाराथियाँ नीठ ज नीगमियाँह।
अजे न सज्जण बाहुडे बळि पाछी बळियाँह ॥७६॥

७१—तीजाँ-तणो—सावन मासकी तृतीयाका यह राजस्थानका अेक प्राचीन त्यौहार है।

७२—ऊनमियो—मेह उमड़ा। वूठो—बरसा।

७३—मेही—बरसती। परदेह—परदेशमें।

७४—धरा-दिस—ध्रुवकी दिशा, उत्तर। भीजाँ—घरके भीतर भीग रही हैं। (आँसुओंकी वर्षासे)।

७६—पाराथिया—परतीया (मानी)। नीठ ज इ०—बड़ी कठिनतासे गई थी। बाहुडे—लौटे। बळि इ०—पर म फिर लौट आई (दूसरी वर्षा आ गई पर प्रियतम नहीं आये)।

जळथळपळजळहुयरह्यो बोलै मोर झिंगार ।
सावण घूमर हू सखी ! कहाँ मुझ प्राण-अधार ? ॥७७॥
चहुँदिस दामण सघन घण पीउ तजी तिण वार ।
मारू मर चातग भये पिउ-पिउ करत पुकार ॥७८॥
सावण आयो साजना । हरिया-हरिया बन्न ।
हरियो हुयो न अेकलो प्यारी थारो मन्न ॥७९॥
प्रीतम ! कामणगारियाँ थळ-थळ बादळियाँह ।
घण बरसै सूकियाँ सू-सूँ पाँगुरियाँह ॥८ ॥
भादरवैकी रुत भली भलो घटा बरसन्न ।
मेरा साजन है नहीं मेरा तन तरसत ॥८१॥
तड़कत-तड़कत बीजळी गड़कत-गड़कत गाज ।
कोप करी आवै घटा आ कुण ऊपर आज ? ॥८२॥
गाज नगारो चमक खग बरसन बाण तड़ाक ।
घटा नहीं या कामकी आवै फौज सड़ाक ॥८३॥

७७—झिंगार—कंगूरोंपर । घूमर—मस्त ।

७८—मारू इ॰—ये चातक पी-पी करते हुअे पुकार करते हैं । पूर्व जन्ममें ये मारू थे जो प्रिय के वियोग में पी-पी करती हुई मर गई और मरकर फिर चातक बनी और अब भी पी पी पुकार रही है ।

७९—हरियो—(१) हरा (२) प्रफुल्लित । धण—प्रियतमा ।

८०—कामणगारियाँ—जादू करनेवाली । घण इ॰—ये पानी बरसनेसे सूख जाती हैं और तू ते भी उठती हैं (क्योंकि चातक मरता है और बरसनेपर जाग जाता है ।)

८२—गाज—मेघकी गर्जना ।

८३—खग—तलवार ।

जळथळमळजळहुमरायो बोलै मोर किमार ।
सावण झूमर, हे सखी ! कहाँ मुझ प्राण-अधार ? ॥७७॥
चौंदिस दामण सघन घण पीव तणी छिब बार ।
मारू मर चातग भये पिव-पिव करत पुकार ॥७८॥
सावण आयो साजना ! हरिया-हरिया बन्न ।
हरिया हुयो न बेकलो प्यारी थणरो मन्न ॥७९॥
प्रीतम ! कामणगारियाँ थळ-थळ बादळियाँह ।
घण बरसै भूकियाँ भू-भूँ पाँगुरियाँह ॥८ ॥
भादरवैरी रुत भली भली घटा बरसात ।
मेरा साजन है नहीं मेरा तन तरसात ॥८१॥
भडकत-भडकत बीजळी धडकत-धडकत गाज ।
कोप करी आवै घटा या कुण ऊपर आज ? ॥८२॥
गाज नगारो चमक खग बरसत बाण तडाक ।
पता नहीं या कामकी आवै फौज सडाक ॥८३॥

—किमार—कगूरोंपर । झूमर—झमक ।

—मारू ह —ये चातक पी पी करते हुये पुकार करते हैं। पूर्व जन्मों में मारू थे, वह प्रिय के वियोग में पी पी रटते हुए मर गए और मरकर फिर चातक बना और अब भी पी पी पुकार रहा है।

—हरिया—( ) हरा, (२) प्रफुल्लित । मन—प्रियतमा ।

८०—कामणगारियाँ—जादू करनेवाली । घण इ०—ये पानी बरसनेसे सूख जाती हैं और भू-से भी उठती हैं (गर्मीसे चातक रहता है और बरसनेपर मर जाता है ।)

—गाज—मेघकी गर्जना ।

८१—खग—तलवार ।

बीज नहीं औ खाग-मळ बूंद नहीं औ बाण ।
घटा नहीं या काम की आयी फौज अथाग ।।८४।।
हरियाळी भूमी भयी भरिया सायर खाळ ।
आ कुमने आछी लगै बिन प्रीतम बरसाळ ।।८५।।
घन गाजै बिजळी खिवै बरसै बादळधार ।
साजन बिन लागै सखी ! अंग पर बूंद अंगार ।।८६।।
फौज घटा खग दामणी बूंद लगै सर जेम ।
पावस पिव बिन वल्लहा ! कहि, जीवीजै केम ? ।।८७।।
तीज नवेली तीजण्यां तीज नवेली बीज ।
तीज नवेली बादळी मो पर बरसत खीज ।।८८।।
नाळा नदियांसूं मिळै नदियां सरवर जाय ।
विरहणसूं वेला मिळै अैसी सही न जाय ।।८९।।
काळी-पीळी बादळी बरस भीजियो गात ।
ताजनिया लागा तिका साजनिया बिन सात ।।९०।।
मोर सोर कर-कर मसत तरवर बैठ्या जाय ।
घन बूठै छूटै घटा मो तन उठै हाय ।।९१।।
पल-पल बूंद पलंग पर कड़-कड़ बीज कड़क्क ।
आज पिया बिन अेकली धक-धक जीव धड़क्क ।।९२।।

८४—खाग—तलवार । अथाग—अचानक, सहसा ।

८५—सायर—सागर । खाळ—खाळे गड्ढे । कुमने—मुझे । बरसाळ—वर्षा ऋतु ।

८७—वल्लहा—हे प्यारे । जीवीजै—जिया जाय । केम—कैसे ।

८८—तीजण्यां—तीज मनानेवाली स्त्रियाँ । बीज—द्वितीया । बीज—बिजली ।

९०—ताजनिया—चाबुक की चोट । तिका—वे । साजनिया—प्रियतम ।

९१—मसत—मस्त । बूठै—बरसता है । हाय—हाहाकार ।

सर-सरिता जळ खूटिया मरिया सायर नीर।
तन जरिया लागी तपत अब घर आवो पीव ! ॥१०६॥

(७)

पग परसणकूं कर तपै श्रवण सुणनकूं बैण।
हिवड़ो तपै तुम मिलणकूं, मुख देखणकूं नैण ॥१०७॥
साजन थां किसड़ी करी जिणसूं कहूं सुभाय ?।
नहीं मिटणरी या कदे हिवड़ै लागी लाय ॥१०८॥
तन तरवर मन माछळी पड़ी बिरहके जाळ।
तड़फ-तड़फ जिव जात है, वणा मिलो जमाल ॥१०९॥
प्यारा मैं जिन सूं था विच न समाता हार।
अब तो मिलबो कठण है, बीच रहे बहु पहार ॥११०॥
मन लोभाणो जे हुवै पांखां हुवै त प्राण।
जाय मिलीजै साजणां रोकीजै महराण ॥१११॥

यहाँ आभाणी (तुम्हें कहाँ शरण मिलेगी ? इसमें उत्तर देती है कि उस समय हम उस नवविवाहिता नववधू के हृदयमें जाकर रहेंगी जिसका पति बिछुड़ गया है। उसका हृदय प्यार सन्तापसे जलता होगा, सैकड़ों वर्षाऋतु आकर भी वहाँ हमारा नाश नहीं कर सकती।)

१०६—खूटिया—सूख गया। सायर—सिन्धु। तपत—गर्मी संताप।

१०७—परसणकूं—छूनेके लिये। हिवड़ो—हृदय।

१०८—लाय—अग्नि। थां—आपने। किसड़ी—कैसी।

११०—मिला १०—मिलाओ—

हारो नारोपितः कण्ठे मया विश्लेषभीरुणा।
इदानीमावयोर्मध्ये सरित् सागर-भूधरा ॥

१११—लोभाणो—लोभ। साजणां—प्रियतमसे। रोकीजै—पार किया जाय। महराण—समुद्र।

डाढी ! अेक संदेसड़ो ढोलै लग पहुँचाय ।
जोबन चांपो मोरियो कळी न चूंटै काय ? ॥ ७ ॥
डाढी ! अेक संदेसड़ो ढोलै लग पहुँचाय ।
जोबन-कँवळ विकासियो भमर न बैसो आय ? ॥ ८ ॥
डाढी ! थे साहब मिलै यूं दाखविया जाय ।
आंख्यां सीप विकासियां स्वात न बरसो आय ॥ ९ ॥
डाढी ! अेक संदेसड़ा ढोलै लग ले जाय ।
जोबन फट्टि तळावड़ी पाळ न बांधो काय ? ॥ १० ॥
डाढी ! अेक संदेसड़ो ढोलै लग पहुँचाय ।
धण कुमळाणी कमदणी ससिहर ऊगो आय ॥ ११ ॥
पंथी ! भमतो जो मिलै कहै सनेही बत्त ।
धण कणेरकी कांब ज्यूं सूकी छाय सुरत्त ॥ १२ ॥
भरै पलट्टै भी भरै भी भर भी पलटेह ।
पंथी-हाथ संदेसड़ो धण बिलखती देह ॥ १३ ॥

७—चांपो—चंपकका पेड़ मुकुलित हुआ है। चूंटै—चुनता है तोड़ता है। न काय—क्यों नहीं।

८—भमर इ—भ्रमरके समान आकर क्यों नहीं बैठते !

९—स्वात—स्वाति नक्षत्रके मेघ बनकर।

१०—फट्टि—फट गई। पाळ—नदीका ऊँचा करार।

११—कुमळाणी—कुम्हला गई। कमदणी—कुमुदिनी। ससिहर—हे शशधर, चंद्र।

१२—पंथी—हे पथिक ! घूमता हुआ यदि तू प्रियतमसे मिल जाय तो हमारी यह बात कहना कि प्रियतमा कनेरकी डंडीके समान तुम्हारी यादमें सूख गई है।

१३—भरै इ—रोया करती है फिर करवट लेती है फिर रोती है फिर पलटकर करवट लेती है। इस प्रकार पथिकके हाथमें यह प्रियतमा अपना संदेसा रोती हुई देती है।

(२)

प्यारा ! आव्यो पावसा प्यारी भवरे वैस ।
साजन ! म्हाँरा पिहरमें थाँरा कोड हमेस ॥१०॥
मुसगो सासू साळियाँ साळा सव्याँ समीह ।
आवै थाटाँ राजरी पीहर आव्यो पीव ! ॥११॥२४१॥

१ —प्रेमाकी उत्सुकता

मेह वूठा हरिया हुवा भरिया हीव-निवाँण ।
अथपतियाँ जग्गी करै दो नी दोला दिवाण ! ॥ १ ॥
उत्तर भग उत्तरावसूँ चढ्ढे कळा छिटकाल ।
मन उमैग्यो मारू-धरा वा वगा बरसाल ॥ २ ॥
बीजळियाँ माँडेवियाँ खिवै हबूका लेह ।
दोस न थाँरो रावताँ राजा सीख न देह ॥ ३ ॥
उतरादो घन गरजियो मोटी छाँटाँ मेह ।
दोस न मोरो रावताँ राजा सीख न देह ॥ ४ ॥

—पिहर—पीहर । कोड—चाव ।
—समीह—सार ही । राजरा—आपकी ।

१ —प्रेमी की उत्सुकता

—निवाँण—नीचा भूमि । अथपतियाँ—राजासे । दो नी दोला—दे दीवान (बिदा छुट्टी) में ।
२—उत्तराद—उत्तर दिशा । मन उ —मारू देशके किये मन उमंगित हो उठा (प्रजाका मारवाड़का निवासी है) ।
—दोस न —सरनारा मारेको दोष नहीं क्योंकि उसका मालिक राजा जानकी आज्ञा नहीं देता ।
४—मगा उत्तावे—जब किसीकी प्रतीक्षा होती है तो कम दबाया जाता है ।

जब जागूं तद एकली जद सोऊं जद बेय ।
सुहिणा ! तैं मनै छेतरी भागी दोनों हेय ॥ ६ ॥
सुहिणा ! तम मरावस्यूं हिये विराऊं एक ।
जब सोऊं जद दोय जन जद जागूं जद एक ॥ ७ ॥
जब सोऊं तब जागवै जब जागूं तब जाय ।
मारू ढोलो साँभरै इण परि रैण बिहाय ॥ ८ ॥२६३॥

[१]१२—शकुन

खिवै निमाणी जीवडी बोलै साम निढाल ।
सा जोमी साजन वसै सो किम भावै जल्ल ? ॥ १ ॥
आज फरूकै आँखियाँ माम मुजा महराह ।
सहा ज घोडा सज्जणाँ सामा किया वराँह ॥ २ ॥
अहर फरक्कै तन फुरै तन फुर नैण फुरन्त ।
नामी-मण्डळ सहु फुरै साँझे माह मिळन्त ॥ ३ ॥
बाँबो अंग फरक्कण लग्यो फरकत बाँबी आँख ।
साजन आसी हे सखी ! चढ़ चोबारै झाँख ॥ ४ ॥२६७॥

१—बेय—दो ।
७—सुहिणा—हे सुपने । छेतरी—ठगी धोखा दिया । हेय—हैं क्या हूँ ।
८—जागवै—सपनेमें आकर प्रियतम जगाता है । जाय—चला जाता है ।
साँभरै—प्रियतमा प्यारेको याद करती है । इण परि ह —इस भाँति रात बीतती है ।

१२—शकुन

२—घोडा—प्रियतमने अपने घोड़े घरकी ओर किये (घरकी ओर प्रस्थान कर दिया है) ।
१—अह —हाथ । फरक्कै, फुरै—फड़कता है । सहु—सब ।
४—झाँख ह —सप्ताको प्रयतम निरिये । बाँबो—बाँया । आँख—देख ।

साजन आया हे सखी ! सैंध साईंना मेर ।
पाई नव निध नार, मन नगर बधाई फेर ॥ ७ ॥
साजन आया हे सखी ! कज्जा सह सरियाह ।
पूनिम-करैं चाँद ज्यूँ दिस च्यार फळियाह ॥ ८ ॥
साजन आया हे सखी ! ज्यांरी हूँती चाव ।
हियड़ो हेमागर भयो तन पिंजर न माय ॥ ९ ॥
साजन आया हे सखी ! हुवा मूझ हियाह ।
आजूणे दिन ऊपरै थोड़ा थळि कीयाह ॥१०॥
साजन आया हे सखी ! हुवा मूत्त हियाह ।
मूका था मू पाल्हव्या पाल्हविया फळियाह ॥११॥
हियमें करै बधामणा सखी ! ह सोधा काज ।
जै सुपनंतर दीसता नयणे देख्या आज ॥१२॥
जिणनूं सुपनै देखती प्रगट भया तिण आय ।
डरतो आँख न मूँदही मत सुपनो हुय जाय ॥१३॥
सोई साजन आविया जाँकी जोती बाट ।
थाँभा नाचै घर हँसै खेलण लागी खाट ॥१४॥

७—साईंना मेर—साथियोंको लेकर ।

८—कज्जा इ —सब काम सिद्ध हो गये । च्यार—चारों ।

९—हूंता—थी । हेमागर—हिमगिरि । माय—समाता है ।

—आजूणे इ —आजके दिनपर हमने दिन न्यौछावर कर दिये ।

१—मूका इ —जो मनोरथ सूख गये थे, वे पल्लवित होकर सफल होगये ।

११—बधामणा—बधाइयाँ, बधावा । सोधा—सिद्ध हुये । सुपनंतर—जो स्वप्नमें दिखाई देते थे ।

१४—थाँभा नाचै—सारा घर और घरके निर्जीव पदार्थ भी हर्षसे नाचते हुये दिखाई देते हैं ।

म्हेनै ढोलो मूँघियो सूँमे सककड़ियेह ।
म्हाँनै प्रिउजी मारिया चपारै कड़ियेह ॥ ७ ॥
म्हेनै ढोलो मूँघियो म्हाँसूं आवी रीस ।
चाबा-केरी फूँसली ढोळी साहब-सीस ॥८॥२५०॥

१५—मान

गहली ! गरब न कीजिये समै सुहाग न पाय ।
पीकी जोबन जेठ ज्यूँ माह न छाँह सुहाय ॥ १ ॥
बतळावै जब बाम बतळाया बोलै नहीं ।
कदयक पड़िया काम मोरा करसो मानवी ! ॥ २ ॥
तन मिळिया तो क्या हुआ मन की मिटी न प्यास ।
जैसे सीप समदमें करै तिरास-तिरास ॥ ३ ॥२५३॥

७—म्हेनै इ०—प्रियतम कमरकी छड़ी लेकर मुझसे रूठ गया । जिसने मुझे चपकनी छड़ियोंसे मारा ।

८—म्हेनै—जब प्रियतम मुझसे रूठ गया तो मुझे रीस आयी और मैंने चोवा (अरगजा) का पात्र स्वामीके सिरपर उँडेल दिया ।

१५—मान

१—हे पगली ! सुहागपर सौभाग्यको पाकर गर्व मत कर । यह सब जेठ मासमें जैसा मानोंके लिये यौवन रूप होती है वही माघमें अनचाहनी लगने लगती है ।

२—हे नागरी ! प्रिया जब बुलाती है तब तो बोलते भी नहीं, पर कभी काम पड़ेगा तो मनुहार करते फिरोगे ।

३—मिळिया—मिले । समद—समुद्र । तिरास—प्यास, प्यास (सीपकी प्यास स्वाति जलसे ही बुझती है ।)

पूनम पूरो ऊगसी ससी न सांझो होय ।
उछगापारी गोरबी बैठी निरमळ होय ॥ १५ ॥
धण मायी पिव झाकिया पाङा पास चरंत ।
पसवाडो पूरो हूयो दिवला सास भरंत ॥ १६ ॥३२८॥
॥१ १५॥

१५—पूरो—पूरा (चमकता)। सांझो—दागित। गोरडी—गोरी स्त्री।
१६—धण—प्रिया। मायी—दूस पुर। झाकिया—झुका गये। दिवला—दीपक। सास—गलाड़ी।

(८) शान्त-रस

दस दुवारको पींजरो तामैं पंछी पौन।
रहण अचूंबो है, जसा जाण अचूंबो कौण? ॥ ४ ॥
जो उग्या सो आंथवै फूल्या सो कुमळाय।
जो चिणिया सो ढह पड़ै जो आया सो जाय ॥ ५ ॥
पाणी-केरा बुदबुदा इसी मिनखरी जात।
अेक दिनां छिप जावसी ज्यूं तारा परभात ॥ ६ ॥
आया सोही जावसी राजा-रंक-फकीर।
कोई सिंघासण बैठ काइ पांव जमी जंजीर ॥ ७ ॥
ऊमरडै उणसार, टिमट मिल्या जग-रेलमें।
कै बंगा कै बार, ठेसण-ठेसण उतरसी ॥ ८ ॥
ज्यूं बादळ मिल बीछड़ै आप-आपमें जाय।
तिन दसका मेळा भया रहणा निहचै नांय ॥ ९ ॥
नदी-किनारै देखिये सज्जन सब संसार।
कै उतरया कै उतरै (कै) बुगचा बांध तयार ॥ १० ॥

४—दस दुवार—शरीरमें दस छिद्र हैं—दो आंखोंके दो नासिका, अेक मुंहका दो गुह्यस्थानोंके दो कानोंके और अेक मस्तिष्कमें ब्रह्मरंध्र। पौन—पवनरूपी पक्षी उसमें रहता है। पींजरो—अर्थात् शरीर। रहण इ०—अैसे पिंजरेमें अैसा पक्षी रहे यही आश्चर्य है यह चला जाता है यह तो कोई आश्चर्य की बात नहीं। जसा—जसवंतसिंह (कविका नाम)।

७—काइ इ०—पुण्यात्मा सिंहासनपर बैठकर और पापी बंधे हुअे।

८—उणसार—अनुसार। कै इ०—कई जल्दी और कोई देरसे। ठेसण—स्टेशन।

९—आप आपमें—अपने-आप स्वतः। निहचै—निश्चय ही।

१०—कै—कई। तयार—बांधकर किये तयार।

चलना है, रहना नहीं, चलना बिसवा बीस ।
ऐसे सहज सुहागपर कौन गुँथावै सीस ? ॥११॥२९॥

३—यौवनापगम

जोबन था जब रूप था, गाहक था सब कोय ।
जोबन-रतन गमायकै, बात न पूछै कोय ॥ १ ॥
जोबन जोगी हो गया, फेरी देख्या द्वार ।
मैं पापण ताँवठ रही, फिरया न दूजी वार ॥ २ ॥
नहिं अँगना नहिं देहरो, नहीं ससुरको गाँव ।
दुलहन-दुलहन टेरतीं, दुनिया पड़ गया नाँव ॥ ३ ॥३२॥

४—चेतावनी

उठ फरीदा ! जाग रे, जागणकी कर धूप ।
या दम हीरा लाल है, गिन-गिन रबकूँ सूँप ॥ १ ॥
उठ फरीदा ! जाग रे, झाड़ू देव मसीत ।
तूं सोवै रब जागता, तिस बिध बने पिरीत ॥ २ ॥

११—बिसवा बीस—बीस बिस्वे अर्थात् अवश्य ही । सहज—स्वाभाविक । सुहाग—अर्थात् सांसारिक जीवन । सीस गुँथाना—चोटी-बंदी तय्यारियाँ करना ।

३—यौवनापगम

२—देख्या—दे गया । पापन—पापिनी, अभागी । फिरया—लौटा ।
३—टेरतीं—पुकारते पुकारते ।

४—चेतावनी

१—धूप—प्रयत्न, प्रबल इच्छा । दम—श्वास । रब—परमात्मा । सूँप—सौंप दे ।
२—मसीत—मसजिद । पिरीत—प्रीति ।

साँई। टेढी मैंखियाँ बैरी बसक तमाम।
दुनियक झोला महरका मस्तूं करे सलाम ॥ २ ॥
कब सुबरी चोका किया कब हर पूछी जात ?।
प्रीत पुरातन जाणकर फळ पाया रघनाथ ॥ ३ ॥
अळक न्हाये परसरा पनित म पावन होय।
पावन हुवै हर-नांवसूं साध-बेद कह छोम ॥ ४ ॥
मूंढे जाका सरवणा फोड़ै जाका नैण।
कादूं-बार्ते पीमड़ी हर बिन उबरै बैण ॥ ५ ॥
जाके हिरदै हर बसै हर-भगतीमूं प्यास।
लाजा छानी क्यूं रहै कसतूरीकी बास ॥ ६ ॥
पुत्र माणक-मोतिया मूठी जपमय जोत।
पुत्र सब आभूखणा मांबि पियाजिरी पोत ॥ ७ ॥
मत्र पाट-पटबरा मूठा छिलमी चीर।
मांबि पियाजिरो गूदडो सिरमळ रहै सरीर ॥ ८ ॥
उत्तम भाग बणाय दे उण भोगनमें साग।
उण अनगा हा भगा अपणी पियाजिरो साग ॥ ९ ॥

—
—१ [illegible] गुभागी भाँतें पाडी मी वही हो दो करा
[illegible] है। [illegible] पाना-ना। महर—दया।
[illegible] न। पुरातन—पुरानी। [illegible]
[illegible]
[illegible] रचना।

|

खेत बिराणो लाखको अपणे काज न होइ ।
ताके संग सिधारतां भला न कहुंही कोइ ॥१०॥
खेत बिराणे निवाणकूं क्यूं उपजावै बीज ।
काळर अपणो ही भलो जामें निपजै चीज ॥११॥
भगति-भाव भादूं नदी सभी उठी घहराय ।
सब्बा सोई जाणिये जेठ मास ठहराय ॥१२॥
बादळ-बादळ बीजळी ऐसें घट घट राम ।
मूरख मरम न जाणियो पायो नाम न ठाम ॥१३॥
माल-माल सब ही कहै, सबके पल्लै माल ।
गाँठ खोल परखै नहीं ज्यांसूं फिरै कँगाल ॥१४॥
कसतूरी कुण्डल बसै मृग ढूंढै बन मांय ।
ऐसे घट-घट राम है, दुनिया देखै नांय ॥१५॥
सो साईं तनमें बसै ज्यों फूलनमें बास ।
कसतूरीके मिरग ज्यां फिर-फिर सूंघै घास ॥१६॥
दिल मांही दीदार है, दूर गयां कछु नांय ।
परगा भरम न भूलियै पति पोढ़या पुर मांय ॥१७॥

---

१० —बिराणा—पराये। सिधारतां—जानेसे।

११—निवाण—उपजाऊ जमीन। क्यूं —क्यों डिवाता है। काळर—जो उपजाऊ न हो ऐसी जमीन। निपजै—पैदा होती है।

१२—भादूं नदी—भादोंकी नदी, ऐसी नदी जो बरसातमें उमड़ पड़े पर बादमें सूख जाय। सब्बा—नदी।

१५—कुण्डल—नाभिमें।

१७—दीदार—दर्शन। पति—परमात्मा रूपी प्रियतम। पोढ़या—सोये हैं।

दिन दस दोस्त देखकर मरग्यो कहा गैवार ! ।
जोबन माया बरस सौ जात न लागै बार ॥१८॥

माया खाली हाथ माया जोड़ी जनम भर ।
सुई न चाली साथ खाली हाथाँ चालसी ॥१९॥

माया अमर न कोय थिर माया थोड़ी रहै ।
इण्में बार्ता दाय माया काया नोपसा ! ॥२० ॥

सज्जन रोवै मूरखाँ हँसै न बूज विचार ।
गया स आपण्का नहीं रह्या स आपणहार ॥२१॥

हरीदास लीजै नहीं कचन बदळै काच ।
जो कुछ गया स जाण दे तूँ रहतांसूँ राच ॥२२॥

माया मेरे रामकी धरणीधरकी देह ।
पूँजी साहूकारकी बस कोई कर नेह ॥२३॥४४॥

४—पश्चात्ताप

रात गमायी सोयकर, दिवस गमायो खाय ।
हीरा जनम अमोल था कौडी बदलै जाय ॥ १ ॥

१८—गरम्या—गरम भर गया । बार—देरी ।

१ —माया—सम्पत्ति । चालसी—चलेगा ।

२ —थिर [illegible] —सम्पत्ति थोड़े ही समय तक स्थिर रहती है ।

२१—रूपक—विसर्जित । बूज विचार—क्या विचार करके । गया—जो चले गये । स—वा [illegible] । रह्या—जो पास रह गये हैं । इसमें इ०—इसमें दो ही बातें लाभकी हैं—मान कर [illegible] और [illegible] कर लेना ।

२ —रहतां—जो बच गए हैं । राच—प्रेम कर, संतोष कर ।

४—पश्चात्ताप

— [illegible]—[illegible] । बदलै—बदलमें ।

साँई ! थांरी भेंखियां चैरी सलक तमाम ।
दुखियक भोसा मानखा सबनूं करै समाम ॥ २ ॥
कद सबरी चोखा दिया कद हर पूछी जात ? ।
प्रीत पुरातन जाणकर फळ पाया रघनाथ ॥ ३ ॥
जळके न्हाये परसरा पतित न पावन होय ।
पावन हुवै हर-नामसूं साध-भेद मत होय ॥ ४ ॥
मूंडूं पाका सरवणा फोड्यूं जाका नैण ।
कादूं-कानूं चोभती हर बिन उचरै बैण ॥ ५ ॥
पाके हिरदै हर बसै हर-भगतांमें प्यास ।
खोजी ज्ञानी बसूं रहै कसतूरीमें बास ॥ ६ ॥
झूठा माणक-मोतिया झूठी जगमग जोत ।
झूठा सब आभूखणा साँचा पियाजिरी पोत ॥ ७ ॥
झूठा पाट-पटंबरा झूठा दिखणी चीर ।
साँचा पियाजिरी गूदड़ी निरमळ रहै सरीर ॥ ८ ॥
छप्पन भोग बहाय दै, उण भोजनम दाम ।
मूण-मसूरो ही भलो जपणै पियाजिरो नाम ॥ ९ ॥

२—साँई—हे स्वामिन् ! यदि तुम्हारी आँखें थोड़ी भी टेढ़ी हों तो सारा संसार शत्रु हो जाता है । दुखियक—थोड़ा-सा । महर—दया ।

३—सबरी—शबरी, भीलनी । हर—भगवान । पुरातन—पुरानी । फळ पाया—(जूठे) फल खाए । रघनाथ—श्रीराम ।

५—सरवणा—कान । जाका—उसके । बैण—वचन ।

६—[illegible]—[illegible] । कसी—जिसी ।

७—पियाजी—प्रियतम, परमात्मा । पोत—माला ।

८—दिखणी चीर—दक्षिणका बहुमूल्य वस्त्र ।

९—मूण मसूरो—भजन ही चाहे न हो ।

छेत विरायो मालको अपणे काज न होइ ।
ताके सग सिंधारतौं भला न कहसी कोइ ॥१०॥
देश विराणे निवाळकूं क्यूं उपजावै बीज ।
कासर अपणा हो मसो जामें निपजै चीज ॥११॥
भगति-भाव भादू नदी सभी उठी पहुराय ।
सव्वा सोई जाणिये जेठ मास ठहराय ॥१२॥
बादळ-बाच्छ बीजळी ऐसें घट-घट राम ।
मूरख मरम न जाणियो पायो नाम न ठाम ॥१३॥
सास-सास सब ही कहै, सबके पल्लै लाल ।
गाँठ खोल परखे नहीं ज्यांसूं फिरै कँगाल ॥१४॥
कस्तूरी कुण्डळ बसे मृग ढूँढे बन माँय ।
ऐसें घट-घट राम है, दुनिया देखै नाँय ॥१५॥
सो साईं तनमें बसे ज्या फूलममें बास ।
कसतूरीके मिरग ज्या फिर-फिर सूँघै घास ॥१६॥
ज्यि माँहो दीवार है, दूर गयां कछु नाँय ।
पखा भरम न भूलियै पति पोडया पुर माँय ॥१७॥

---

१ —विराणा—पराया । सिधारतां—जाते ।

११—निवाँड—उपजाऊ जमीन । क्यों ह —क्यों सिंचाता है । कासर—का उपजाऊ न हो ऐसी जमीन । निपजे—पैदा होती है ।

१२—भादू-नदी—भादोंकी नदी ऐसी नदी जो वर्षामें उमड़ पड़े, पर बादमें सूख जाय । सव्वा—नदी ।

१५—कुण्डळ—नाभिमें ।

१७—दीदम—दर्शन । पति—परमात्मा रूपी प्रियतम । पाल्हा—पास है ।

दूर कहाँसूं दूर है, नेड़ा तिणसूं नांय।
नेड़ा तिणसूं, परसरा जा जाजै दिस मांय ॥१८॥
ना घर भला न वन भला, जहाँ नहीं निज नाम।
दादू, उनमन मन रहै, भला तु सोई ठाम ॥१९॥
भँवरा लुबधी बासका, मोह्या नाद कुरंग।
दादूका मन रामसूं, दीपक जोत पतंग ॥२०॥
श्रवणा राच्या नादसूं, नैना राच्या रूप।
जिभ्या राची स्वादसूं, दादू एक अनूप ॥२१॥
सुन्न सरोवर, हंस मन मोती आप अनन्त।
दादू, चुग-चुग चाँचभर, यूं जन जीवै संत ॥२२॥

७—ईश्वर विरह

मन चित चातग ज्यूं रटै पिव-पिव लागी प्यास।
दादू, दरसण कारणै पुरवो मेरी आस ॥ १ ॥
विरहिण कुरलै कुंज ज्यूं, निस-दिन तड़फत जाय।
राम सनेही कारणै रोवत रैण बिहाय ॥ २ ॥

१८—नेड़ा—निकट।
१९—निज—अपना परमात्माका। उनमन—परमात्माके विरहमें व्याकुल।
२०—लुबधी—लोभी। बास—सुगन्ध।
२१—श्रवणा—कान। राच्या—अनुरक्त हुए। जिभ्या—जीभ।
२२—आप अनन्त—स्वयं परमात्मा। चाँच—चोंच।

७—ईश्वर विरह

१—चातग—चातक। कारणै—लिये। पुरवो—पूरी करो।
२—कुरलै—करुण शब्द करती है। कुंज—क्रौंच। रैण—रात। बिहाय—बीतती है।

दादू, इस संसारमें मुझ-सा दुखी न कोय ।
पीव मिलनके कारणे मैं भर भरिया रोय ॥ ३ ॥
बिरही जन जीवै नहीं कोट कहै समझाय ।
दादू गहला हो रहै तड़फ-तड़फ मर जाय ॥ ४ ॥
देख्योंका अचरज नहीं अणदेख्योंका होय ।
देख्यां ऊपर दिल नहीं अणदेख्यांकूँ रोय ॥ ५ ॥
सबद तुम्हारा ऊजला चिड़िया क्या कारी ? ।
तुंही-तुंही निस दिन करै बिरहाकी मारी ॥ ६ ॥१०॥

८—परमात्माका भरोसा

दिया सिरजणै टीकणा रहा अचीता सोय ।
धीरज आसा अमरकी ताकी होड न होय ॥ १ ॥
सुख माने सो सुक्ख है दुख माने सो दुक्ख ।
सच्चा सुखिया राम है दुख माने ना सुक्ख ॥ २ ॥
रिजक न पल्लै बांधता पछी अरु दरवेस ।
जिनका रखिया राम है तिनके रिजक हमेस ॥ ३ ॥

४—गहला—बौरी । तड़फ—पागल ।

५—अणदेख्योंका—नहीं देखे हुए का ।

६—ऊजला—उज्ज्वल । तुंहीं-तुंहीं—(१) तू ही है तू ही है (२) लम्बी ममक चिड़ियाकी बोली ।

८—परमात्माका भरोसा

१—सिरजै—बनाकर । अचीता—निश्चिन्त होकर । धीरज—वणिक नाम । अमर—परमात्मा । होड—होड़ बराबरी ।

३—रिजक—निर्वाहक साधन, धन दौलत । दरवेश—फकीर साधु । रखिया—रक्षक । राम—परमात्मा ।

सांसा मत कर मूरखा सिरपर है साँई ।
जो कुछ लिख्या लिलाटमें भेजेगा माँई ॥ ४ ॥
सांसा मत कर, मूरखा सिरपर है किरतार ।
वोही सारे जगतका सांसा मेटणहार ॥ ५ ॥
जण-जणरो मुख जोय जाचक भटकै जगतमें ।
सबरो दाता सोय उणसूं ही पूरा पड़ै ॥ ६ ॥
कीड़ीनै कणको मण को भोजन मैंगळाँ ।
करता जण-जणको मेळै जुगमें जैरिया ॥ ७ ॥
जग इण साकरदारके सप न साकर रूप ।
सब दिन पूरै साँइया चाँच दयी सो चूण ॥ ८ ॥
कोण किसीको देत है, देत करम झकझोर ।
उळझी-सुळझी आपही पता पवनकै जोर ॥ ९ ॥११॥

९—साधु

साधू हुत कर बैठ ग्या' साधू वो ही ठीक ।
जाको साधू मत कहो घर-घर माँगै भीख ॥ १ ॥

४—सांसा—सोच फिक्र । मूरखा—हे मूर्ख । माँई—यहीं ।
५—साम—वही परमात्मा । उणसूं ही—उसीसे ।
७—कीड़ीनै—चींटीके लिये । मण को—एक मनभर । मैंगळाँ—हाथियोंके लिये । करता इ०—जन जनका कर्ता अर्थात् परमेश्वर । जुग—जग ।
८—जग इ०—इस संसारमें पक्षीके साथ साकरका बन्धन कभी नहीं रहता, फिर भी परमात्मा सदा उसे चाबकर खानेको देता है । जो चोंच देता है वो चून भी देता है जिसने मुँह दिया है वह खानेको भी देगा ।
—पता—पत्ता, पत्ती । करम—कर्म ।

९—साधु
—बैठ ग्या—बैठ गया है ।

माया वेश्या मन कुसी मुठक पसारे हाथ।
हरीदास तूं मन करचे वां चोरांका साथ ॥ २ ॥
सांचा तिलक लगाय फटकधजा उडती फिरै।
खोटो दाणो खाम कोया तिरसो केलिमा ॥ ३ ॥
साधू मही सराहिये बुझै बुझावै नांय।
फल-फूलन छेड़ै नहीं रहै बगीचै मांय ॥ ४ ॥
बहता पाणी निरमला गंध्या गंदेला होय।
साधू जन रमता भला दाग न लागै कोय ॥ ५ ॥
साईंसूं सांचा रहा बंदांसूं सतभाव।
भावें लांबा केस रख भावें घोट मुंडाव ॥ ६ ॥
साधू माई-बाप है साधू भाई-बन्द।
साध मिलावें रामकूं काटे जमका फन्द ॥ ७ ॥१०॥

१०—भगवानकी महिमा

धरती सब कागद करूं कलम करूं बनराय।
सात समँद स्याही करूं हरि-गुण लिख्या न जाय ॥ १ ॥
बीज भलाहल जल प्रबल नदियाँ सातके नीर।
पीता सरवर कुम्भ भरै राज बिना रघुबीर ॥ २ ॥१८॥

२—कुसी—मक्खी। मुठक—मुठ्ठ करकर। तू मत इ०—ऐसे बदमाश साधु नहीं, चोर हैं इन चोरोंका साथ तू कभी मत करना।
५—गँदेला—मैला, गँदला। रमता—घूमते ही।
६—बंदा—मनुष्य। भावें—चाहे।

१०—भगवान की महिमा

१—बनराय—वन-राजि जंगल। समँद—समुद्र।
२—बीज इ०—बिजली तूल चमक रही है। प्रबल—पूरा। राज—आप।

(९) प्रकीर्णक

१—वर्षा-सम्बंधी

परभाते मेह डंबरा दोपाराँह तपत ।
रात्यूँ तारा निरमळा चेला ! करो गच्छत ॥ १ ॥
परभाते मेह डंबरा साँझे सीला वाव ।
डंक कहै सुण भड्डळी ! काळां-तणा सभाव ॥ २ ॥
दिन-ऊगाँ गह डंबरा आथण झोणी भाळ ।
सहदे कहै र मिडला ! औ अहनाणाँ काळ ॥ ३ ॥
दिन-ऊगाँरी धीतरी सिञ्झ्यारा गडमळ ।
रात्यूँ तारा निरमळा औ काळाँरा खेम ॥ ४ ॥
ऊगतैरो माछलो आथमतैरो मोग ।
डंक कहै सुण भड्डळी ! नदियाँ चढ़सी गाग ॥ ५ ॥

१—वर्षा सम्बन्धी

१—सवेरे मेघका आडम्बर हो दुपहरको गर्मी पड़े और रातमें तारे निकल आवें तो, हे शिष्य ! यहाँ से चले चलो (क्योंकि अकाल पड़ेगा)।

२—सवेरे मेघका आडम्बर हो और संध्याको ठण्डी चले तो डंक कहता है कि हे भड्डली ये अकालके लक्षण हैं।

३—सवेरे मेघका आडम्बर हो और संध्याको बादल कम हो जायँ तो ये अकाल के लक्षण हैं।

४—सवेरे छितराए हुए बादल हों और संध्याको गहरी घटा हो और रातको आकाश साफ होकर तारे निकल आवें—ये अकालके लक्षण हैं।

५—यदि सवेरे इन्द्रधनुष और सूर्यास्त के समय अमोघ दिखाई दे तो नदियों में अवश्य बाढ़ आवेगी।

कळसै पाणी गरम है, चिड़ियाँ न्हावै धूर।
ले अडा चीटी चढ़ै तो बरखा भरपूर ॥ ६ ॥
धुर असाढ़ पडवा दिवस जे अंबर गरजंत।
छत्री-छत्री जूझसी निहचै काळ पडंत ॥ ७ ॥
आसाढ़ारी सुद नम घन बादळ घन बीज।
नाळा कोठा खोल दो राखो हळ नै बीज ॥ ८ ॥
सावण पहले पाखमें जे तिथ ऊणी थाय।
कइयक-कइयक देसमें टाबर बेचै माय ॥ ९ ॥
सावण पहली पंचमी मेह न मांडै झाळ।
पीव! पधारो माळवै हूँ जाऊं मोसाळ ॥ १० ॥
सावण पहली पंचमी ना बादळ ना बीज।
हळ फाड़ो ईंधण करो ऊभा चाबो बीज ॥ ११ ॥
कातक सुद एकादसी बादळ बिजळी होय।
तो असाढ़में भडुळी! बरखा चोखी जोय ॥ १२ ॥

६—कळसमें पानी गर्म हो, चिड़ियाँ धूलमें नहावें और चींटियाँ अंडे लेकर ऊपर चढ़ें तो (जान लो कि) भरपूर वर्षा होगी।

७—आसाढ़ कृष्ण प्रतिपदाको आकाशमें बादल गरजे तो क्षत्रियोंमें युद्ध होता है और निश्चय ही अकाल पड़ता है।

८—आसाढ़ सुदि नवमीको घन बादल और घन बिजली हो तो नाले कोठे खोल दो और हल तथा बीज पासमें रखो (वर्षा होगी)।

—सावन बदीमें यदि कोई तिथि घट जाय तो किसी-किसी देशमें ऐसा भारी अकाल पड़ता है कि माताएँ अपनी बच्चों बेचने लगती हैं।

—सावन कृष्ण पंचमीको मेह न गिरे तो हे पति! तुम मालवे जाओ और मैं पीहर जाती हूँ (अकाल पड़ेगा)।

मिगसर बद आठम घटा बीज समकी जाय।
तो सावण बरसै भला साख सवाई होय ॥१३॥

पोस अँधेरी सत्तमी जो पाणी नहिं देय।
तो अदरा बर्सै सही जळ-थळ अेक करेय ॥१४॥

पोस मास दसमी दिवस बादळ चमकै बीज।
तो बरसै भर भादवा साधो! खेलो तीज ॥१५॥

माघ सुदी पूनम दिवस चांद निरमळो जोय।
पसु बेचो कण संग्रहो काळ हळाहळ होय ॥१६॥

हाथी सुक्र-सनीचरी मंगळवारी होय।
चाक चहोडै मेदनी विरळा जीवै कोय ॥१७॥

जेठ बदी दसमी दिवस जो सनिवासर होय।
पाणी होय न धरण पर, बिरळा जीवै कोय ॥१८॥

आखा रोहण बायरी राखी स्रवण न होय।
पोही मूळ न होय तो महि डोलतो जोय ॥१९॥

मूळ गळयो रोहण गळी अद्रा बाजी बाय।
हाली! बेचो बळदिया खेती न्याय नसाय ॥२०॥

१३—समकी—चमके। साख—फसल।

१४—अँधेरी—कृष्णपक्षकी। अदरा—आर्द्रा नक्षत्रके समय (आषाढ़में)

१५—खेलो तीज—आनंद मनाओ।

१६—कण—नाज। संग्रहो—जमा करो। हळाहळ काळ—भयंकर अकाल।

१७—चाक चहोडै—पृथ्वीकी हालत भयंकर होगी।

१९—अक्षयतृतीयाको रोहिणी नक्षत्र न हो राखी पूनम (रक्षाबंधन) को श्रवण नक्षत्र न हो और पौषकी पूर्णिमाको मूल नक्षत्र न हो तो पृथ्वीके लोगोंको भटकते देख लो (अकाल पड़ता है)।

२०—मूल नक्षत्रमें पानी बरसे और रोहिणीमें पानी बरसे तथा आर्द्रा नक्षत्रमें हवा चले तो हे किसान! बैल बेच दो खेतीमें लाभ नहीं होगा।

मिरगा बाव न बाजिया रोहण तपी न जेठ ।
क्योंने बाँधो झूँपड़ा बैठ्या बडला हेठ ॥२६॥
जेठ दीत भादूं सनी माह ज मंगळ होय ।
परज्या नटसी अन बिना बिरला जीवै कोय ॥२७॥
रातूं बासे कागला दिनमें बोले स्याळ ।
कै नगरी राजा मरै (कै) पड़ै अचूका काळ ॥२८॥

२—कूट व पहेलियाँ

(१)

दशसुत कामन कर लिये करन हंस प्रतिपाल ।
चोंच चकोरन चुग लिये कारण कोन जमाल ? ॥ १ ॥
अरुणी राची करन पै ताकी मिलनत कोर ।
पावकके भोर भये तात चुगत चकोर ॥ २ ॥

२६—मृगशिर नक्षत्रमें (सूर्यके होते समय) हवा नहीं चली और जेठमें रोहिणी नक्षत्रमें (सूर्यके रहते समय) गर्मी नहीं पड़ी तो फिर क्यों झोंपड़ियाँ बनाते हो, बड़के नीचे ही बैठे रहो (वर्षा नहीं होगी)।

२७—जेठमें पाँच इतवार, भादोंमें पाँच शनि और माघमें पाँच मंगल हों तो प्रजा बिना अन्नके मरती है और कोई बिरले ही बचते हैं।

२८—रातमें कौए बोलें और दिनमें सियार बोलें तो या तो नगरीका राजा मरता है या अवश्य ही अकाल पड़ता है।

२—कूट व पहेलियाँ

१—दशसुत—मोती। कामिनीने हंसोंको चुगानेके लिये मोती हाथमें लिये पर हंस डरकर पास नहीं आते हैं और चकोर उन्हें चुग लेते हैं। हे जमाल, इसका क्या कारण है ?

२—अरुणी इ०—हाथोंमें मेंहदी लगी हुई थी उसका प्रतिबिम्ब मोतियोंपर पड़ रहा था इससे अंगारोंके धोखेमें पड़कर चकोर मोतियोंको चुग रहे हैं।

(९) विनय

१—भगवानकी स्तुति

१—सिल उधरती तारि—अहल्या गौतम ऋषिकी स्त्री थी। ऋषिके शापसे यह शिला हो गई थी। रामचन्द्रजीने अपनी चरण-धूलिका स्पर्श कराकर उसका उद्धार किया था। कथाके लिये तुलसीकृत रामायण का बालकांड (दोहा २४०) देखो।

नाउ धीवर इ०—पिताकी आज्ञासे वनमें जाते हुए श्रीराम गंगाके किनारे पहुँचे तो उन्होंने गंगा पार करनेके लिये धीवरसे नाव लानेको कहा, पर वह बोला कि महाराज आपके चरणोंका स्पर्श करके पत्थर तक तरकर आदमी बन जाते हैं, तो बेचारी काठकी नाव क्या चीज है और यदि वह तर गई तो फिर मैं अपना पेट क्योंकर पालूँगा। इस प्रसंग-का बड़ा ही सुन्दर वर्णन तुलसीदासजीने रामायण, कवितावली आदि में किया है।

३—गरुड़—ये कश्यप और विनताके पुत्र तथा विष्णुके वाहन कहे गये हैं। इनकी गति बहुत तेज है। सूर्यका सारथी अरुण इनका छोटा भाई है।

वारण—ग्राहसे ग्रसित गजेन्द्रकी रक्षाकी कथा बहुत प्रसिद्ध है। भगवान गजेन्द्रको बचानेके लिये चले, तो उन्हें गरुड़की चाल भी धीमी जान पड़ी और उसे छोड़कर पैदल ही दौड़ पड़े।

४—आयस—आज्ञा, प्रभुता।

५—धारि—आधुनिक रूप धारी = धरी।

२—गंगाजीकी स्तुति

४—क्रम—सं०, कर्म राजस्थानीमें अक्षरके ऊपरका रेफ प्रायः पूर्व अक्षर के नीचे चला जाता है। अन्य उदाहरण, जैसे—ध्रम (धर्म) प्रन (पर्ण) क्रम (कर्म) द्रप (दर्प) आदि। ऐसा होनेपर रेफके आगमका

साँझ पड़ी दिन आँथम्यो चकवी भया वियोग ।
पणियारी यूँ भाखियो देखा विधना जोग ॥ ५ ॥
जा पणियारी ! भर घड़ो कर न पराई बात ।
जिकण तुमारो दिन हरयो तिकण हमारी रात ॥ ६ ॥
पणघट जातां पण घटै पणघट वाळो नाम ।
कहियो पण कैसे रहै पणहारनके पाम । ॥ ७ ॥
पणघट जातां पण घटै पणघट कहै सब कोय ।
कहियो पण कैसे घटै जब पण घट ही होय ? ॥ ८ ॥
मात-पिता ही वीसरै बंधू वीसारै ।
पूरां पूरां बातड़ी चारण चीतारै ॥ ९ ॥११॥
॥१२२७॥

५—सन्ध्या पड़ी दिन अस्त हो गया और चकवीका वियोग हुआ। उसे देखकर अेक पनिहारिन बोली कि विधाताका योग तो देखो। पनिहारिनका कथन सुनकर चकवीने उत्तर दिया कि हे पनिहारिन ! तू जा, अपना घड़ा भर दूसरेकी क्या दया करती है अपनी ही ओर देख जिसने तुम्हारा दिन छीन लिया उसीने हमारी भी रात छीन ली है।

—पनघटपर जानेसे पन (मर्यादा) घटता है उसका नाम ही पनघट है तब क्या पनहारिनका पन कैसे रह सकता है ?

८—पनघटपर जाने से पन घटता है सब कोई उसे पनघट कहते हैं। पर जब पन पहले ही घटा हुआ है तो पनघटपर जानेसे फिर क्या घटेगा ?

—माता पिता आदि सब भूल जाते हैं, बंधु भी भूल जाते हैं। पर पूरे पूरे कथा-वार्ता चारण (कविगण) सदा स्मरण कराते हैं।

टिप्पणी

(९) विनय

१—भगवानकी स्तुति

[१]१—सिल ऊपरकी नारि—अहल्या गौतम ऋषिकी स्त्री थी। ऋषिके शापसे यह शिला हो गई थी। रामचन्द्रजीने अपनी चरण-धूलिका स्पर्श कराकर उसका उद्धार किया था। कथाके लिये तुलसीकृत रामायण का बालकांड (दोहा ४२) देखो।

नाठो धीवर इ०—पिताकी आज्ञासे वनमें जाते हुए श्रीराम गंगाके किनारे पहुँचे तो उन्होंने गंगा पार करनेके लिये धीवरसे नाव लानेको कहा पर वह बोला कि महाराज आपके चरणोंका स्पर्श करके पत्थर तक तरकर आदमी बन जाते हैं तो बेचारी लकड़ीकी नाव क्या चीज है और यदि वह तर गई तो फिर मैं अपना पेट क्योंकर पालूँगा। इस प्रसंग-का बड़ा ही सुन्दर वर्णन तुलसीदासजीने रामायण, कवितावली आदि में किया है।

३—गरुड़—ये कश्यप और विनताके पुत्र तथा विष्णुके वाहन कहे गये हैं। इनकी गति बहुत तेज है। सूर्यका सारथी अरुण इनका छोटा भाई है।

धारण—ग्राहसे ग्रसित गजेंद्रकी रक्षाकी कथा बहुत प्रसिद्ध है। भगवान गजेंद्रको बचानेके लिये चले तो उन्हें गरुड़की चाल भी धीमी जान पड़ी और उसे छोड़कर पैदल ही दौड़ पड़े।

४—आधरन—अप्रधानता प्रमुता।

५—चारी—आधुनिक रूप धारी = तरी।

२—गंगाजीकी स्तुति

४—क्रम—सं०, कर्म राजस्थानीमें अक्षरके ऊपरका रेफ प्रायः पूर्व अक्षर के नीचे चला जाता है। अन्य उदाहरण, जैसे—ध्रम (धर्म) व्रत (वर्त) क्रन (कर्ण) द्रप (दर्प) आदि। ऐसा होनेपर रेफके आगेवाला

मन्त्रमूढे मम्मममन मदाऽऽमनेव ।
संशीत्व-निम्न-पुत्रानपि पचनर्मि ॥

—नीतिवाक्य

१०—कुमित्र

१—मूरख मित्र न कीजिये इ०—मूर्ख मित्रसे बुद्धिमान शत्रु अच्छा। इसपर अेक कथा है कि, अेक राजाके पास अेक बंदर था जो बड़ी भक्तिके साथ राजाकी सेवा करता था। अेक दिन राजा सो रहा था और बंदर पंखा लेकर हवा कर रहा था। थोड़ी देरमें अेक मक्खी आकर राजाके वक्षस्थल पर बैठ गयी। बंदर के उड़ानेपर वह उड़ गई पर तुरन्त ही फिर आकर बैठ गई। बंदर बारबार उड़ानेका प्रयत्न करता और मक्खी उड़-उड़कर फिर बैठ जाती। तब मूर्ख बंदरने क्रोधमें भरकर पास पड़े हुये खड्गको उठा लिया और मक्खीको मारनेके लिये राजाकी छातीपर दे मारा। मक्खी तो तुरन्त उड़ गई पर राजाके दो टुकड़े हो गये।

पंचतंत्रमें इसी भावका यह श्लोक है—

पण्डितोऽपि वरं शत्रुर् न मूर्खो हितकारकः ।
वानरेण हतो राजा, विप्राश् चौरेण रक्षिताः ॥

१२—अविवेकी पुरुष

२—मच्छ गलागळ—मात्स्य न्याय। इसकी परिभाषा संस्कृत ग्रंथोंमें इस प्रकार लिखी है—

१ प्रबल निर्बल विरोधे प्रबलेन निर्बलनाशे विवक्षायां तु मात्स्यन्यायावतार। यथा प्रबला मत्स्या निर्बलमत्स्यान् नाशयन्ति तथाऽत्रापि अनुप्रवेशे प्रबला जना निर्बलान् जनान् नाशयन्ति—इति न्यायार्थः।

—रघुनाथ वर्मा

२ परस्परामिषतया जगतो भिन्नवर्त्मनः ।
दण्डाभावे परिध्वंसी मात्स्यो न्यायः प्रवर्तते ॥

—कामन्दकीय

३ अत्र बलवन्तो दुर्बलान् हिंस्युरिति मत्स्यन्यायः अेव स्यात्—इत्युक्तम् ।

——कुल्लूकभट्ट मनुस्मृति-टीका

[१] ३—मूर्ख

७—सुने सिंह इ०—इसपर अेक कहानी है कि अेक सिंह किसी वनमें बहुत-से पशुओंको मारा करता था। तब सब पशुओंने मिलकर उससे कहा कि आप हम सबका संहार न करें, हम आपके भोजनके लिअे अेक पशु प्रतिदिन भेज दिया करेंगे। सिंहने इस बातको स्वीकार कर लिया और प्रतिदिन अेक पशु उसके पास आने लगा। अैसा होते-होते किसी दिन अेक खरगोशकी बारी आई। सिंहसे सब पशुओंका पिंड किस प्रकार छूटे यह सोचता हुआ वह सिंहके भोजनके समयको टालकर संध्या समय सिंहके पास पहुंचा। उसका छोटा शरीर, और फिर उसे देरसे आया देखकर सिंह बड़ा क्रुद्ध हुआ। खरगोशने नम्रताके साथ कहा कि महाराज मेरा छोटा शरीर देखकर पशुओंने मेरे साथ चार और खरगोश भेजे थे पर मार्गमें हमें अेक दूसरा सिंह मिला जिसने हम सबको रोक लिया और हमसे पूछा कि तुम कहाँ जाते हो? मैंने सब हाल सुनाया तो वह क्रोधमें भरकर बोला कि वनका राजा तो मैं हूँ, सब पशुओंको मेरे पास बारी-बारीसे अेक पशु भेजना चाहिअे। यदि तुम्हारा सिंह वनका राजा बनना चाहे तो वह आकर मुझसे युद्ध कर ले। यह कहकर उसने उन चार खरगोशोंको रख लिया और मुझे आपके पास भेजा है।

खरगोशकी बातें सुनकर सिंह क्रोधमें भरकर बोला कि चल बता, वह सिंह कहाँ है? पहले उसको मारकर फिर तुझे खाऊँगा। तब खरगोश

सिंहको अेक कुअेके पास ले गया और उसके भीतर देखकर कहने लगा कि महाराज वह दूसरा सिंह तो आपके डरके मारे इस कुअेमें छिप गया है। सिंहने कुअेके भीतर देखा तो उसे अपनी परछाईं दिखाई दी। उसे ही दूसरा सिंह समझकर वह कुअेमें कूद पड़ा और डूबकर मर गया। इस प्रकार खरगोशने अपनी बुद्धिसे दुष्ट सिंहको मारकर सबके प्राण बचाये।

२५—कंजूस

१—बावन अक्खर—वर्णमालामें ५२ अक्षर होते हैं अतः सारे वर्णोंसे। यह कंजूसकी उक्ति है।

२०—प्रारब्ध

२—बेह—यह शब्द 'विधि' से बना है और इसका अर्थ विधाता है। विधाता स्त्री मानी जाती है और उसे बेह-माता भी कहते हैं।

२७—अन्योक्तियाँ

१—माठी मीयण मांय इ०—कविराज बांकीदासजी राजस्थानमें बहुत प्रसिद्ध कवि हो चुके हैं। वे जोधपुर महाराज मानसिंहजीके यहाँ रहते थे। प्रसिद्धि प्राप्त करनेके पूर्व अपनी सामान्य स्थितिके समय, वे रायपुरके ठाकुर अर्जुनसिंहके आश्रयमें रहते थे। अेक दिन कविराजजी महाराज मानसिंहजीके साथ हाथीपर चढ़े जा रहे थे। उस समय उक्त ठाकुरने उनसे पूछा कि क्या आपको इन पुराने गाँवोंकी स्मृति बनी हुई है, जहाँ आप पहले आया-जाया करते थे। इसपर कविराजजीने यह दूहा कहा।

८—सूवा सलक देखकर इ०—सेमलके पेड़में बहुत लाल रंगका फूलोंका गुच्छा आता है और उनमें फलकी जगह घाटी लगती है। बहुत तोता मुग्ध होकर ऐसी आशा लगाये रहता है कि पकनेपर बड़ा मीठा और रसीला फल मिलेगा पर घाटीके फूटनेपर उसमें रुईके गुल्लेकी जगह रूई निकलती है। मिलाओ—

सेमर सुवना सेइया दुइ ढेंढी की आस।
ढेंढी फूटि चटाक दे सुवना चला निरास॥　　—कबीर

२८—सामान्य नीति

२२—कळह् करये मत इ०—इस सम्बन्धमें यह कथा प्रसिद्ध है। मारवाड़के राव चूंडाका मोहिलोंसे वैर था। अपने अन्तिम दिनोंमें उसने मोहिलोंकी एक राजकुमारी किशोरकँवरीसे विवाह किया। रानीकी नई अवस्थापर मुग्ध होकर रावने राज्यका सारा प्रबंध रानीके हाथमें सौंप दिया। उसने घोड़ोंको जो घी दिया जाता था उसे बंद करवा दिया। यह हाल सुनकर रावजी ने यह दूहा कहा। तब रानीने आगेवाले दूहेसे इसका उत्तर दिया। रावजी चुप हो रहे। घोड़ोंका घी बंद करके रानीने सरदारोंके भोजनके साथ जो घी मिलता था, उसको भी घटाना शुरू किया और अपनी कारगुजारी जतानेको रावजीसे कहा कि जहाँ १२ मन घी प्रतिदिन उठता था, वहाँ मैं केवल १ मन घी खर्च करती हूँ। रावजी ने बाहर आकर देखा तो घुड़सालमें घोड़े किसी कामके न रह गये थे और सरदार अपने-अपने घर चले गये थे। तब रावजीने दुखी होकर कहा कि मोहिलाणी, तूने मेरा राज्य खाया और मुझे मारा।

२४—बांका रहज्यो बालमा इ०—मिलाओ,—

टेढ़ जानि शंका सब काहू। बक्र चन्द्रमहि ग्रसै न राहू॥ —तुलसीदास

सीधे ऊँटपर दो चढ़ें, यह कहावत राजस्थानमें प्रसिद्ध है।

११६—भलि मरवणरी बात इ०—यहाँ ढोला-मारवणीरी बात नामक कथासे अभिप्राय है। पहले ग्वालियरके पास नरवरमें कछवाह राजपूतों का राज्य था। उनमें संवत् १००० के आस-पास नळ नामक राजा हुआ जिसका पुत्र ढोला उपनाम साल्हकुमार था। इसका विवाह पूगळके पंवार राजा पिंगळकी कन्या मारवणीसे हुआ था। ढोला-मारूकी बातमें इन्हींकी कहानी है। यह कथा राजस्थानमें बहुत प्रसिद्ध थी और है। इसके अनेक दूहे अब भी लोगोंकी जबानपर मिलते हैं। यह कथा इस प्रकार है—

नरवरमें नळ नामका राजा था। उसके ढोला नामका कुँवर था। एक बार पूगळमें अकाल पड़ा तो पूगळका राजा पिंगळ सपरिवार नळके

यहाँ आकर रहा। पिंगलकी रानीको ढोला बहुत पसंद आया और उसके कहनेसे राजाने अपनी डेढ़ वर्षकी कन्या मारवणीका विवाह ढोलाके साथ कर दिया। ढोलाकी अवस्था उस समय तीन वर्षकी थी। इसके बाद पिता अपने देशको लौट गया। पूगळ नरवरसे बहुत दूर था और मार्ग खतरनाक था, इसलिये ढोलाके बड़े होनेपर नलने उसका दूसरा विवाह मालवाकी राजकुमारी मालवणीके साथ कर दिया और ढोलाको पहले विवाहकी बात मालूम नहीं हुई। इधर मारवणी बड़ी हुई तो पिंगलने ढोलाके पास कई समाचार भेजे पर मालवणीने ऐसा प्रबंध कर रखा था कि पूगळकी ओरसे आनेवाला कोई आदमी ढोलाके पास न पहुँचने पावे और ढोलाको मारवणीका हाल न मालूम हो। अन्तमें पिंगलने कई ढाढ़ियोंको नरवर भेजा। वे मालवणीके आदमियोंसे छिपकर ढोलाके महलके नीचे जा टिके और रातभर मांड रागके विरहोद्दीपक सुरमें मारवणीके संदेशोंका गान करते रहे। ढोलाने यह सब सुना और उसके मनमें उत्कंठा उत्पन्न हुई। प्रातःकाल उसने ढाढ़ियोंको अपने पास बुलाया और उनसे मारवणीका सब हाल उसे मालूम हुआ।

मारवणीका हाल सुनकर ढोला मारवणीके प्रति आकृष्ट हुआ और उसे लिवा लानेके लिये पूगळ चलनेका विचार करने लगा। पर मालवणी भी उससे बहुत प्रेम करती थी और उसके वियोगको नहीं सह सकती थी। इसलिये उसने ढोलाको रोकनेके बहुत उपाय किये—और कुछ समय तक रोक भी रखा—पर अन्तमें वह अपना तेज ऊँट लेकर चल ही दिया।

मार्गमें अनेक विघ्नोंको पार करता हुआ ढोला पूगळ पहुँचा। वहाँ बड़ा हर्ष हुआ। पन्द्रह दिन वहाँ रहकर वह मारवणीके साथ नरवरको चला। मार्गमें सोती हुई मारवणीको एक पीणा साँप डस गया। ढोला उसके साथ जलनेको तैयार हुआ पर इतनेमें एक योगी आ निकला और उसने मारवणीको जिला दिया।

ऊमर नामका एक सरदार था। वह मारवणीको हथियाना चाहता

था। उसने देखा कि ढोला अकेला जा रहा है, तो उसने मारवणीको छीन लेनेका निश्चय किया। फौज लेकर वह भी चल पड़ा। मार्गमें ढोला मिला। ऊमरने बड़ी मनुहारें करके ढोलाको ऊँटसे उतार लिया और सब अेक जगहपर बैठकर शराब पीने लगे। ऊमरके साथ अेक गायिका थी जो मारवणीके पीहरकी रहनेवाली थी। उसे ऊमरका षड्यंत्र मालूम हो गया और उसने मारवणीको सचेत कर दिया। मारवणी ऊँटके पास बैठी थी, उसने तुरन्त ऊँटको छड़ीसे मारा। अब ऊँट दौड़ा तो ढोला उसे पकड़नेको पीछे-पीछे दौड़ा। मारवणी भी दौड़कर पास पहुँच गई और उसने सारा हाल ढोलासे कह दिया। तब दोनों तुरन्त ऊँटपर सवार होकर चल दिये। जल्दीमें ऊँटका पैर बँधा ही रह गया। फिर भी ऊँट इतना तेज गया कि ऊमर ढोलाका पीछा करनेमें असमर्थ रहा। इसके पश्चात् दोनों सकुशल नरवर लौट आये। *इस विषयका ढोला-मारू नामक वृहदात्मक लोक-गीत राजस्थानमें बहुत प्रसिद्ध है।

---

(३) पीर

१—*सामान्य*

१—मिलाओ आगे 'विशेष पीर' में पृष्ठ नं० १,७६ और ९०।

२—राजपूतोंकी ३६ शाखाओं कही गई हैं। छत्तीस शाखाओं कौन-कौन हैं इसपर मतभेद है। कुछ नाम ये हैं—(१) गुहिलोत (२) राठौड़ (३) कछवाहा (४) तँवर (५) चौहान (५) सोलंकी या चालुक्य (७) पँवार (८) परिहार (९) चावड़ा (१०) यादव (११) माहिल (१२) दहिया (१३) भाइया (१) दाब (१५) झाला (१५) बाला (१६) गौड़ इत्यादि।

---

*इस कथाका अेक सुन्दर संस्करण काशीकी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हुआ है जिसमें कथाके विविध रूपान्तर पाठान्तर आदि, और टिप्पणी सम्बन्धी व्याकरण आदिका समावेश किया गया है।

अपनी स्वतंत्रता कायम रखी। विशेष जाननेके लिअे नीचे लिखी पुस्तकें देखनी चाहिअे—

१—महामहोपाध्याय रायबहादुर गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत राजपूतानेका इतिहास।

२—इन्हीं ओझाजीका उदयपुरका इतिहास जिल्द पहली।

३—जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द कृत प्रताप-प्रतिज्ञा नाटक।

४—हनुमन्तसिंह रघुवंशी कृत मेवाड़का इतिहास।

५—टॉड कृत राजस्थानका इतिहास, खण्ड पहला।

६—राधाकृष्णदास कृत राजस्थानकेसरी या महाराणा प्रताप नाटक।

७—श्रीराम शर्मा कृत महाराणा प्रतापसिंह (अंग्रेजी)

१६—बादल (१३०९ के लगभग)—यह और इसका चाचा गोरा मेवाड़के सरदार थे। उस समय मेवाड़में राणा रत्नसेन राज्य करता था। उसके पद्मिनी नामकी रानी थी जो बहुत सुन्दर थी। अलाउद्दीनने उसे प्राप्त करनेके लिअे चित्तौड़पर आक्रमण किया पर उसे जीत न सका। अन्तमें उसने छलसे काम निकालनेका विचार किया और राणासे कहला भेजा कि मुझे केवल अेक बार पद्मिनीको दिखा दीजिये, फिर मैं लौट जाऊँगा। राणाने यह बात मान ली। बादशाह भीतर बुलाया गया और वहां उसका बड़ा आदर-सत्कार हुआ। दर्पणमें पद्मिनीके मुखकी परछाईं देखनेके बाद वह लौट गया। राणा उसे पहुंचानेके लिअे साथ गया। किलेसे बाहर निकलते ही बादशाहने राणाको पकड़ लिया और कैद करके साथ ले गया तथा कहला भेजा कि पद्मिनी मिलनेपर ही राणा छूटेगा। इसपर पद्मिनी गोरा और बादलके पास गई और उनसे सहायता मांगी। उन्होंने कपटका उपाय करनेका निश्चय किया और बादशाहसे कहला भेजा कि हम पद्मिनीको ला रहे हैं, उसके साथमें सात सौ डोलियोंमें उसकी सात सौ सखियां भी आवेंगी। फिर उन्होंने डोलियोंके अन्दर सशस्त्र योद्धा बिठा दिये और कहारोंकी जगह भी योद्धा ही रखे। पद्मिनीकी डोलीमें अेक लुहारको बिठा दिया।

इस प्रकार बादशाहके पास पहुँचे और उससे कहलाया कि रानी पहले अपने पतिसे मिलना चाहती है। बादशाहकी आज्ञा मिलनेपर पद्मिनीकी डोली राजाके पास गई और भीतर बैठे लुहारने राजाके बन्धन काट दिये और राजा घोड़ेपर सवार होकर बादलके साथ चित्तौड़को चल दिया। पीछे गोरा और बादशाहकी सेनामें भयंकर युद्ध हुआ जिसमें गोरा काम आया। उस समय बादलकी अवस्था बारह बरसकी थी।

६९—महाराणा अमरसिंह (१६१६-१६७६)—ये महाराणा प्रतापके पुत्र थे। प्रतापकी मृत्युके उपरान्त इन्होंने स्वतंत्रताका युद्ध जारी रखा। उस समय दिल्लीका बादशाह जहाँगीर था और उसने प्रण कर लिया था कि मेवाड़को चाहे जिन शर्तोंपर, जैसे हो वैसे अवश्य ही अपने अधीन करेगा। उसने अपने बेटे शाहजादे खुर्रमको जो आगे चलकर शाहजहाँके नामसे बादशाह हुआ सेनापति बनाकर भेजा। महाराणाने बड़ी वीरतासे बादशाही सेनाका सामना किया पर निरन्तर युद्धसे उनके बड़े बड़े सरदार मारे गये और ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई कि राणाको या तो देश छोड़कर भागना पड़ता या कैद होना पड़े। राजपूत सेना भी निरन्तर युद्धसे थक गई थी और सरदार लोग सन्धि कर लेना चाहते थे। उधर बादशाह भी उदार शर्तोंके साथ सन्धि करनेको तय्यार था क्योंकि उसे तो नामके लिये मेवाड़को अधीन करना था। महाराणाने सरदारोंकी इच्छा तथा परिस्थितिको देखकर आन्तरिक इच्छाके विरुद्ध सन्धिके लिये स्वीकृति दे दी। पर इससे उनके चित्तको बड़ा दुःख हुआ और वे राज्यकार्य युवराजको सौंपकर एकान्तवास करने लगे। इसने प्रतापसे भी अधिक लड़ाइयाँ लड़ीं और प्रतापसे कष्ट भी कम नहीं उठाये पर बादशाहसे सन्धि कर लेनेके कारण उनका वैसा नाम नहीं हुआ।

७०—महाराणा राजसिंह (६ १७   )—ये महाराणा अमरसिंहके परपोते थे। बड़े वीर और प्रतापी राजा हुए। उस समय दिल्लीका बादशाह औरंगजेब था। किशनगढ़की राजकुमारी चारुमतीसे बादशाह विवाह करना चाहता था पर चारुमती नहीं चाहती थी। उसने राजसिंहको

पत्र लिखा जिसपर राजसिंह ससैन्य किसनगढ़ पहुँचे और चारुमतीसे विवाह कर उसे मेवाड़ ले आये। बादशाह इससे बड़ा क्रुद्ध हुआ। जब बादशाहने जजिया कर जारी किया तो राणाने उसका विरोध किया। जोधपुरके बालक महाराज अजीतसिंहको बादशाहने पकड़ना चाहा तो उसने राणाके यहाँ शरण ली। इन सब कारणोंसे बादशाहने राजसिंहपर चढ़ाई की। बहुत दिनों तक लड़ाई होती रही, पर महाराणाकी कोई विशेष हानि नहीं हुई। इस युद्धमें राठौड़ोंने भी पूरी सहायता दी थी। संवत् १७३७ में महाराणा कुम्भलगढ़ जाते हुये, ओड़ा नामक गाँवमें ठहरे वहाँ किसीने भोजनमें विष मिला दिया, जिससे उनका देहान्त हुआ (भाग ऐतिहासिक विभागमें दूहा नं० १६ देखिये।)

५४—राव जगमाल—ये मारवाड़के राठौड़ राव मल्लिनाथ (१३८८—१४५६) के ज्येष्ठ पुत्र थे और उनके बाद गद्दीपर बैठे। इन्होंने मांडूके सुलतानको युद्धमें हराकर उसकी गींदोली नामक रूपवती राजकुमारीको छीन लिया था। युद्धमें सुलतान जगमालकी मारसे घबराकर महलोंमें भाग गया था। उस समयका यह दूहा है।

५५—राव अमरसिंह—ये जोधपुर-महाराज गजसिंहके बड़े बेटे थे। उद्धत स्वभावके होनेके कारण पिताने इनको त्याज्य पुत्र करके (सं० १६९० छोटे बेटे जसवंतसिंहको जोधपुरका राज दिया। जोधपुरसे निकाले जानेपर ये बादशाह शाहजहाँके यहाँ गये। वहाँ शाहजहाँने उनको राव पदवी देकर रावके खिताबके साथ नागौरका पट्टा लिख दिया (१६९४)। नागौरकी सीमा बीकानेर-राज्यसे मिली हुई थी। किसी समय एक मतीरे की बेल नागौरकी हद्दमें उगी, पर फैलकर बीकानेरकी हद्दमें चली गई। जब उसमें फल लगा तो नागौर और बीकानेरके आदमियोंमें झगड़ा हो गया। नागौरवाले कहते थे कि फल हमारा है, क्योंकि बेल हमारी हद्दमें उगी है। बीकानेरवाले कहते थे कि फल हमारा है, क्योंकि हमारी हद्दमें लगा है। विवाद बढ़ते-बढ़ते युद्धकी नौबत पहुँची। बीकानेर वाले विजयी हुये और फल ले गये। अमरसिंहने अपनी सेनाकी हारकी

तक यह मामला पहुँचा, पर उन्होंने दुर्गादासको कुछ नहीं कहा। उलटे उनकी प्रशंसा करते हुओ उन्हें अपनी चाकरीमें रख लिया।

अेक समय दुर्गादासजी महाराजके साथ शिकारको गये। वहाँ शिकारसे लौटनेपर वे अेक वृक्षके नीचे सो गये। थोड़ी देरमें उनके मुँहपर धूप आ पहुँची। यह देख स्वयं महाराजने अपने वस्त्रसे उनपर छाया कर दी। अन्य सरदारोंके यह कहनेपर कि आपको स्वयं अैसा करना उचित नहीं, महाराजने कहा कि आज मैं इसपर इसलिअे छाया कर रहा हूँ कि यह किसी दिन सारे मारवाड़पर छाया करेगा। महाराजका यह कथन आगे चलकर पूरा-पूरा सच हुआ।

बादशाह औरंगजेब जसवंतसिंहसे प्रसन्न न था। उसने उन्हें काबुलमें नियुक्त किया। वहाँ उनकी मृत्यु होनेपर औरंगजेबने जोधपुरका राज्य खालसे कर लिया। जब उसे मालूम हुआ कि महाराजकी रानियाँ गर्भवती हैं, तो उन्हें दिल्ली बुलाया। मार्गमें रानियोंके दो पुत्र हुओ। उनके दिल्ली पहुँचनेपर औरंगजेबने राजकुमारोंको अपने हाथमें करना चाहा और अपने अेक सेनापतिको राठौड़ोंके डेरेपर भेजा। दुर्गादासने राजकुमारों को पहले ही निकाल दिया। बहुत-से राजपूत शाही सेनाके साथ लड़कर काम आये। दुर्गादासने बचे हुओ आदमियोंके साथ मारवाड़का रास्ता लिया और फिर राजकुमार अजीतसिंहके साथ उदयपुरके महाराणा राजसिंहके पास पहुँचे। राणाने उन्हें सहायता दी और अजीतसिंहको पहाड़ोंमें रखा। इसके बाद शाही सेनाके साथ बहुत समय तक युद्ध होता रहा। अन्तम बादशाहको संधि करनी पड़ी। अजीतसिंहने धीरे-धीरे सारा मारवाड़ अपने हाथमें कर लिया।

अन्त समयमें अजीतसिंहके बर्तावसे रुष्ट होकर दुर्गादास मेवाड़ चले आये, जहाँ राणाने उनको अेक अच्छी जागीर देकर अपने यहाँ रख लिया। उनका देहांत उज्जैनमें सिप्रा नदीके किनारे अस्सी वर्षकी अवस्थामें संवत् १७७५ में हुआ। अजीतसिंहके व्यवहार और दुर्गादासके मरणके संबंधमें यह आधा दूहा प्रसिद्ध है—

रण पर माडी रीत दुरगो सिपरा दागियो।

और वीरतासे लड़ते हुअे काम आये। इस प्रकार जयपुरवालोंको बिना युद्धके विजयी नहीं होने दिया।

८२—कीरतसिंह सोढा—ये जोधपुरके महाराज मानसिंहजीके सरदार थे। संवत् १८६२ में ठाकुर सवाईसिंहके उपद्रवपर जब विद्रोहियोंने जोधपुरके किलेका घेरा किया तो महाराजने कहा कि अब इसका रुकना असंभव है। यह सुनकर कीरतसिंहने प्रण किया कि मैं अभी रोकता हूँ। यह कहकर जूझ पड़े और वीरतासे लड़कर काम आये। विद्रोहियोंका हल्ला हट गया।

८३—भींवसिंह—धनजी और भींवजी ये दोनों पाली-ठाकुर मुकनसिंह जीके यहाँ रहते थे। धनजी गहलोत और भींवजी ब्राह्मण थे तथा संबंधमें मामा-भानजा होते थे। अेक बार जोधपुर जाते समय मुकनसिंह इनकी ढाणीके पास ठहरे। वहाँ इनका रेवड़ चर रहा था। मुकनसिंहके आदमी उसमेंसे दो भेड़ोंको उठा लाये और उन्हें काट डाला। धनजी-भींवजीको यह हाल मालूम हुआ तो वे दोनों आये और पड़ावपर टँगे दोनों जानवरोंको ले गये और जाते समय कहा कि राजपूतोंके जानवर खाना सहज नहीं होता। मुकनसिंहको अपने आदमियोंका यह दुर्व्यवहार मालूम हुआ तो उन्होंने माफी माँगी और धनजी-भींवजीकी तलवारोंसे डरकर उन्हें अपने पास रखना चाहा। उनने धनजी-भींवजीसे कहा कि मैं आपसे अेक याचना करता हूँ, क्या आप देंगे? धनजी-भींवजीने राजपूती उदारतासे कहा कि अवश्य। तब मुकनसिंहने उनको अपने साथ रहना माँग लिया। फिर दोनोंको साथ लेकर वे जोधपुर पहुँचे। वहाँ छिपियाके ठाकुर प्रतापसिंह मुकनसिंहसे वैर रखते थे। अेक दिन राजमहलमें महाराजके पास जाते हुअे मुकनसिंहको अकेला देखकर प्रतापसिंहने उनको मार डाला और आप पोकरण छिप गये। धनजी और भींवजीने यह बात सुनी तो तुरंत वहाँ पोकरण पहुँचे और दरवाजा तोड़कर प्रतापसिंहको मार डाला। फिर राजाकी सेनासे लड़ते हुअे काम आये।

८४—राव चापिक—ये मारवाड़के राव रिड़मलके पुत्र तथा राव

कांधलके छोटे भाई थे। कहते हैं कि अेक बार रावके दरबारमें कांधलजी बैठे थे। थोड़ी देरमें बीकाजी आये और कांधलजीसे धीरे धीरे बात करने लगे। राव जोधाजीने हँसीमें कहा कि आज काका-भतीजा अैसे सलाह कर रहे हैं मानो कोई नया राज्य स्थापित करेंगे। बीकाजी तो कुछ नहीं बोले पर कांधलजीने अरज की कि महाराजकी कृपा रही तो यह कोई बड़ी बात नहीं। फिर कई सरदारों तथा सेनाके साथ बीकाजीको लेकर चल पड़े और जोधपुर राज्यके उत्तरमें स्थित जांगल देशपर अधिकार करके वहाँ नया राज्य कायम किया। धीरे-धीरे भटनेर और हिसार तकका प्रदेश अधिकारमें कर लिया। इस प्रकार अपनी वीरतासे राजजी-ने अेक बड़ा राज्य खड़ा कर लिया। सं. १५४६ में ये हिसारके सूबेदार सारंगखाँके साथ युद्धमें वीरगतिको प्राप्त हुअे। उनकी मृत्युका हाल सुनकर जोधाजी और बीकाजीकी सम्मिलित सेनाओंने सारंगखाँपर आक्रमण किया और उसे युद्धमें मार डाला।

८८—पदमसिंह—ये बीकानेरके महाराजा करणसिंहके छोटे पुत्र थे। असाधारण वीर थे। इनने अेक बार युद्धमें औरंगजेबकी सहायता की थी। इनमें इतना बल था कि अेक बार किसी नवाबके हाथीको हौदे सहित पकड़कर अपने पिताके हाथीके बराबर जिसपर खुद भी सवार थे, खींचकर मिला दिया। इनका खड्ग अभी तक राज्यके शस्त्रागारमें रखा है। वह इतना भारी है कि अेक आदमी उसे दोनों हाथोंसे भी नहीं उठा सकता। ये उसे अेक हाथसे चलाते थे।

अेक बार औरंगाबादमें इनके छोटे भाई मोहनसिंहके अेक पालतू हिरणको जो फिर रहा था कोतवालने पकड़ लिया। मोहनसिंह माँगने गये तो कोतवालसे झगड़ा हो गया और कोतवालने उनका सिर काट लिया। पदमसिंहको यह मालूम हुआ तो वे तुरंत वहाँ पहुँचे। कोतवाल जान बचानेके लिअे दरबारमें आ गया। पदमसिंह भी दरबारमें आ पहुँचे और दरबारमें कोतवालका सिर उड़ा दिया।

रतनसिंह—ये भूकरकाके ठाकुर थे। ये बीकानेरका अेक

ठिकाना था। किसी कारणसे बीकानेर-महाराज जोरावरसिंहजी उनसे अप्रसन्न हो गये थे, इसलिअे वे, अपने ठिकानेमें ही रहते थे। जब जोधपुर महाराज अभयसिंहजीने बीकानेरपर आक्रमण किया तो पुरोहितजीके कहनेसे महाराजने उनको खास रुक्का भेजकर सहायताके लिअे बुलवाया। स्वामीपर संकट पड़ा देख, अपने अपमानपर ध्यान न देकर, वे तुरत ५००० सवार व पैदल सेना लेकर चल पड़े। उनकी वीरताके कारण अभयसिंहको विफलमनोरथ होकर लौटना पड़ा।

१०—महाराज मानसिंह—ये आमेर (वर्तमान जयपुर-राज्य) के महाराज थे और सम्राट् अकबरके अेक प्रधान सेनापति थे। बादशाहके दरबारमें इनका बहुत ऊँचा ओहदा था। बंगाल और काबुल जैसे दूर दूरके सूबोंको जीतकर इन्होंने मुगल-साम्राज्यमें मिलाया। ये बड़े भारी दानी भी थे। हरिनाथ कविने इनकी प्रशंसामें दो दूहे पढ़कर अेक लाख रुपये दानमें पाये

> बलि बोई कीरति लता, करन करी द्वै पात।
> सींची मान महीपने जब देखी कुँभिलात॥ १॥
> जाति जाति तें गुन अधिक, सुन्यो न कबहूँ कान।
> सेतु बाँधि रघुबर तरे, हेला दे नृप मान॥ २॥

कहते हैं कि जब इनकी सेनाने अटक नदीके पार करके म्लेच्छ भूमिमें जानेके लिअे अनिच्छा प्रकट की तो इन्होंने नीचे लिखा दूहा कहकर उसे अटक पार जानेको राजी किया—

> सबै भूमि गोपालकी यामें अटक कहा।
> जाके मनमें अटक है सोई अटक रहा॥

इनका विस्तृत इतिहास जयपुर-निवासी पुरोहित हरिनारायणजी बी० ए० द्वारा लिखित और बिड़ला-कालेज-मैगजीन (पिलानी) के चौथे तथा पाँचवें भाग में प्रकाशित 'महाराज मानसिंह प्रथम' नामक निबंध में छपा है।

९३—राव शिवसिंह—ये शेखाजीके वंशज और शेखावाटीके अंतर्गत सीकरके राजा थे। इनने सं० १७७८ से १८०५ तक राज्य किया। ये बड़े प्रतापी और प्रभावशाली नरेश हो चुके हैं। अेक बार जयपुर नरेश सवाई जयसिंहजीके साथ शिवसिंह मालवाकी ओर जा रहे थे। मार्गमें मोजाबादमें पड़ाव हुआ। वहीं अजमेरसे मारवाड़-नरेश अभैसिंहजी भी आ मिले। वर्षाऋतु थी। अेक बार सात दिन लगातार वर्षा हुई। भोजन का प्रबंध कठिन हो गया और सब लोग व्याकुल हो उठे। यह देखकर रावजीने अपने खेमेमें कड़ाह चढ़वाकर खीचड़ा बनवाया। रावजीका यह नियम था कि भोजन बन जानेपर नगाड़ा बजाते थे, जिसको सुनकर भोजन करनेवाले लोग आ पहुँचते थे और सबके भोजन करनेके बाद स्वयं भोजन करते थे। इस बार भी ऐसा ही किया और नगारेका शब्द सुनकर जयपुर तथा मारवाड़के सैनिक भी इनके डेरेमें पहुँच गये और खीचड़ा खाकर तृप्त होकर लौटे। फिर रावजीने दोनों नरेशोंसे भी पधारनेकी प्रार्थना की और तीनोंने मिलकर भोजन किया। इस पर प्रसन्न होकर जयपुर-नरेशने १००) रोजानेका रसोवड़ा खर्च और ६००) वार्षिक बाजका नियत कर दिया। सीकर-राज्यके करमें यह ६००) की रकम अब भी जयपुरकी ओरसे मुजरा दी जाती है। इसीपर कविने यह दूहा कहा था। इस विषयके अेकाध दूहे और यहाँ दिये जाते हैं

> अभैसिंघ जैसिंघ, हिंदू से भेळा हुआ।
> मुजरा किया सिवसिंघ खारो दोलतसिंघवत ॥ १ ॥
> मारू मजादळ, ढोढा, बाढेचा खमा
> दखिया, ढूंढाहड़ मुजरा सिवहर, सेनसी ॥ २ ॥

९४—सादूलसिंह—ये रतनसिंहोतोंके पूर्वज बड़े प्रतापी राजा हुअे। इनने झूंझणूंके कायमखानी नवाब रुहेलखांको हराकर झूंझणूं छीन लिया—

> संवत् सो सत्तासिवैं अगहन मास उदार।
> सादै लीनी झूंझणूं सुद आठम बुधवार ॥

मार्गमें अेक सोझासर गाँव पड़ता था जहाँ बारहठ मुकनजी चारण रहते थे। वे सुल्तानजीको सदा उपालम्भ देते थे। अेक दिन सुल्तानजीने कहा कि यह दुर्व्यसन तो मरनेतक मुझसे न छूटेगा, कोई अैसा उपाय बताइये, जिससे मेरी सद्गति हो। बारहठजीने कहा कि धर्मयुद्धमें प्राण दीजिये। पीछे फतहपुरपर पठानोंका आक्रमण हुआ तो सुल्तानजीने उनका सामना किया और वीरगति पाई।

१००—ठगो—यह गारापुर पाटणके राजा पाळाका छोटा भाई था। जूनागढ़गिरनारका राजा कैंवाट सरवहियो इसका मामा था। कैंवाटके कई सरदारोंने उससे राज्य छीननेका विचार किया पर ठगोकी वीरताके कारण अैसा नहीं हो सका। तबसे उसके यहाँ ठगोका प्रभाव बढ़ गया। अेक बार कोई सौदागर दो बहुमूल्य ढालें लाया और राजाकी नजर की। उनमेंसे अेक राजकुमारने और दूसरी ठगोने ले ली। इसपर कैंवाटने कहा—भाणेज अेक हाथसे ताली बजाते हो? ठगोने उत्तर दिया कि मेरे तो अेक ही हाथसे ताली बजती है, आप जब चाहें परीक्षा करके देख लें। इसके बाद कोइलापुर-पाटणके राजा सर्वतराय सोलंकीने कपटसे कैंवाटको पकड़ लिया और उसे पिंजरेमें डाल दिया। पिंजरेको जमीनमें गड़वा दिया और ऊपरसे आग जलने लगी। ठगोको यह बात मालूम हुई तो इसने मैंगळ मारको कैंवाटका पता लगानेको भेजा। कैंवाटने मैंगळसे कहलवाया कि ठगोको कहो कि अब अेक हाथसे ताली बजाये। फिर ठगोने 'हाट हाल्यं बाजी' नीतिका लेकर गुप्तरूपसे अणहिलवाड़ नगरमें प्रवेश करके उसपर धावा बोल दिया और उसको पराजित कर कैंवाटको छुड़ाया। कैंवाटकी यह कहानी राजस्थानमें बहुत प्रसिद्ध है। (विस्तारके लिये देखो पं० सूर्यकरण पारीक द्वारा संपादित 'राजस्थानी बातां' नामक पुस्तकमें कैंवाट सरवहियेकी बात)।

१०४—ठगो—कहानियोंमें यह बादशाह अलाउद्दीनका अेक सरदार बताया गया है। जालोरके राजाका भाई रामकरण बादशाहके यहाँ नजरबंद था। इसकी निगरानी ठगोके सुपुर्द थी। अेक दिन ठगोने

राणकदेवने तू कहकर पुकारा। तब पास बैठे भाटने यह दूहा उससे कहा। इसपर राणकदेवने कटारसे उसको मार डाला।

१ ५—रहीम—हिंदीका सुप्रसिद्ध कवि है। यह अकबरका सेनापति था। बड़ा दानी था। यह दूहा तथा आगे 'दानवीर' के ७ और ८ नंबरके दूहे आसा नामक चारणके कहे हैं (आगे ऐतिहासिक दूहा न॰ देखिये।)

४—दानवीर

१—जाम ऊनड—यह जाडेचा भाटी वंशका था और सिंधका राजा था। बड़ा भारी दानी हुआ है।

२—राव बरजांग—यह अजमेरका राजा था। इसने अनेक अरब-पसाव दान किये थे।

अरब पसाव—एक प्रकारका दान जिसमें अरब रुपये नकद या हाथी घोड़े जागीर आदि के रूपमें अरब का धन दिया जाय। इसी प्रकार करोड़-पसाव और लाख-पसाव नामक दान होते हैं।

३—सांगा—गुजरातमें नागरचाळ नामक गाँवमें रहनेवाला गोड़ राजपूत था। उसकी आर्थिक स्थिति बहुत खराब थी और वह भैंसें चराकर किसी प्रकार निर्वाह करता था। एक बार राजस्थानके सुप्रसिद्ध बारहठ ईसरदासजी उस गाँवमें आ निकले और सांगेके यहाँ ठहरे। सांगेकी माताने घर रूपमें भोजनकी सामग्री एकत्र करके उन्हें भोजन करवाया। सांगेने (जिसकी अवस्था उस समय केवल १८ वर्ष की थी) बारहठजीसे अर्ज की कि इस समय तो आपको भेंट देने लायक मेरे पास कुछ भी नहीं, पर [illegible] भेड़ोंकी ऊन उतरेगी तो उसका कम्बळ बनाकर भेंट करूँगा। उसकी उदारतासे बारहठजी प्रसन्न हुए और वहाँसे आगे पधारे। एक दिन सांगा नदीके किनारे भेड़ चरा रहा था कि नदीमें बाढ़ आई और सांगाको बहा ले गई। उस समय उसे बारहठजीके [illegible] आई। प्रतिज्ञाको अधूरी रहते देख उसे बड़ा [illegible]। तब उसने चिल्लाकर दूहा कहा कि शायद कोई कहीं सुन

या हो तो उसकी माताको जाकर कह देगा। सांगेकी मृत्युसे माता बिल-
कुल ही निराश्रय हो गई, पर पुत्रकी प्रतिमा उसे सदा याद रहती। जब
बारहटजी दुबारा आये तो माताने केवल उन्हें भेंट किया। जब बारहट
जीको रसोई परोसी गई तो उनने पूछा कि सांगा कहाँ गया? माताने
पहले तो कहा कि आप भोजन कीजिये, वह यहीं कहीं गया है। पर
बारहटजीने आग्रह किया तो बुढ़ियाने रोते-रोते सब हाल सुना दिया।
कहते हैं कि यह बात सुनकर बारहटजी उसी समय नदीपार गये और
सांगाको आवाज दी और उस आवाजको सुनकर सांगा नदीमें बहता
हुआ बाहर निकल आया।

४—जगदेव पंवार—यह धारके राजा उदयादित्यका छोटा पुत्र था।
सौतेली माताके व्यवहारसे दुखी होकर गुजरातके राजा सिद्धराज
जयसिंह सोलंकीके यहाँ चला गया। यह बड़ा वीर तथा दानी हुआ है।
भाटकथाओंमें इसकी बड़ी प्रशंसा गाई गई है। कहा जाता है कि एक
बार इसीने कंकाली भाटिनी बनकर जयसिंहके आगे जगदेवकी दान
वीरताकी बड़ाई की, जिसपर जयसिंहने कहा कि तू जगदेवके पाससे दान
ले आ मैं उसका चौगुना दूंगा। भाटिनीने यह बात जगदेवसे कही।
जगदेवने सोचा कि और किसी दानसे तो राजासे बढ़ नहीं सकता अतः
शीशदान ही देना चाहिये। भाटिनी जगदेवका सिर थालीमें लेकर जा
रही थी कि मार्गमें जगदेवकी भानजी मिली। उसने भी अपना एक नेत्र
निकालकर थालीमें रख दिया। भाटिनीने राजाके पास जाकर कहा कि
अब जगदेवसे चौगुना दान दो। राजाने रानी तथा कुमारसे सलाह की,
पर वे अपना सिर देनेको तय्यार न हुये। राजा पराजित हुआ।

५—करणसिंह—यह बीकानेरके महाराजा रायसिंहका बेटा था।
बड़ा दानी था। एक चारणको करोड़पसाव नामक दान दिया। जो कुछ
पास था वह सब दे चुकनेपर भी जब करोड़की रकम पूरी नहीं हुई तो
इसने बाकी रकमके बदले अपने दो लड़के चारणको दे दिये।

६—रायसिंह—ये बीकानेरके महाराज थे। बड़े वीर, दानी और

इससे चारण लज्जित हुआ और पीछे राज सारा धन लाकर महाराणाके सामने रख दिया और कहा कि मैं तो आपकी परीक्षा करता था। राज्यकी अैसी स्थितिमें भी आपकी उदारतामें कोई कमी नहीं हुई। यह कहकर चारण धन लौटाने लगा। पर महाराणाने दिया हुआ धन वापिस नहीं लिया, उलटा उसे और भी दिया।

(३) कविता बनाकर लानेपर महाराणाके दरबारसे कई चारणोंको पुरस्कार मिला पर अेक चारणको कुछ भी न मिला। वह दूसरोंसे कहने लगा कि तुमने तो प्रशंसा करके दान पाया है, मैं निंदा करके दान लूंगा। अेक रोज जब राणाजीकी सवारी कहीं जा रही थी, तब उसने मार्गमें खड़े होकर यह पद कहा—

भीमा, तू भाखो मोटा भगरा मोचियो।

इसपर लोगोंने उसे फटकारा पर राणाने कहा कि कहने दो शायद इसके दिलमें कोई भारी दुःख है। तब चारणने दूसरी लाइन पढ़ी—

घर रालूं काठो घेबर ज्यूं सेवा करूं॥

राणाने प्रसन्न होकर उसे औरोंकी अपेक्षा दुगुना दान देकर विदा किया।

१८—ठाकुर लगारसिंह—अेक बार कोई बारहट (चारण) इनके यहाँ आकर ठहरे। आधी रातके समय उनने अपने साथ हुअे नौकरसे हुक्का भरकर लानेको कहा। नौकरको नहीं उठता देखकर ठाकुर साहब स्वयं हुक्का भर लाये। बारहटजीने देरी होनेके कारण, उन्हें अपना नौकर समझकर, दो-चार कोरड़े मार दिये। ठाकुर साहब कुछ नहीं बोले और जाकर सो गये। प्रातःकाल बारहटजीने नौकरको फिर रातकी देरीके लिये धमकाया। उसने कहा कि बारहटजी मैं तो रातको उठा ही नहीं, हुक्का कौन लाया? सच्चा हाल मालूम होनेपर उन्होंने यह दूहा कहा।

बनाया। जोधपुरमें यह प्रसिद्ध वीर हो चुका है। चित्तोड़का रक्षक जयमल इसका पौत्र था तथा भक्तशिरोमणि मीरांबाई इसकी पौत्री थी।

बीदो—यह राव जोधोजीका पुत्र तथा राव बीकोजीका सगा भाई था। जोधोजीने इसे मोहिलवाटीका शासक नियत किया और इसने मोहिलोंको अधीन करके सारी मोहिलवाटीपर अधिकार कर लिया। यह प्रदेश इसके नामपर अब बीदावाटी कहलाता है। आगे चलकर बीदोजीने बीकोजीकी अधीनता स्वीकार कर ली। बीदावत ठाकुर बीकानेरके ४ सिरायतोंमें से थे।

३—पातलियो—यह प्रतापका दूसरा रूप है। रावराजा प्रतापसिंह जयपुर-महाराज उदयकरणजीके वंशज थे। अलवर राज्यकी स्वतंत्र स्थापना इन्होंने की।

माधो—महाराज माधवसिंह जयपुर-नरेश सवाई जयसिंहके छोटे पुत्र थे। इनकी माता उदयपुर राज्यवंशकी थी, जिसके विवाहके समय यह निश्चय हुआ था कि उसीका पुत्र जयसिंहके बाद गद्दीपर बैठेगा चाहे वह बड़ा पुत्र न भी हो। जयसिंहकी मृत्युके बाद सरदारोंने ज्येष्ठ पुत्र ईसरी-सिंहको गद्दीपर बिठाया। मेवाड़के राणाने माधवसिंहका पक्ष लिया। बहुत समय तक युद्ध होता रहा। अंतमें ईसरीसिंहके विष द्वारा आत्महत्या कर लेनेपर माधवसिंह राजा हुअे। इनने सं० १८१६ में मराठोंसे रण-थंभोर किला जीता।

बखतावर—ये खेतड़ी-नरेश अभयसिंहके पुत्र थे। सं० १८८३ से १८८६ तक इनने खेतड़ीका राज्य किया। पिताके जीवनकालमें इनने धूलाके राजावत सरदारसे बाघोरका किला जीता था।

४—नाग—यह भारतवर्षकी अेक अत्यन्त प्राचीन जाति थी जो संभवतः अनार्य थी। इसका राज्य समस्त भारतमें था अैसा जान पड़ता है। राजस्थानमें पहले इन्हींका प्रभुत्व था और नागोर इन्हींका बसाया बताया जाता है। परमारोंने इनका राजस्थानका राज्य नष्ट कर दिया।

५—पँवार—इनको प्रमार या परमार भी कहते हैं। प्राचीन कालमें

इनका राज्य बहुत विस्तृत था। सम्वत् चलानेवाले विक्रमादित्य और भोज आदि सुप्रसिद्ध राजा इसी वंशके थे। मारवाड़में पहले इनके नौ राज्य थे, जिसमें अब भी 'नौ-कोटी मारवाड़' की कहावत प्रसिद्ध है।

६—ज्यॉं पँवार त्यॉं धार है—इस पर अेक कथा है कि धाराके अेक पँवार राजाने जेसलमेरके अेक व्यापारीको पकड़कर उसका सब धन ले लिया। छूटनेपर वह जेसलमेरके राजा देवराजके दरबारमें जाकर पुकारा। देवराजने अपनी प्रजाके अपमानको अपना ही अपमान समझा और तुरन्त प्रतिज्ञा की कि जबतक धाराको न जीत लूँगा, तबतक जल भी नहीं पिऊँगा।

धारा जेसलमेरसे बहुत दूर थी और फिर जाते ही उसे जीत लेना भी असम्भव था। तब तक बिना जल पिये रावळजी कैसे जीवित रहेंगे, यह सोचकर सारे सरदार चिन्तित हुअे। अंतमें अेक उपाय सोचा गया कि मिट्टीकी धारानगरी बनाई जाय और राजा उसे ही विजय कर जलपान करें तथा बादमें धारापर आक्रमण करनेकी तय्यारी की जाय। समझाने पर रावळने यह सलाह मान ली। धाराका मिट्टीका दुर्ग बनाया गया और रावळके यहाँ रहनेवाले पँवार सरदार उसकी रक्षाके लिअे तय्यार हुअे। रावळ सेनाके साथ दुर्गको ध्वस्त करनेके लिअे आये तो पँवार सरदार तेजसी और सारंगने सचमुचका युद्ध छेड़ दिया। लोगोंने समझाया तो बोले कि धारा हमारी मातृभूमि है, उसका नाश हम नहीं देख सकते चाहे वह कृत्रिम ही क्या न हो, जब तक अेक भी पँवार जीवित है तब तक रावळ इस दुर्गको विजय नहीं कर सकते—जहाँ धारा है वहाँ पँवार है और जहाँ पँवार है वहाँ धारा है। अंतमें लड़ते हुअे सारे पँवार योद्धा मारे गये और उसके बाद ही रावळ उस नकली दुर्गको विध्वस्त कर सके। धन्य है इन वीरोंका अभूतपूर्व मातृभूमि-प्रेम!

७—यह जूनागढ़ गिरनारके जूडासमा राजा खेंगारकी रानी राणक देवीका कथन है।

राणक देवड़ी—यह सोरठ जूनागढ़के राणा खेंगार चूड़ासमाकी रानी थी। इसके विषयमें यह दूहा प्रसिद्ध है—

> आई ती देवंगणा, पाळी आड कुँभार।
> मन राख्यो जेसिघडे, परणी रा' खेंगार॥

खेंगारकी गुजरातके राजा सिद्धराज जयसिंहके साथ शत्रुता थी। अपने भानजेके विश्वासघातसे सिद्धराजके आक्रमणमें खेंगार मारा गया और राणक देवड़ी सिद्धराजके हाथमें पड़ी। सिद्धराजने उसे अपनी रानी होनेके लिये कहा और राणकके अस्वीकार करनेपर उसके सामने ही उसके पुत्र माणेराको मार डाला और राणकको पकड़ ले गया। पर अन्त में उसने उसे सती होनेकी अनुमति दे दी। इस कथापर कन्हैयालाल माणेकलाल मुंशीने गुजरातीमें 'गुजरातनो नाथ' और 'राजाधिराज' नामक दो बड़े ही सुन्दर उपन्यास लिखे हैं।

गिरनार—सोरठमें अेक पहाड़।

८—माणेरा—यह राणक-देवड़ीका पुत्र था। खेंगारके मारे जानेपर सिद्धराज महलोंमें घुस आया, तो माणेराने अपनी छोटी-सी तलवारसे सिद्धराजपर वार किया। सिद्धराजने राणकके सामने ही निर्दयतासे उसे मार डाला।

१०—रावळ भोजदेव—ये भाटी राजपूत और लोद्रवाके (जिसे अब जेसळमेर कहते हैं) राजा थे। इनके चाचा जेसळ राज्यको अपने हाथमें करना चाहते थे। और कोई उपाय न देख राव जेसळ शहाबुद्दीन गोरीके पास पहुँचे और उसके सेनापति मजेजखाँको चढ़ा लाये। भीषण युद्ध हुआ जिसमें भोजदेव काम आये। ये संवत् १२०४ में गद्दीपर बैठे थे।

११—भटियाणी राणी—यह जेसळमेरके राव लूणकरणकी कन्या थी। इसका नाम ऊमादे था। जोधपुरके महाराज मालदेवके साथ इसका विवाह हुआ था (सं० १५९३)। कारण-वश विवाहके बाद ही उसने पतिसे न बोलनेकी प्रतिज्ञा कर ली। महाराज विवाहके बाद लौट आये और कुछ समयके बाद बारहट आसेजीको भटियाणीको लानेके लिये

भेजा। भटियाणी आ तो गई पर अपने हठपर कायम रही। उस समय बारहटजी ने यह दूहा कहा। सुनकर रानीने हठपर दृढ़ रहनेका ही निश्चय किया और जन्म भर पतिसे सम्बन्ध न रखा। संवत् १६१९ में रावजीकी मृत्यु होनेपर उनके साथ सती हुई।

१३—ईश्वरीसिंह—ये सवाई जयसिंहके बड़े राजकुमार थे और उनके बाद जयपुरकी गद्दीपर बैठे। इनके सौतेले भाई माधवसिंहने गद्दीपर अपना दावा किया। अन्तमें स्वामिभक्त मंत्री केशोदासके प्रयत्नसे संधि हो गई। पर हरगोविंद नाटाणी नामक अेक धूर्त्तके बहकावेमें आकर ईसरीसिंहने अपने योग्य मंत्री केशोदासको विषका प्याला पिलाकर मार डाला और नाटाणीको मंत्री बनाया। इसके बाद माधवसिंहने मराठोंकी सहायता लेकर जयपुरपर धावा कर दिया। धोखेबाज नाटाणीने महाराजको बहकावेमें रखा और सामना करनेकी कोई तय्यारी न की। जब मराठे शहरके भीतर आ गये तो महाराजको धोखेका पता चला और कोई दूसरा उपाय न देखकर स्वयं विषपान द्वारा आत्महत्या कर ली।

१५—केसरीसिंह—ये खंडेला (जयपुर) के राजा थे। इनका विवाह बीकानेरकी राजकुमारीसे हुआ था। विवाहके समय अेक चारणको यथेष्ट दान नहीं मिला, जिससे नाराज होकर उसने यह दूहा कहा। उसका यह कथन सत्य सिद्ध हुआ। अजमेरके सूबेदारने खंडेलेपर चढ़ाई की। युद्धमें केसरीसिंह वीरताके साथ लड़ते हुअे मरे और बीकावतजी सती हुईं (अग्नि में जलीं)।

१६—राणा राजसिंह—ये उदयपुरके सुप्रसिद्ध राणा औरंगजेबके समयमें हुअे थे और उससे कई लड़ाइयाँ लड़े (देखो पीछे विशेषनीरमें दूहा नं० ७२)।

१७—अड़सी—इन्होंने सं० १८१७ से १८२९ तक उदयपुरका राज्य किया। राज्यके कई सरदार इनके तेज स्वभावसे नाराज होकर गद्दीके अेक दूसरे हकदार रतनसिंहके पक्षमें हो गये। रतनसिंहकी सेनामें

नागोंकी पलटनें थीं। युद्धमें महाराणाकी विजय हुई और बहुत-से नागे मारे गये।

१८—मेवाड़के सिरायत—सिरायत प्रधान सरदारोंको कहते हैं। मेवाड़के १६ सिरायत नीचे लिखे अनुसार थे—

(क) तीन झाला राजपूत—१ सादड़ी २ गोगूंदो ३ देलवाड़ो। (ख) तीन चोहाण—१ कोठारयो २ वेदलो ३ पारसोळी। (ग) चार चूंडावत सीसोदिया—१ सलूंबर २ देवगढ़ ३ बेगूं ४ आमेट। (घ) दो शक्तावत सीसोदिया—१ भींडर २ बानसी (ङ) दो राठोड़—१ घाणेराव २ बदनोर। (च) अेक सारंगदेवोत—कानोड़। (छ) अेक पंवार—बीजोळियाँ।

१९—ईंदा—ये पड़िहार राजपूत हैं। पहले मंडोर इनके अधिकारमें था। पीछे राठोड़ राव चूंडाके साथ इन्होंने अपनी कन्याका विवाह किया और दहेजमें मंडोर दिया, जो उस समयसे राठोड़ोंकी राजधानी हुई। पीछे जोधाजीने जोधपुर बसाया और उसे राजधानी बनाया। मंडोर हाथमें आनेके पूर्व राठोड़ों का राज्य अस्तव्यस्त था। छोटे-छोटे ठिकाने उनके हाथमें थे, पर उनका प्रभुत्व विशेष न था। मंडोर हाथमें आनेसे उनका प्रभुत्व बढ़ गया और तभीसे वे राजस्थानमें जोर पकड़ने लगे।

२०—सीहोजी—ये कन्नोजसे मारवाड़में आये और यहाँ राठोड़ोंका राज्य स्थापित किया। भीनमालके ब्राह्मणोंपर मुसलमान अत्याचार करते थे। सीहाजीने उन्हें परास्त करके भगा दिया।

२१—चूँडोजी—ये राठोड़राव वीरमके बेटे थे। राठोड़ोंका वास्तविक महत्त्व इन्हींके समयसे आरंभ हुआ। इनके पुत्र राव रणमल और पौत्र राव जोधा थे। जब ये छः वर्षके थे तब इनके पिता जोइयोंके युद्धमें मारे गये (सं० १४४०)। इनकी माता इनको लेकर काळाऊ ग्राममें आल्हा चारणके घर रहने लगी। उसने अपना भेद किसीको न बताया। अंतमें भेद जानकर आल्हा चारणने होनहार बालकको उसके बाबा (पिताके बड़े भाई) मल्लीनाथजीके पास पहुँचा दिया जो उस समय मारवाड़के राव थे। मल्लीनाथजीने चूँडाको सालवड़ी गाँव दिया। परंतु

उसके साहसिक कार्योंसे तंग आकर उन्होंने उसे विदा कर दिया। पहले मंडोरमें पड़िहारोंका राज्य था, पर मुसलमानोंने उसे छीन लिया था। सं० १४५१ में पड़िहार राणा उगमसीने मंडोर मुसलमानोंसे छीन लिया, पर उसकी रक्षामें अपनेको असमर्थ पाकर अपने कुटम्बी राव धवळकी कन्यासे चूंडाका विवाह करा दिया और मंडोर उसे दहेजमें दे दिया। चूंडाजीने उसे अपनी राजधानी बनाया और मारवाड़-राज्यकी नवीन शाखाका प्रारंभ किया। मल्लीनाथजीके पुत्र राव जगमलके बाद उनका राज्य छोटे-छोटे टुकड़ोंमें बँट गया और मंडोरका राज्य राठोड़ोंका मुख्य राज्य हो गया। राव चूंडाने अपने राज्यका खूब विस्तार किया। भाटियों और मोहिलोंके युद्धमें ये पूगळके भाटी राव केल्हणके हाथों संवत् १४८० में मारे गये।

किलेमें स्वर्गवास हो गया। महाराजने बड़े-बड़े मुखिया सरदारोंको, उन्हें मिट्टी देनेके बहानेसे, किलेमें बुलाया और कैद कर लिया। इनके नाम इस प्रकार थे—(१) रास-ठाकुर केसरीसिंह, (२) पोकरण-ठाकुर देवीसिंह, (३) आसोप-ठाकुर छत्रसिंह और (४) नीमाज-ठाकुर दौलतसिंह जो केसरीसिंहका बेटा था और नीमाज गोद गया था।

२५—महाराज रायसिंह—इन्होने सं० १६२८ से १६६८ तक बीकानेरमें राज्य किया। अकबरके दरबारमें जयपुरवालोके बाद इन्हीं का दर्जा था। ये बड़े भारी दानी थे। इन्होने करोड़पसाव नामक दान दिया था (देखो दानवीरमें दूहा नं० ६)। जब ये दक्षिण गये तो अेक फोगके पेड़को देखा। अपने देशका बूटा समझकर घोड़ेसे उतरे और बूटेसे गले लगकर मिले और यह दूहा कहा।

२७—महाराज जोरावरसिंह—ये बीकानेरके राजा थे। जोधपुर-नरेश अभयसिंहने अेक भारी फौज लेकर बीकानेरपर आक्रमण किया, उस संबंधके ये दूहे हैं।

२८—जयसिंह—जयपुर-नरेश महाराज सवाई जयसिंह।

२९—सवाई जयसिंहका उत्तर।

३०—पृथ्वीराज राठोड़—ये महाराज रायसिंहके छोटे भाई थे। अकबरके दरबारमें रहते थे, पर अपनी परतंत्रता उन्हे बहुत अखरती थी। महाराणा प्रतापके बादशाहसे संधिकी प्रार्थना करनेपर इन्होंने अपने पत्र द्वारा उनको फिर स्वातंत्र्य-रक्षाके लिअे सन्नद्ध किया था (यह पत्र पीछे प्रतापसिंहके वर्णनमें दिया गया है)। ये बड़े ऊँचे दर्जेके कवि थे। कृष्ण-रुक्मणीरी वेलि, जिसको वेल भी कहते हैं, इनका सुप्रसिद्ध टिगळ काव्य है (इस काव्य का अेक बड़ा सुंदर संस्करण हिंदुस्तानी अेकेडेमी, प्रयाग, द्वारा प्रकाशित हुआ है)। इनका विवाह जेसळमेरके रावळ हरराजकी कन्याओं लालादे और चंपादेके साथ हुआ था। कहा जाता है कि उदयपुरकी अेक राजकुमारीके साथ भी इनका विवाह हुआ था। लालादे की मृत्युपर इन्होंने नीचे ३२ नंबरवाला दूहा कहा था। ये बड़े

भारी हरिभक्त थे। नाभादासने अपनी भक्तमालमें इनका उल्लेख किया है।

३१—पृथ्वीराज कल्याणरा इ०—कहते हैं कि पृथ्वीराजजीकी स्मरणशक्ति बडी तेज थी। कोई कवि इनामकी आशासे कुछ बनाकर लाता और इन्हें सुनाता तो सुनकर तुरंत उस कविताको दुहरा देते और कहते कि यह तो पुरानी कविता है। अंतमें अेक चारणने सोचकर यह दूहा बनाया और इन्हें सुनाया तथा पुरस्कार पाया।

२२—लालादे—यह जेसलमेरके रावलकी कन्या और पृथ्वीराजकी पत्नी थी। उसकी मृत्युके बाद चिता जलते समय पृथ्वीराजने यह दूहा कहा।

२५—जयसिंह—महाराज सवाई जयसिंह जिन्होंने स० १७५६ से स० १८०० तक राज्य किया था। जयपुरको इन्होंने बसाया था। इन्होंने अपने पुत्र शिवसिंहकी विष देकर हत्या की थी।

बखतसिंह—ये जोधपुर-महाराज अजीतसिंहके छोटे पुत्र थे। इन्होंने अपने बडे भाई अभयसिंहके कहनेसे अपने पिताको विष दे दिया था। पहले ये नागोरके राजा थे। बादमें अभयसिंहके पुत्र रामसिंहकी मूर्खता-से रुष्ट होकर सरदारोंने इन्हें जोधपुरका राजा बनाया। आगे उपालंभके ४२ और ४३ नंबरके दूहे देखो।

पत-जयपुर जोधाण-पत इ०—अेक बार जयसिंह और अभयसिंह दोनों पुष्करमें साथ बैठे थे। वहाँ करणीदान नामके चारण भी उपस्थित थे। दोनों राजाओंने करणीदानसे कुछ सुनानेके लिअे आग्रहसे कहा, जिसपर उन्होंने यह दृष्टान्त सुनाइ।

-७— मुहणोत नैणसी—यह जातिका ओसवाल था और जोधपुरके महाराज जसवंतसिंहजीका दीवान था। बड़ा वीर तथा विद्यानुरागी था। इसकी बनाई हुई ख्यात, जो 'मुहणोत नैणसीरी ख्यात' के नामसे प्रसिद्ध है, अेक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रंथ है। उसमें उस समय तकका राजस्थान और राजपूत वंशोंका इतिहास खूब विस्तारसे दिया हुआ है।

जोधपुर राज्यका सर्वसंग्रह (गेजेटियर) नामक अेक और भी ग्रंथ उसने लिखा था ।

सवत् १७२३ की पोह सुद ९ को महाराज जसवंतसिंहजीने किसी कारणवश नैणसीको और उसके भाई सुन्दरदासको कैद कर लिया । फिर संवत् १७२५ में अेक लाखका दंड करके दोनोंको छोड़ दिया पर नैणसीने अेक पैसा भी देना स्वीकार नहीं किया जिस विषयमें ये दूहे अभी तक प्रसिद्ध हैं । दंड न देने पर वे फिर कैद कर लिये गये । संवत् १७२७ में नैणसीने पेटमें छुरी मारकर अपना शरीरांत किया ।

३९—जाडा चारणने रहीमकी प्रशंसामें दूहे बनाये (देखिये विशेष वीर नं० १०५ और दानवीर नं० ७८) जिसपर रहीमने पुरस्कार देकर यह दूहा कहा ।

४०—बीरबल—यह ब्राह्मण जातिका और सम्राट् अकबरका दरबारी था । बुद्धिमानी और हाजिरजवाबीके लिअे इसकी बड़ी प्रसिद्धि है । बीरबलविनोद, अकबर और बीरबल आदि कई पुस्तकें इस विषयमें छपी हैं । सवत् १६४० में अफगान-युद्धमें यह मारा गया । यह बड़ा भारी वीर, दानी तथा कवि भी था । इसकी मृत्युपर अकबरने यह दूहा कहा था । नीचे लिखा दूहा भी अकबरका कहा हुआ बताया जाता है—

दीन जानि सब दीन, अेक न दीनो दुसह दुख ।
सो बिछुरत हम दीन, कछु नहि राख्यो बीरबर ॥

(बीरबलने दीनोंको सब कुछ दे दिया केवल अेक चीज नहीं दी थी यानी दुस्सह दुःख । वह भी मरकर उसने मुझे दे दिया । सो उस दानीने अपने पास कुछ भी नहीं रखा) ।

तानसेन—यह भी अकबरका दरबारी था । यह ग्वालियर का निवासी और पहले हिन्दू था फिर मुसलमान बना लिया गया । तानसेन भारतवर्षके महान् संगीतज्ञोंमें ऊँचा आसन रखता है ।

४१—हत्यारो ऊदो—यह महाराणा कुंभाका बड़ा लड़का था । इसने संवत् १५२५ में अपने पिताको कटारसे मार डाला और मेवाड़का राज्य

अपने हाथमें किया, पर मेवाड़के सरदारोंने पितृघातीका पक्ष नहीं लिया और उसके छोटे भाई रायमलको बुलाकर राणा बनाया। ऊदा हारकर माँडूके सुलतानकी शरणमें गया और अपनी पुत्री देनेका वचन देकर सहायता माँगी। बातचीत करके ज्योंही डेरेके बाहर हुआ, त्योंही उसपर बिजली गिरी और वह मर गया। सुलतानने उसके लड़कोंको लेकर मेवाडपर आक्रमण किया, पर पराजित हुआ।

४३—बखतसिंह—ऊपर दूहा नं० ३५ देखो। अेक बार बखतसिंह अपने घोडेको बापा-बापा कहकर बिड़दा रहे थे, तब किसी स्पष्टवक्ता चारणने यह दूहा कहा था।

४४—जगरामसिंह—संवत् १८११ में जोधपुरके महाराज विजयसिंह का मराठोंके साथ युद्ध हुआ। उस युद्धमें ठाकुर महेशदास बड़ी वीरतासे लड़कर काम आया, पर जगरामसिंह परास्त होकर भाग आया। तो भी महाराजने उसे आसोपका पट्टा देनेका विचार किया और महेशदासकी वीरताकी कोई कदर नहीं की। इसपर किसी चारणने यह दूहा कहा। जिस पर महाराजने आसोप जगरामसिंहको न देकर महेशदासके नाबालिग बेटेको दिया।

४५—फिट बीदाँ इ०—बीकानेरके महाराज दलपतसिंहको जहाँगीरने अजमेरमें कैद कर दिया और बीकानेरका राज्य उनके छोटे भाई सूरसिंहको दिया। बीकानेरके सरदारों ने अपने महाराजको कैद होने दिया और उन्हें छुडानेके वास्ते कोई प्रयत्न न किया, इसलिये कवि इस दूहेके द्वारा उनको फटकारता है।

जब महाराज कैदमें थे, उस समय चाँपावत हाथीसिंह अपनी ससुरालको जाता हुआ उधरसे निकला। महाराजकी अेक दासीने उसके किसी आदमीसे पूछा कि यह कौन सरदार है। जिसपर आदमीने उत्तर दिया कि राठौड है। दासीने व्यंगसे कहा कि क्या पृथ्वीपर अभीतक कोई राठौड जीवित विद्यमान है? यह बात हाथीसिंह तक पहुँची। उसने दासीसे सब हाल पूछा और महाराजके कैद होनेकी बात जानकर कहा

कि अभी तो मैं ससुराल जाता हूँ, लौटकर महाराजको छुड़ाऊँगा। दासीने कहा कि यह काम ससुरालका आनंद मनानेवालोंसे नहीं हो सकता। हाथीसिंहको यह बात चुभ गई और उसी दम महाराजको छुड़ानेके लिये तय्यार हो गया। बड़ी भारी लड़ाई हुई जिसमें हाथीसिंह और महाराज दलपतसिंह दोनों काम आये। यह हाथीसिंह प्रसिद्ध वीर वल्लूसिंहका भाई था।

४७—मल्हारराव होलकर इंदौरका मराठा राजा था। उस समय राजपूतानेकी हालत बहुत खराब थी। आपसमें वैर-विरोध होनेके कारण सिंधिया और होलकरने खूब लूटमार मचा रखी थी। संवत् १८०८ में मल्हारराव होलकरने राजस्थानके राजाओंको दबाकर उन्हें अेक अैसा संधिपत्र मंजूर कर लेने को विवश किया कि जिससे उनके गौरवकी हानि होती थी। उसी समय किसी चारणने यह दूहा कहा था।

---

(५) हास्य और व्यंग

२—जनरल सर प्रताप—ये जोधपुरके महाराज तखतसिंहजीके दूसरे पुत्र और महाराजा जसवतसिंहजीके छोटे भाई थे। इनका जन्म संवत् १९०२ में हुआ था। ये बड़े वीर और प्रतापी थे। गवर्नमेंटने इनको ईडरका राज्य दिया। जोधपुर-राज्यके महाराजाओंकी नाबालिगीमें ये तीन बार रीजेंट—राज्य-प्रबंधक—रहे। ये स्वामी दयानन्दके अनुयायी थे। जोधपुर राज्य में इन्होंने अनेक सुधार किये। यूरोपीय महायुद्धमें अपने पौत्र महाराज सुमेरसिंहजीके साथ सम्मिलित हुअे थे। ये दाढ़ी-मोंछ मुड़ाये रहते थे जिसपर कविने यह दूहा कहा।

३—महाराणा सज्जनसिंह (१९१६–१९४१)—इन्होंने सं० १९३१ से १९४१ तक मेवाड़ में राज्य किया। ये बड़े साहित्य-प्रेमी, विद्वान् और विद्वानों का आदर करनेवाले नरेश थे। राज्यमें इन्होंने अनेक सुधार किये तथा कई संस्थाओं को जन्म दिया। सम्वत् १९३७ ने इन्हें

G.C.S.I. की उपाधि मिली। उसी अवसर पर किसी स्पष्टवक्ता कविने दूहा पढ़ा।

४०—सुरही हाजर हुई इ०—किसी बनियेने अपने जीवन भरमें केवल अेक पुण्यकार्य किया और वह था अेक गौ-दान। मरने पर वह यमराजके दरबारमें लाया गया। यमने उससे कहा कि तेरी दी हुई गाय अेक घडी तक तेरे कहनेमें रहेगी और पीछे तू नरकमें डाला जायगा। जब गाय आई तो बनियेने उसे आज्ञा दी कि तू यमराजको मार। गाय साग उठाकर यमराजकी ओर दौड़ी। यमराज भाग चले, गाय भी पीछे-पीछे चली। बनियेने गायकी पूँछ पकड़ ली और वह भी साथ चला। यमराज भागते-भागते विष्णुभगवानके यहाँ गये और बोले कि महाराज मुझे बचाइये। विष्णु भगवानने सब हाल सुनकर बनियेको तुरन्त नरकमें डालनेकी आज्ञा दी कि इतनेमें बनिया चुपकेसे सामने आया और कहने लगा कि लोग तो आपका नाम याद करके ही भव-सागरसे पार हो जाते हैं, मैंने तो साक्षात् आपके दर्शन कर लिये, क्या अब भी मैं नरकका अधिकारी ही बना रहा? भगवान्ने हँसकर उसे स्वर्गमें भिजवा दिया। इस प्रकार बनियेने यमराजको भी चकमा दिया।

———

(६) प्रेम

२९—सकर विस इ०—अमृतको प्राप्त करनेके लिये देवों तथा दैत्योंने समुद्रको मथा। मथनेपर जो वस्तुएँ निकलीं उनमें विष भी था। भोलानाथ शंकरने उसे ग्रहण किया और उसे अपने गलेमें स्थान दिया जिससे उनका गला नीला हो गया। इसी कारण उनका नाम नीलकंठ पड़ा।

३०—सायर बहनि—सागरमें बड़वा नामकी अग्निका निवास पुराणोंमें बताया गया है। इसीके कारण सहस्रों नदियोंके गिरने पर भी समुद्रका पानी बढ़ने नहीं पाता—अेक ही सतहपर रहता है।

———

(७) शृङ्गार रस

१—प्रियतम

१—साजन-साजन हूँ करूँ—अैसा ही अेक और दोहा नीचे लिखे अनुसार है—

साजन साजन हूँ करूँ, साजन जीव-जड़ी।
साजन लिख दूँ कागदाँ, वाँचूँ घड़ी-घडी॥

६—बत्तीस लछण—साहित्यमें शारीरिक सौंदर्य के ३२ लक्षण प्रसिद्ध हैं। ये प्रायः स्त्री-सौंदर्यके संबंध मे वर्णित हुअे हैं।

२—नायिका

७—थळ भूरा इ०—मिलाओ—

तेजड रूँख, मरूँट खड, ऊँडो नीर अथाह।
ढोलो पूछै, मारवण, इतरो रूप कठाँह॥

११—कूँझ—अेक पक्षी जिसे संस्कृतमें क्रौंच और हिंदीमें करांकुल कहते हैं। राजस्थानीमें यह शब्द कई तरहसे लिखा जाता है, जैसे—कुंज, कूँझ, क्रूँझ, कुरज। साधारणतया इसे कुरज कहते हैं। यह सारस जाति का पक्षी होता है और जलाशयोंके किनारे रहता है। राजस्थानी साहित्यमें इसका बड़ा भारी महत्त्व है। कुरजांके सम्बन्धमें अनेक सुन्दर उक्तियाँ मिलती हैं, जिनमेंसे कुछ आगे स्थान-स्थानपर दी गई हैं। आदि कवि वाल्मीकि की प्रतिभा-स्फुरणका कारण अेक कुरजका करुण रुदन ही था—

मा, निषाद, प्रतिष्ठा त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत् क्रौंच-मिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥

इस पक्षीका स्वर अत्यन्त करुण होता है।

५—प्रियका प्रवास

६—कादम इ०—पानी तथा कीचड़वाली जमीनमें ऊँट प्रायः नहीं चल सकता।

१०—तीज—सावण और भाद्रपदकी तीजोंके त्योहार राजस्थानमें

धूमसे मनाये जाते हैं और बहुत लोक-प्रिय हैं। तीजांका त्योहार राजस्थानका जातीय त्योहार है।

९२—सजन सिधाया हे सखी इ०—अैसे ही दो दूहे ये हैं—

> साजन सिधाया, हे सखी, कडियाँ बाँध कटार।
> ढोडी तो पूगी नहीं, हेला दिया हजार ॥१॥
> सजन सिधाया, हे सखी, काधे धारी बँदूक।
> कै तो साथे ले चलो, नहि कर दो दो टूक ॥२॥

६—*विरहिणी-विप्रलाप*

१०२—आज धराऊ धूँधळो इ०—मिलाओ—

> नव घण भरिया मग्गडा, गयणि धडक्कइ मेह।
> इत्थंतरि जइ आविसिइ, तइ जाणिस्थिइ नेह ॥

(हेमचन्द्रके व्याकरणमें)

१०—चकवी—साहित्यमें प्रसिद्ध है कि रातको चकवा-चकवी अेक साथ नहीं रहते। दिनमें प्रियसे वियोग नहीं होता, अतः चकवीका सूर्यसे प्रेम स्वाभाविक है।

११०—निच न समातो हार इ०—मिलाओ,—

> हारो नारोपितः कण्ठे मया विश्लेष-भीरुणा।
> इदानीमावयोर् मध्ये सरित्सागर-भूधराः ॥

—रामायण

७—*संदेशा*

१—ढाढी—अेक जाति; इनका पेशा उत्सवोंपर गाना-बजाना तथा बंदीजन अेवं सन्देशवाहकका काम करना है। आरम्भमें ये हिन्दू ढोली या भाट थे, पर बादमें मुसलमान हो गये। ये अब तक हिन्दू रीति-रिवाजोंका पालन करते हैं। कविता करना इनका पैतृक व्यवसाय है। राजस्थानके लोकप्रिय साहित्यके निर्माता तथा संरक्षक मुख्यतया ढाढी अेवं ढोली लोग ही हैं।

१३—प्रियतमका आगमन

१—काग उड़ावण धण खड़ी इ०—मिलाओ,—

वायसु उड्डावन्तिअे पिउ दिट्ठउ सहसत्ति ।
अद्धा वलया महिहि गय अद्धा फुट्ट तड़त्ति ॥
(हेमचन्द्रके व्याकरणमें उद्धृत अपभ्रंशका दूहा)

जब किसीकी प्रतीक्षा होती है तो कौवेको उड़ाया जाता है। यह प्रथा प्रायः सारे भारतमें प्रचलित है। कबीर, सूर आदिने इसको लेकर कई-अेक अच्छी-अच्छी उक्तियाँ कही हैं।

१५—सज्जण वाळै कोड़या—इसपर यह कथा है—

बादशाह अकबरने अपने दरबारी बीकानेरके पृथ्वीराज राठौड़से अेक दिन कहा कि तुम्हारे तो देवी वचन हैं, बताओ तुम्हारी मृत्यु कहाँ होगी। पृथ्वीराजने कहा कि मथुरामें विश्रामघाटपर। यह सुनकर बादशाहने उन्हें नौकरीपर अटक भेज दिया कि देखें तुम्हारी मृत्यु मथुरामें कैसे होती है। इस बातको पाँच महीने हो गये। इसी समय किसी भीलने यमुनाके तटपर बैठे चकवा-चकवीको कपड़ा डालकर पकड़ लिया और उन्हें बेचनेको शहरमें लाया। बादशाहको खबर हुई तो उसने पिंजड़ेको अपने पास मँगवा लिया और भीलसे पूछा कि रातको ये पक्षी कहाँ रहे। भीलने कहा कि इसी पिंजड़ेमें। बादशाहने कहा कि अैसा शत्रु तो मित्रसे कहीं अच्छा। इसपर खानखानाने यह चरण पढ़ा—

सज्जन बाळै कोड़धा या दुरजनकी भेंट।

पर दूसरा चरण वे न कह सके। तब तुरन्त पृथ्वीराजको बुलानेका हुक्म हुआ। जब वे मथुरा पहुँचे तो उन्होंने इसका उत्तरार्ध बनाकर बादशाहके पास पहुँचा दिया और थोड़ी देर बाद वहीं उनका देहान्त हुआ।

---

(८) शान्त रस

१—सतसंगकी महिमा

२—कादो छंडी नेहरा इ०—श्रीकृष्णके परमधाम पधार जानेके

पश्चात् अर्जुन द्वारका गया और वहाँसे बहुत-सी यादव-स्त्रियोंको लेकर हस्तिनापुर लौट रहा था कि मार्गमें बर्बर जातियोंने उसपर आक्रमण कर दिया। भावीवश जिसने महाभारतका युद्ध जीत लिया था वह वीर अर्जुन उन बर्बरोंका कुछ भी नहीं बिगाड़ सका और वे बहुत-सी स्त्रियोंको लूट ले गये।

६—हरचन्द वेची नार इ०—राजा हरिश्चन्द्र सूर्यवंशी राजा था और बड़ा सत्यवादी था। उसकी सत्यवादिताकी कथा बहुत प्रसिद्ध है। स्त्री, पुत्र और अपने-आपको भी बेचकर उसने सत्यकी रक्षा की। विशेष जाननेके लिये भारतेन्दु हरिश्चन्द्र कृत सत्य-हरिश्चन्द्र नाटक देखिये।

४—चेतावनी

११—हाथाँ परवत तोलया—जैसे रावण, बाणासुर आदि।
समदाँ घूँट भरेह—जैसे अगस्त्य ऋषि जो समुद्रको पी गये थे।

६—हरिभक्ति

३—सबरी—यह भीलनी थी और मातंग ऋषिकी सेवा करती थी। ऋषिकी कृपासे इसे हरि-भक्ति प्राप्त हुई। ऋषिने उससे यह भी कहा था कि श्रीराम तुम्हारे यहाँ आवेंगे। तभीसे शबरी जंगलमें जो अच्छे-अच्छे फल देखती उनको जमा रखती कि श्रीरामके आने पर भेंट दूँगी। अन्तमें उसकी कामना पूरी हुई। पिछले भक्तोंमें यह प्रसिद्धि हो गई कि शबरी स्वयं चख चखकर स्वादिष्ट फलोंको जमा करती थी और श्रीरामने प्रेमके वश होकर उसके जूठे फल खाये।

———

(९) प्रकीर्णक

१—वर्षासम्बन्धी

१०—माळवे—मारवाड़में अकाल पड़नेपर यहाँके लोग, विशेषतः गाय बैल आदि रखनेवाले, मालवा चले जाते थे जहाँ उनके पशुओंको

घास और पानी मिल सके। दक्षिण राजस्थानके लोग अब भी कभी-कभी अैसा करते हैं।

२—कूट और पहेलियाँ

१७—मृगरथ इ०—मिलाओ—

दूर करहु बीना कर धरिबो।
मोहेमृग नाँही रथ हाँक्यो, नाँहिन होत चन्दको ढरिबो॥

—सूरदास

३२—फेरी कोनी—फेरा नहीं या फिराया नहीं। घोड़ेको फिराया नहीं, पानोंको उलटा नहीं, और रोटीको पलटा नहीं।

३४—कूट्यो कोनी—कूटा नहीं। कपड़ेको कूटा नहीं, मूँजको पीटा नहीं, और जाटको मार-पीटकर ठीक नहीं किया।

३५—जोड़ी कोनी—जोड़ी नहीं। गाड़ीके बैलोंकी जोड़ी नहीं, औरतके पैरोंमें जूती नहीं, और बेटीके लिअे वर नहीं मिला।

नोट—इस प्रकारकी बहुत-सी पहेलियाँ अमीर-खुसरोकी रचनाओंमें मिलेंगी जिनका अेक संग्रह 'अमीर-खुसरो और उनकी कविता' के नामसे काशीकी नागीप्रचारिणी-सभा द्वारा प्रकाशित हुआ है।

४—प्रकीर्णक

२—जळ पीधो इ०—मिलाओ—

चडियो नीर अपार पडियो जद पीधो नहीं।
गूदळिये जळगार जीव न धापै, जेठरा॥

३—जगतण इ०—मिलाओ—

जगतणकूँ भगतण कहै, कहै दूधकूँ खोया।
चल्तीकूँ गाडी कहै, देख कबीरा रोया॥

अनुक्रमणिका

दूहा	पृष्ठांक
अइअे आँबळियाँह	११४
अइयो अकबरियाह	७६
अकथ कहाणी प्रीत की	१३०
अकबर-कनै अनेक	८०
अकबर कीन्हा आद	७८
अकबर कुटळ अनीत	७९
अकबर कूट अजाँण	८०
अकबर गरब न आण	७८
अकबर घोर अँधार	७७
अकबर जासी आप	७८
अकबर पथर अनेक	७९
अकबर मच्छ अपाण	८१
अकबर मैगळ अच्छ	८३
अकबर समँद अथाह	७७
अकबर हिये उचाट	८०
अकबरियै इक वार	७८
अगन सोर, गज केहरी	१३५
अग्गम-बुद्धी वाणियो	१२२
अजरामर धन अेह	८३
अजा सहेली ता रिपू	२१०
अड़ीआँनूँ अड़िया जिके	१०४
अणविस्वासी जीवड़ा	६५
अणहोणी होवै नहीं	२७
अत घण ऊनम आवियो	१४५
अनँत सँदेसा जीव-का	१७३
अम लीलो, पिव पीयलो	१०६
अमो ग्राह, चीकाण गज	१०६
अमरित-को भाजन निकट	३२
अमल कचोळा ऊसळै	७२
अरहट कूप तमाम	३४
अरुणी राची करन पै	२१३
अरे पपैया बावरा !	१५६
अवनी रोग अनेक	३७
अह भग्गा पारकड़ा	७०
अहमद लड़का पटण-में	२२३
अहर फरक्कै, तन फुरै	१७८
अहर-रंग राती हुवै	२१६
आँतड़ियाँ डंबर हुवाँ	१५९
आँधो नाग अभागियो	५७
आँसू नैणां ढळसकर	१७४
आइ घटा उतराद-री	१८३
आई सिरसी वार	७

दूहा	पृष्ठांक
आक बटूनै पवन भख	३८
आकासाँ में उड रही	२१९
आखा रोहण वावरी	२११
आग लगी वन-खंड में	१३३
आगै मिलै न अंत	४३
आगै आग बाजता	११७
आछा हुवै उमराव	४०
आज इग्यारस आँवळी	१८७
आज-कालरा ठाकरां	१२३
आज, सखी ! हम यूँ सुण्यो	१४७
आज धराऊ धूँधलो	१६७
आज धरा दिस ऊनम्यो	१७७
आज धरा दिस उनम्यो महलाँ	१६३
आज फरूके आँखिया	१७८
आज सहेली ! आठम जु	१८७
आज सहेली ! सातम जु	१८६
आज सहेल्या ! नवम नै	१८७
आनूणा अथरात	९०
आम, कुण, या, पटा	५८
आठ पहर जळ न रहै	२२०
आडा [illegible] नर [illegible] दूर नर	[illegible]४
आडा [illegible]	१०४
आडा [illegible] धणी निर्मो	१५४
आडा [illegible], बन घणा	१०३
आतम प्याला आसरा	१२१
आदर करै अपार	२४
आधी धरती भींव	१०७
आयो रहम्यो ऊँसळी	३८
आम ज उमदा नीपजै	११२
आम फळै परनारसूँ	३०
आया खाली हाथ	१९८
आया सो ही जावसी	१९४
आयो घन त्यूँ ही अली	१८३
आयो महिमा आण, त्हारी	४
आलीजा ! घर आवज्यो	१७५
आवत मुख बिगतै नहीं	२४
आवत ही जो हंस मिलै	२४
आव नहीं, आदर नहीं	२४
आवै पतग ! निसंक जळ	१३३
आवै नहीं इलोळ	४६
आवै बुसत अनेक	२१
आवो प्यारा नैणमैं	१८१
आसक, नट साधन, सती	५८
आसाढाँरी नूद नम	२१०
आसी सावण मास	१९३
आसी सावण मास, बरसा	२०६
आह करूँ ता जग जळै	१५३
आहव नै आचार	६३
इक कर वैस विलग्गवै	६५
इग्यारह इकागवै	९५
इण हिंदवाणै माँयनै	३६
इत आवत, उत जात है	२१५

दूहा	पृष्ठांक
इन्द्र-धनस तणियो अजब	१८४
इन्द्राँ वाहण नासिका	२१६
इळा न देणी आपणी	६३
ईंदोरी उपगार	१०४
ईसर, लेह मिटै नहीं	१०३
उठ, दासी रस ढोलियो	१६९
उटै न आदर-आव	२५
उडै रीठ अणपार	८२
उण मुखसूँ गग्गो कह्यो	८८
उणही ठाम अरोग	१८
उतरादो घन गरजियो	१७६
उत्तर दिस उपराठियाँ	१५८
उदियापुर चूँडो सिरै	१०१
उदियापुररी कामणी	११३
उदियापुर लंजा सहर	११२
उदैराज उद्दम कियाँ	२८
उद्दम करो अनेक	२७
उपजावै अनुराग	२३
उपजै ज्याही खात है	४४
उमड घटा घन देखिकै	२१४
उर चवडी, कड पातळी	१४२
उर चवड़ी, कड़ पातळी, ठावो	१४२
ऊँचा परवत, सेर वन	११२
ऊँची चढ-चढ गोखड़ै	१७४
ऊँचै गिरवर आग	३८
ऊँचै टीबै टीकरी	१९२
ऊँचो मंदर अति घणो	१६६
ऊँठ, मिठाई, अस्तरी	११२
ऊँडा जळ सूकै अवस	४४
ऊगतैरो माळळो	२०९
ऊजड़ खेडा फिर वसै	३६
ऊठ धरा उतरादसूँ	१७६
ऊठ, फरीदा ! जाग रे	१९५
ऊठ, फरीदा ! जाग रे, झाड़ू	१९५
ऊदा ! बाप न मारजे	१०८
ऊनम आयी बद्दळी	१६३
ऊनमियो उत्तर दिसा	१६३
ऊनमियो उत्तर दिसा, मेडी	१६३
ऊपर आवा मोरिया	१५९
ऊभी थी रायंगणै	१६०
ऊमरै उणसार	१९४
ऊलंबे सिर हथ्थडा	१७५
अेक अचूँबो देखियो	२२०
अेकइ वन्न वसतड़ा	११
अेक घडी आळोच	९१
अेही भुजे अरीत	८५
अै जो अकबर-काह	८३
अैसो नेह लगाइये	१३०
ओछैरो संग-साथ	१६
ओड़ा रतन सँधारिया	१०४
और रंग सब उतरै	१४३
कंत विना काँइ कामणी	५३

दूहा	पृष्ठांक	दूहा	पृष्ठांक
खानाखान नवाबरो, यो ही	९६	गहवरियो गजराज	१९
खाया सोई खरचिया	३६	गाज इतै, उरेळ गज	९५
खिवै निमोणी ओखडी	१०८	गाज नगारो, चमक खग	१६४
खुस खाणा है खीचड़ी	३१	गाजर मेवो, कॉस खड	११९
खुसी हूँत पीथल कमध	७७	गाडी पडी गवाड़मैं	२२२
खूँटै जीण न मोजडी	१५१	गाधारी सौ जनमिया	६७
खूर गधेडो खाय	३८	ग्यारस, गोरी, गगजळ	५३
खेती पाती बीनती	४५	गिर पुर-देस गमाड	८५
खोदा अन-जळ खाय	१८	गिरसूँ पड़ियै धाय	१८
गंगा, जमुना, सरसुती	३२	ग्रीखम सिर लाग्या	३१
गगाजळ गुटकीह	६	ग्रीव नमाड़े देखणो	६८
गढ कोटाँ, पोळी पगाँ	१९२	गुण-ओगण जिण गाँव	२०
गढ साखी गहलोत	९०	गुण विन ठाकर ठीकरो	४७
गति गगा मति सरसुती	१४१	गैला, गैंडक, गुलाम	१२१
गति गयद, जँघ केळग्रभ	१४१	गोडो पूछै गोडिया	२६
गयवर गळै गळथ्थियो	११	गोरी दधसुत कर गह्यो	२१४
गया सनेही दूर	१६०	गोहिल-कुळ-धन-गाढ	८१
गरज-दिवाँणी गूजरी	२९	गौड बुलावै धाटवे	९२
गरवा आदर ना करे	१३२	घट न वाजै देहराँ	९१
गह घूमी, लूमी घटा	११३	घटमैं रही न घाटमैं	१५३
गह घूमी, लूमी घटा, पावस	१४६	घण गाजै, बिजळी खिवै	१६५
गह घूमी, लूमी घटा पावस उठ्ठ्या	१८५	घणा सरळ वणियै नहीं	४०
		घर आयो, निरमै भयो	३४
गहरी लाली देखकर	१९३	घर-कारज खीलावणा	२३
गहरो फूल गुलाबरो	२१९	घर-गोखा पर बोलियो	१०४
गहली ! गरब न कीजिये	१८२	घर-घर चगी गोरड़ी	१६७

दूहा	पृष्ठांक
घर-घर चंगी गोरडी, गावै	१६३
घर छूटा पंथी मुवा	३०
घर घोडी पिव माळवै	२२१
घर ढाँगी, आलम घणी	११४
घरधारी घवरायनै	२६
घाल घणा वर पातळा	६४
घोचो लागाँ घाव	१२३
घाडाँ दूभर भादवो	५६
चंद-गहण जब होत है	२१५
चंदण पड्यो चमार-घर	३८
चंदणरी चुटकी भली	४०
चंदह वैरी वादळो	५५
चंपा माणो, गिर चढो	११३
चगो चीतोड़ाह	८४
चळ वैभव, संपत मुचळ	१९७
चलणा है रहणा नहीं	१९५
च्यारा पाछे घन घणो	१८५
चररालियो चूँ-चूँ करै	२२१
चल्ताँ-हल्ताँ चीत	१६९
चवदस आज, सहेलियाँ	१८७
चहुँ दिस दामण, सघन घन	१६४
चाकर, चकवो, चतर नर	५९
चाकर, चार, र पारधी	१२१
चाँना पाळण चारणाँ	१२१
चार सुणारी वावड़ी	२२०
चाल सखी ! तिम मँदराँ	१५२
चावळ तो चढियो मन्गो	५०
चिंता में बुध परखिये	५२
चीत मरण रण चाय	८१
चूँडा ! तनै न चीत	१०५
चेला लावै मागकर	१२४
चेला वस छतीस	८४
चोथो चीतोड़ाह	७५
चौकी चीतोड़ाह	८५
चौथ चमक्को पाड़ियो	१८६
चौसठ दीवा, हे सखी	४७
चंगा माढू वर रह्यां	५९
छट्ठ स आज सहेलियाँ	१८६
छप्पन भोग वहाय दे	२००
छाजैरी बैठक बुरी	५३
छाती ऊपर सेन्नड़ा	९३
छाती माँहे साल	१५९
छैल विराणो लाखको	२०१
जगळ जाट न छेड़िये	१२२
जग जाडा जूझार	८०
जगतणकूँ भगतण कहै	२२३
जगतो तो जाणै नहीं	९०
जगमें दीठो जाय	४०
जग जगरा मुख जोय	४०
जग-जगरा मुख जोय, जाचक	२०४
जण जावै नित राबडी	१०४
जद जाणूँ जद एकली	१०८

दूहा	पृष्ठाङ्क
जेठा ! घड़ी न जाय	१५३
जेती जे मन मॉय	१७०
जे तूँ ढोला ! नावियो	१६२
जैसो संगत बैसिवै	१५
जो ऊग्या सो आँथवै	१९४
जोडे ज्यूँही जोड	१४८
जो तू, साहब, नावियो, मेहाँ	१६२
जो तूँ साहब, नावियो ! सावण	१६२
जोबन जोगी हो गया	१९५
जोबन था जब रूप था	१९५
जोबन दरब न राखिया	५९
जो मत पाछै संचरै	५९
जो मूवा तो अत भला	७१
जारा, गजो, राजसी	१०७
ज्यॉंका ऊँचा बैसणा	५४
ज्यॉं पमॉर त्यॉं धार है	१०२
ज्यूँ ओ डूँगर सम्मुहा	१५४
ज्यूँ लारलड़ा बह गया	१९२
ज्यूँ बादळ मिल बीछडै	१९४
झालर बाज्यॉं भगतजन	६३
झूटा पार परंबरा	२००
झूटा माणक-मोतिया	२००
झूँठे की कुछ पत नहीं	३०
टामण-कामण टोटका	४२
टूकै-टूकै केवडो	११३

दूहा	पृष्ठाङ्क
टूटा मत रह टोळसूँ	४२
टोळीसूँ टळताह	२०६
ठग कामेती, ठोठ गुर	५५
ठाकर गेया, ठग रह्या	१२३
डाढ लटक्कै कॉंकरो	७४
डाढाळी डोकर थयी	१०६
डीघी पाळ तलावरी	१३२
डूँगर-केरा वाहळा	१३४
डूँगर-केरा वाहळा	१८८
डूँगर जळती लाय	३८
डूँगर बॉंको है गुढो	४२
डूगरिया हरिया हुवा	१४५
डूम न जागे देव-जस	५५
ढाढी ओक संदेसड़ो ! प्रीतम	१७१
ढाढी ओक सँदेसड़ो ।	१७१
ढाढी ओक सँदेसड़ो	१७२
ढाढी जे प्रीतम मिलै	१७१
ढाढी जे साहिब मिलै	१७२
ढिग अकबर दळ ढीग	८१
ढोल बजंतॉं, हे सखी	७१
ढोल सुणंता मंगळी	६८
ढोला ढीली हर कियॉं	१६१
ढोले जाणी बीजळी	१८१
ढोलो चाल्यो, हे सखी	१५१
ढोलो हल्लाणो करै	१४०

दूहा	पृष्ठांक	दूहा	पृष्ठांक
तॅवरासू दिल्ली गयी	८७	तुळसी, या संसार में	१९९
तरुन निराल्या जानरा	१४	तुलै जा परवत तोल	४४
तगा ! तगाइ मत करे		तूँ कहतो ज तिकाय	९८
तन उजळा, मन साँवळा	३४	तूँही ही तारण समथ	४
तन चोखा, मन ऊजळा	१३	तूँ थै देसी स्वँखड़ो	१०६
तन छाजे, जीवन हु‍ै	३१	तेरस आज सहेलडी	१८७
तन त्रट खागा तीस	९०	तैं गढवा गिरनार	१०२
तन सरवर, मन माछळी	१६८	तोडाँ घड तुरकाणरी	१०२
तन पर साटा आनकर	७३	तो राँध्यो नहीं खावस्याँ	१०७
तन पर सानो पहरनी	१९२	त्रसावंत मुन्दर भयी	२१५
तन मिलिया ता क्या हुवा	१८२	त्रिहुँ भाला, त्रिहुँ पूरन्या	१०४
तरन झरन मूकत सरत	१९७	त्हारा बोल-तणाह	२०६
तरवर कद न फळ भख	१४	थळ तत्ता, लू सामुही	१४८
तरवर, सरवर, सतजन	१४	थळ भूरा, वन झखरा	१४२
तान सुरा परपर भया	१३३	थारे जोडै, किसनसी	९७
ता।ा सजड जनेह	१५३	थिर त्रप हिंदुस्थान	८१
ताहरउ अद्भन ताप	५	थे सिध्धावो, सिध करो	१४७
तिणरो हान ताड लॅ	१४०	थे सिध्धावा, सिध करो, पूजो	१४७
तिारा, तुरकाँ, वाणियाँ	१८२	दधसुत कामण कर लियाँ	२१३
त न नदर तानणा	१६०	दरसण जाताँ साधकै	१४
तान रस तानणाँ	१४०	दरसण परसण देह लग	३६
तान स आन सहलियाँ	१८६	दरसावै जगनै दया	१२३
त न्रपस्त्री वान	४३	दस जूना दस जूतणा	६७
त न. ल्या वार अर	७८	दस दसरावा पूजणाँ	१८७
तुरक कहासा लग पन	७७	दस दुवारको पींजरो	१९४
तुम्हा तहाँ न जाइए	८०	दाँता दूणज वापर	२२२

दूहा	पृष्ठांक	दूहा	पृष्ठांक
दाख भखे मुख पकत है	२८	दुतिया चाँद मजीठ रंग	५७
दाडी मूछ मुँडायकै	११७	दुरजणरी किरपा बुरी	१५
दादू, आदर-भाव का	२४	दुसमण देसाँ लूँटकर	७३
दादू इण संसारमैं	२०३	दूध-नीर मिल दोय	३३
दादू जैसा नाम था	१९९	दूध लजायो मायरो	७३
दादू पछतावा रह्या	१९९	दूधाँ वरणाँ पाणियाँ	६
दादू हँस मोती चुगै	३५	दूर कह्यासूँ दूर है	२०२
दारू परदारा दुहूँ	३१	देख विराणे निवाणकूँ	२०१
दाळद घर दोळो हुवै	२५	देस सखी अेक आचरज	२१५
दिन ऊगाँ गह-डंबरा	२०९	देख्याँ-का अचरज नहीं	२०३
दिन ऊगारी चीतरी	२०९	देणो भलो न बापरो	५२
दिन दस दौलत देखकर	१९८	देता अडव-पसावदत	९५
दिन-दिन भोळो दीसतो	६७	देवी देसाण	७
दिल माँही दीदार है	२०१	देस सुरंगो, जळ सजळ	१११
दिया सिराणै ठीकरा	२०३	देस सुहावो जळ सजळ	१४३
दियो सब्द सुणताँ दुसह	२३	दो असाढ, दो भादवा	२१२
दिस चाहंदी सज्जणाँ	१६५	दोल्तसूँ दौल्त वधै	२५
दिस चाहंदी सज्जणाँ, नेहाळंदी मुंध	१६५	धण धायी, पिव छाकिया	१८८
दीधी अपणी चाँद	१६०	धनकूँ ऊँडा नह धरै	१३
दीनानाथ दयाल	४	धन, जोबन, अर ठाकरी	४१
दीपक जळता जो पड़ै	२१८	धन धोराँ, जोराँ धरा	१८४
दीया दुसत अनूप है	२२	धनवाळा रै धाम	३५
दीवै का गुण तेल है	५१	धन वेळा, नै धन घड़ी	१६५
दी सुरहाँ हाजर हुयी	१२४	धनस चढावै सो धरा	१४५
दाहा सै कारज करै	१११	धर चंगी, नर चोरटा	११९
दुखिया आगै दुख कह्यो	४५	धर जाडी, जाडा अँबर	१०९

दहा	पृष्ठांक	दूहा	पृष्ठांक
...र्नै सब कागट करूँ	२०५	नान्हा मिनख नजीक	२०
... ना, धण धुड़री	१८५	नाम अमररी चाय	१९७
...न ...नों वन घटै	३७	नाम रहंदा ठाकराँ	२२
... गाँरी, दिन पावरा	७५	नारायण-पग-नीर	६
... ...रण, बट करण	२२३	नारी मंडण नाहलो	५४
...ा धावतांहि	३	नाळा नदियाँसूँ मिळे	१६५
... वारा, ह सनी	१४९	नाह न आणी नीदमैं	६०
नगारा राजरा	७१	ना है लाट लडोलडी	२१९
... घ रदा हा रह्या	१९९	निकट जुडी मुहरा धरया	३२
... ...र ठाकराँ	३९	निगम निवाण तणाह	८५
	२१०	निज गुण ढाकण नेक नित	१४
	...६९	नित गुधळावण नीर	८२
	४७	नितरो भलो न वरसणो	५३
	...९	निस दिन निरभै नींद	४६
	...७	नीद न आवै तीन जण	४८
	१८...	नार तीर तडफै पडयौ	३१
	...०४	नैणनकी कर कोटडा	१८१
	३९	नैण, पन्कदूँ तालमैं	१४३
	६६	नैण लग तो लगण दे	१४३
	...२८	नैणा वरसे सेज पर	१६६
	...७	नाज किणाँसूँ लागच्यो	१४३
	१ ७	ना गोर्दी, नौ आँगळी	२११
	...४	पछिनके पीयेनते	२३
	...६९	पडत और मसालची	४३
	२०२	पडितनै पूरब भली	१२०
	४९	पथी तक सदेसडो, बावल	७१

दूहा	पृष्ठांक
पंथी ! अेक संदेसड़ो, ढोलै	१७१
पंथी-हाथ संदेसड़ो	१७३
पख पड़वासूँ ओलर गो	१८६
पग-पग नेजा पाडिया	८८
पग दरसणसूँ कर तपै	१६८
पग पूगळ, धड़ कोटड़ै	१२०
पटकूँ मूँठों पाण	७६
पड पड बूँद पलंग पर	१६५
पड़दै पोढंताँह	४०
पळ पळ में करै प्यार	१८
पड़ी पण भागी नहीं	२२०
पड़ै गुणै नहिं पेलवै	११९
पणघट जातां पण घटै	२२४
पणघट जातांपणघटै, पणघटवाको	२२४
पत-जयपुर जोधाण-पत	१४०
पतरां किती लिखूँ	१७३
पनंग ले पेंताळ्वै	१०९
पन उतरवो, पाणी जरवो	१३३
पय कर मीठो पाक	३४
पय पाणीकी प्रीतड़ी	१३३
परदेसां री आदियो	२१६
परभातै मेह डंबरा, दोपारांह	२०९
परभातै मेह डंबरा, छांत	२०९
परमारां रुधाविया	१०१
परापंत भारा हुवो	७३
परारब्ध-का पावणा	२८
पल-पलमें करे प्यार	१८
पहरण- ओढण कामळा	११९
पहर हेक लग पोळ	९०
पहली कियां उपाव	४५
पहली परत न कीजिये	१३१
पही ! भमंतो जो मिलै	१७२
पहु गोधळिया पास	७६
पाँखड़ियाँ ही किउँ नहीं	१७४
पाँखे पाणी थाहरे	१७८
पाँच जणा, सौ आगन्त	२११
पाँचम आज सहेलियाँ	१८६
पाँवणने पड़तांह	१०२
पाछा फिर मत झांकज्यो	७४
पाछा मिलण न पावसी	१९३
पाटा पीड़ उपाव	२४
पाणी-केरा बुदबुदा	१९४
पाणीमें पाखाण	२०
पाणी, राणी, पगरणी	५१
पान्ल धड़ पतसाहरी	८६
पातल जा पतसाह	८६
पातल पाघ प्रमाण	८५
पातल राणा, प्रवाड़ मल	८५
पातळिये अक्षर लिखी	२०१
पाती आयो मिन्त है	१०३
पाती तहां पठाइये	१०३
पाती लिखता पीवनै	१०८

दूहा	पृष्ठांक	दूहा	पृष्ठांक
घान झडता देखकर	१९३	प्रीत करै ऐसी करै	१३०
पान मरोड ग, रस पिया	१३४	प्रीत निभावण कठन है	१३०
प न सडै, घाडो अडै	२२१	प्रीत पुराणी ना पड़ै	१३२
पावस आया, साहबा	१६६	प्रीत प्रीत सब कोइ कहै	१२९
प सा भसो, अगन, जळ	५८	प्रीत प्रीत सब कोइ करै	१३०
पिड पडै, पुन ना पडै	१९७	प्रीत भली परेवडा	१३१
ि न कै हरी सु पाग सिर	१८३	प्रीतम ! कामणगारियाँ	१६४
निर्था वडा पमार	१०१	प्रीतमकूँ पतियाँ लिखूँ	१६४
पिर कारण सब अरपियो	१६०	प्रीतम दुखिया कर गया	१५९
पिव खो िरा अेहवा	१४८	प्रीतम प्यारा प्राणकूँ	१४६
पीव मू मजलिस गयी	१०८	प्र त रीत-के काज	१२९
पी पीहू करणरी	१५६	प्रेम कहाणी कहत हूँ	१२९
[illegible]	२६	फागण मास, वसंत रुत	१६२
[illegible]	६	फिट वीदाँ, फिर काँधळा	१०९
[illegible]	५७	फिर, हाथा ! फास्यो नहीं	१४९
[illegible]	१८८	फूल सिलै अंबर थकी	२१९
[illegible]	१३	फौज घणा, खग दामणी	१६५
[illegible]	१०७	बध बाँध्या छुडवाय	२६
[illegible]	१२९	बधो गटडिया धूळ-री	१९३
[illegible]	[illegible]	बधु विटमाँ उठ गया	२८
[illegible]	[illegible]	बन्के टान बराह	६
[illegible]	१४६	बना भरा ता क्या भया	२१, ४१
[illegible]	[illegible]	न्मा ना दीपक भला	५०
[illegible]	[illegible]	बहु िनमे पिव आवियो	२१६
[illegible]	२४	बाँमन काइ न सिरजिया	१४२
[illegible]	[illegible]	बाजरिया हरियाळियाँ	१८५

दूहा	पृष्ठांक	दूहा	पृष्ठांक
वाण न छोड़ै वाणियो	१२४	बुध्ध-भ्रष्ट, व्याकुळ वचन	३०
बादळ जूझण जब चल्यो	८६	बैंगण तो काचा भला	५०
बापो मत कह बलतसी	१०९	बै घोड़ा, बै ग्राम	१२२
बाबल ! ताल फुडाय दे	१४९	बै दीसै असवार	१५३
बाबहिया ! तूँ चोर	१५६	भँवरा छुबधी वास-का	२०२
बाबहिया निल-पंखिया !	१४६	भँवरो व्याकुळ मध विना	५४
बाबहिया ! पिउ पिउ न कहि	१५६	भगति-भाव भादू नदी	२०१
बाबहियो नै विरहणी	१४४	भरै पळट्टै भी भरै	१७२
बाबा ! बाळूँ देसडो	१४१	भागे मत तूँ कंथड़ा	७२
बाबा ! मत देइ मारुवाँ, वर	१८८	भागै सागै भाग	८२
बाबा मत देइ मारुवाँ, सूधा	१८८	भाटा ! तूं सम्भागियो	११२
बावै कँवळै वा खडी	२२०	भादरवै-की रुत भली	१६१
बारस आज सहेलियाँ	१८७	भाभी देवर एकलो	७०
बारह मासाँ बीह	८९	भावै जहाँ छिपाइयै	४६
बाळपणै धोळा भया	२१५	भावै नहीं ज भात	१९२
बाळपणै बुगलो हुवो	२१९	भीनमाल लीधी भडै	१०५
बाळूँ बाबा ! देसडो, पाणी ज्या ११८		भीमा ! तूँ भाठो	९८
बाळूँ बाबा ! देसडो पाणी संदी ११८		भूँडण तो भूँडा जणै	६७
बाळूँ बाबा ! देसडो ज्याँ पीकरिया१२०		भूँडण तो भूँडा जणै, हिरणी	११
बाळूँ बाबा देसडो ज्याँ पाणी	१२०	भूख-दूख संकट सहै	३४
बावन आखर में बडो	२२	भूख न जाणै भावतो	५२
बाँवो अँग फरकण लग्यो	१७८	भूखा तिसिया थाकडा	१०५
बीको, नेरो, लूणखी	१०७	भूम परक्खो हे नराँ	६०
बीजलियाँ पारोकियाँ	१६३	भूली सारस-सद्दडै	१५१
बीज स आज, सहेलिया	१८६	भोजन लाया थाळ भर	३२
बीजुळियाँ जाळो मिल्याँ	१६२	भ्याड़, जोख, झख, भेक	३३

दूहा	पृष्ठांक
मिगसर वद आठम घटा	२११
मिणधर विख अणमाव	१९
मिनख जिके द्विर माय	६
मिनख-देह प्रापत भयी	१९६
मिरग न वाज्यो वायरो	४८
मिरगा चाव न वाजिया	२१३
मिलणा जोग संजोग-का	३६
मिलियाँ अत मनवार	१७
मीठा बोलण नवि चलण	४९
मीन सनीचर, करक गुरु	२१२
मुकनूँ पूछै बात	९०
मुख ऊपर मीठास	१७
मूँड मुँडायाँ तीन गुण	१२४
मूँदूँ जाका सरवणा	२००
मूरख-नैं पोथी दिवी	२१
मूरख नै समझावताँ	२१
मूळ गळयो, रोहण गळी	२११
मूसा नै मंजार	४६
मृगनयणी मृगपति-मुखी	१४२
मेछाँ आगळ माथ	७९
मेह वूठा, हरिया हुवा, सब	१६६
मेह वूठा हरिया हुवा, भरिया	१७६
मेहाँ, मोराँ, मदझराँ	९६
मेहा वूठा, अन बहळ	१४५
मैं जाण्यो अवसेर है	१२५
मैं परणंती परखियो, तोरणरी	६८
मैं परणंती परखियो, मूँछाँ	६८
मैं परणंती परखियो, नाह	६८
मैं परणंती परखियो, साजन	६९
मैं परणंती परखियो, वागाँ	६९
मैं परणती परखियो, मूँछाँ-तणो	१२५
मैं परणंती परखियो, लाँबो घणो	१२५
मोडा, टोडा, बाकरा	५१
मोती फाट्यो वींधता	१३५
मो मन लागो तो मना	१६९
मोर सिखर ऊँचा मिलै	१८४
मोर सोर कर-कर मसत	१६५
मोराँ विन डूँगर किसा	५२
मोरा ! मै तनै वरजियो	१५६
म्हैंनै ढोलो झूँबियो लूंगे	१८२
म्हैनै ढोलो झूंबियो ! म्हाँनूं आवी	१८२
म्हे कुरजाँ सरवर-तणी	१५९
म्हे मगरै रा मोरिया	१५७
यहि अंगना, यहि देहरी	१९५
या तनकी जूती करूँ	१५९
या तनकी भट्टी करूँ	१८१
यो सुवाग खारो लगै	७४
रंदोही होवे मती	४२
रजपूती सत खो दियो	७३
रज्जब, पारस परसकै	१७
रण चड्ढण कंकण बंधण	४८
रहणा इकरंगाह	१३

दूहा	पृष्ठांक	दूहा	पृष्ठांक
रागाँ मीठी सोरठी	५३	लंघण कर लंकाळ	८३
रागाँ रो पति कान्हड़ो	५६	लछमीपत-रै कर वसै	२१८
राज रखै, तो च्यार रख	३८	लाँबा तिलक लगाय	२०५
राजा रावण जनमियो	११७	लाख लडाया लाड	२०६
राठोडाँरी कुळ त्रिया	८८	लाज रखै तो जीव रख	४१
राणै भीम न रक्खियो	९८	लाजाँ संपत पाइयै	४१
रान गमायी सोयकर	१९८	लाटा काठा लीजियै	१११
रात सखी इण तालमें	१५७	लाडाणो जस लूँटियो	९८
राति ज रूनी निसह भर	१६०	लाल लाल सबही कहै	२०१
रातूँ बोलै कागला	२१३	लावा-तीतर लार	१२
राम कहै सुग्रीव नै	२८	लिछमी कर हरि लार	४७
रामा मन भावै नहीं	१०५	लीह नहीं, लज्जा नहीं	४१
राहबा ! उरठ कमाणगर	६५	लूखो भोजन, भू सुवण	४९
रिनक न पल्ले बाँधता	२०३	लूमाँ झड, नदियाँ लहर	१८४
रिण टूटा सूरा भला	५०	लेसो पीपळ लाख	१०८
र[illegible]ाँ देय न भोज	४७	लोग चुगल कानाँ लग्या	४६
रुपिये बिन रागाँ करै	२६	लोपै हिंदू लाज	७९
रूँख वसे, पछी नहीं	२२०	लोह पुज इतको धन्यो	३२
रूकाँ वागी रीठ	९४	लोहा जळसूँ धोइयै	३४
[illegible]	[illegible]	लोहा, लकडा, चामडा	५७
र[illegible] ऊनर रही	१९६	वखता ! वखत-वायरा	१०९
[illegible]	[illegible]	वचन त्रपत अविवेक	३९
[illegible]	[illegible]	वडकत तड़कत बीजळी	१६४
[illegible]	[illegible]	[illegible] दीगटै	५५
[illegible]	[illegible]	वडा भया तो क्या भया	२१, ४१
[illegible]	८५	वडा वडाई ना करै	१२

दूहा	पृष्ठांक
वडी विपत सह वीर	८३
वणक-पुत्र कागद लिखै	१२४
वणि आणी रहसी नहीं	२१७
वणिया धाव वणाव	९३
वणा वणावै वाणिया	१२१
वतळावै जद वाम	१८२
वन जरिया हरिया हुवा	१६७
वनसपती पासर वणी	११३
वळू कहै गोपाळरो	८९
वस्त्र कसूमल पहर लो	७४
वहता पाणी निरमळा	२०५
वहतै जळ, काळू कहै	१९७
वाँका रहज्यो वाल्मा	४०
वाँस-चढी नटणी कहै	४३
वाँस वडा, डेरा वडा	९२
वागाँ-वागाँ वावड्याँ	११२
वाजण लागो वायरो	१४९
वाड़ करी छी खेतनै	४३
वाण न छोडै वाणियो	१२४
वाताँ रीझै वाणियो	५६
वादळ चमकै वीजळी	१७७
वादळ जूझण जब चल्यो	८६
वादळ तन कालो वरण	१८५
वादळ-वादळ वीजळी	२०१
वायस वीजो नाम, तै आगळ	१६१
वायस, राह, भुजंग, हर	२१४
वाही राह प्रतापसी, वखतर	८५
वाही राग प्रतापसी, वरछी	८६
वित बहुराँ, दंत मंगणा	७०
विद्या, चिहु, सनेह, धन	५८
विद्या, भलपण, सर्मंद-जळ	५६
विद्या वाणी हर-भगति	३७
विना वर्सालै चाकरी	५४
विविध वणाय वणाय	२६
विरह वियापी रैण भर	२१५
विरहिणि कुरळै कुँज ज्यूँ	२०२
विरही जन जीवै नहीं	२०३
विस खावो, कै सरण लो	७४
वीकाणै जोखो नहीं	१०६
वीकानेर सु-बस वसी	१०३
वीको, नेरो, लूणसी	१०७
वीज नहीं अै लाग-जळ	१६५
वीज भळाहळ, जळ प्रघळ	२०५
वीजुळियाँ जाळो मिल्या	१६२
वीजुळियाँ नीलज्जियाँ	१६६
वीजुळियाँ पारोकियाँ	१६३
वीजुळियाँ माडेचियाँ	१७६
वीजावरगी वाणियो	१२१
वीण अलापी देख ससि	२१५
वीरपणो धारण करो	८४
वुहा वडेरा वाट	७९
वेस्या नेह, जुवार धन	५७

दूहा	पृष्ठांक
वैरण प्रीतम कै विना	१५९
सख सरीखो ऊजळो	२१८
संगत कीजै साधकी	१६
सत प्रीत जाहीं करै	१३२
सदेसा जिन पाठवै	१६१
सदेसा मति मोकळो	१६२
सपतमें सहार	१८
सखी ! तम्हीणा कथनै	७०
सखी हमीणा कथरी	१२५
सखी हमीणा कथरी, कांई	१२५
सखी ! हमाणै कथरा	६९
सखी, हमीणै कथरी, पूरी	६९
सखी, हमाणै कथरी, उरसौं	६९
सगा सनेही और नर	१५
सजन सिधासा हे सखी	१४७
सजन सिपाही, हे सखी	१४४
सजि सोरह, बारह पहिरि	२१८
साजण अळगा -ौं लगे	१५२
सजन कागद माकळे	१६९
सज्जन, गुणे-समुद्र तूँ	१६०
सजन थाडा हस तूं	१८
सज्जण देसनर हुवा	१५२
साजण चल्ले, गुण रहे	१६०
सजन सिकारां जावसा	१४७
सजण सिधाया हे सखी !	१४९
सजण सिधाया हे सखी ! पाछा	१४९

दूहा	पृष्ठांक
सजण सिधाया हे सखी ! ऊभो	१४९
सजण सिधाया हे सखी ! वै	१४९
सजण सिधाया हे सखी ! आडा	१४९
सजण सिधाया हे सखी ! पाछै	१५०
सजण सिधाया, हे सखी ! सूना	१५०
सजण सिधाया, हे सखी ! वाजै	१५०
सजण सिधाया, हे सखी ! झीणी	१५०
सजण सिधाया, हे सखी ! नयणे	१५०
सज्जणिया वक्ळाइ कै	१५०
सज्जन वारूँ कोडधाँ	१८०
सठ-सनेह, जीरण-वसन	१३२
सठ-समामें बैठनाँ	१७
सत मत छोडो, हे नरा	३७
सतहीणा सिरदार	२०
सदा ज नवलो नेह	१३१
सदा न सग सहेलियाँ	१९३
सपना ! तूँ सम्भागियो	१७७
सपनै प्रीतम मुझ मिल्या	१६७
सपनैमें साजन मिल्या	१७७
सब कोई प्रीत वधावतै	१२९
सबद तुमारा ऊजळा	२०३
सब सुख देवै चदरो	१८१
सब-सूं बुरो सुनार	१२२
सब-सूं हँस हँस बोल	१९८
सबै भोम गोपाळ की	१०३
समझदार सूजाण	२८

दूहा	पृष्ठांक
समझ्नै चिंता घणी	४५
समन, परायै वागमें	३७
सनै करै, नर क्या करै	१९१
समै वडी, नर क्या वडो	१९१
सम्मन ! अैसी प्रीत कर	१३१
सम्मन चूड़ी काचकी	१३९
सम्मन पूँछ ज स्वानकी	४६
सम्मन प्रीत न जोडियै	१३१
सम्मन प्रीत लगायकै	१४६
सम्मन, बै फल कूण-सा	२१७
सम्मन रोवै कूणकूँ	१९८
सम्मन संपत विपतमैं	२७
सम्मन, साता पुरसी	१९१
सरणाई मुहड़ाँह	५६
सरवर सारू जळ रहै	५२
सर-सरिता जळ सूखिया	१५८
सर सूक्या वेळू हिली	१७०
ससनेही समँदाँ परे	१६०
ससि-को मुत घटमैं नहीं	२१८
सहनक-तणा सुजान	८४
सह गावड़ियै साथ	७६
साँई ! इण संसारमैं	३५
साँई ! करये पारेवड़ा	९०
साँई ! टेढी अंखियाँ	२००
साँई ! तेथी यादमैं	१९९
साँई-सूँ साचो रहूँ	७१
साईं सूँ साचा रहो	२०५
साग ज सोवरणाह	८४
साग मूँड सहसी सको	७७
साँगो धरम सहाय	८०
साँचो मित्र सचेत	१५
साँझ पडी दिन आँथम्यो	२२३
साझ पड़ी दिन आँथम्यो	२२७
साँवळि काँय न सिरजिया	१५२
साँसा मत कर मूरखा	२०४
सासा मत कर मूरखा, सिर पर	२०४
साजण आयाँकी कहै	१६५
साजण विसराया भला	१६०
साजणिया वनाळइकै	१५१
साजन आया हे सखी	१६९
साजन आया हे सखी ! मोत्या	१६९
साजन आया, हे सखी !	१८०
साजन आया, हे सखी ! कज्जा	१८०
साजन आया, हे सखी ! ज्याकी	१८०
साजन आया, हे सखी ! हुंता	१८०
साजन आया, हे सखी, हुता	१८०
साजन इसा न चाहिअे	१४०
साजन अैसा कीजियै	१३९
साजन अैसा कीजियै अैसा	१६०
साजन अैसा कीजियै, अैसा	१६०
साजन ! अैसी प्रीत कर	१३१
साजन सारा साँइ सा	१३९

दूहा	पृष्ठांक
साजन ! गहरा समँद-सा	१४६
साजन ! तुम दरियाव हो	१७०
साजन ! तुम मत जाणिया	१५०
साजन ! तुम मत जाणियो	१६९
साजन ! तुम मत जाणज्यो	१५०
साजन ! तुम मुख जोय	१३९
साजन ! थाँ किसड़ी करी	१६८
साजन ! दुरजन-रै कह्व	१६९
साजन ! पतियाँ तो लिखूँ	१६३
साजन ! बेल सनेह री	१२९
साजन साजन हूँ करू	१३९
साजन साजन हूँ करू, साजन	१३९
साठी चावळ, भैंस दुध	४९
सादूळो जगराम रो	९२
सादूळो वन सचर	६४
साध सती, अर सूरमा	५६
साध सरावै सौ सती	२०४
साधू माइ बाप है	२०७
साधू नहीं सराहिव	२०७
साधू ! सन कर बैठना	२०४
सारधण हल्लण साँभळै	१४८
सावन आया हे सखा	१७९
सावन आया हे सखा ...	१७९
सारँग ने सारँग गह्या	२१८
सारसड़ी मोता चुगै	१६०
साल्ह चल्लत परठियाँ	१५१

दूहा	पृष्ठांक
साल्ह चलंतै परठियाँ, आँगण	१५१
साल्ह चाल्ता, हे सखी	१५०
सावण आयो सायबा	१६४
सावण आयो सायबा, सब	१६६
सावण आया सायबा, पगा	१६६
सावण आयो, सायबा ! बाँधो	१८५
सावण आवण कह गया	१६०
सावण पहली पचमी	२१०
सावण पहलै पाखमैं	२१०
सावण लागाँ, सायबा	१४६
साहिब, सब समुद्रको	१५७
सिव-संगम, सुपुरस वचन	५७
सिंध, सिचाणो, सापुरस	८७
सिंधाँ देस विदेस सम	६४
सिंधाँ सिर नीचा किया	११०
सिंदुर दीधा सात सौ	९७
सिंधो, सिधावो, सिध करौ	१४७
सिर काटू, रे मोरिया	१५६
सिर नह सींगी सचरी	१२
सिल ऊधरती सारि	३
सिव अँग भूखण कर ग्रहे	२१४
सिव सुत ता सारग भया	२१७
सिव सुत माता नाँव रा	२१८
साँच्या हा गुण जाणके	१३४
साच्या हा गुण जाणकै, निकस्या	१३४
सात सरीरा ऊपनै	३५

दूहा	पृष्ठांक	दूहा	पृष्ठांक
संंत राजरी होय	७४	सूरा सोइ पिछाणिये	६६
सेंतळ, पातळ, मंद गत	५०	सूवा सेमळ देखकै	३३
सीयाळै साटू भलो	११०	सेरा, मदवाँ, धायला	५९
सीयाळै तो सी पड़ै	१४४	सेल, अरिंगण, पाँगरण	५१
सुंस जटा, पोथी गहै	२१९	सोई साजन आविया	१८०
सुंदर चोरे संग्रही	२१६	सो कोसाँ वीजळ खिवै	१४४
सुक पिक लगै सवाद	२३	सोच करै सो सूर है	३९
सुक्करवारी बादळी	२१२	सोना वाया न नीपजै	५२
सुख मानै तो सुक्ख है	२०३	सोनो घड़ै सुनार	२८
सुखनै प्रीत सवाय	१९	सोनो-रूपो पहरती	१९१
सुख-संपत अर औदसा	४५	सोरठियो दूहो भलो, भली	५२
सुख-हित स्याळ-समाज	८०	सोरठियो दूहो भलो, मोड़ो	५३
सुण कुँभा, रावण कहै	३६	सो वैरी कटवण मिलै	२७
सुण-सुण मीठी बोल-बात	४२	सो साँई तनमें वसै	२०१
सुणियाँ साद सतेज	७	सौ दूजो ससार	९६
सुर-हीणा सिरदार	२०	स्याणा तो है मोत-सा	४३
सुधरीमें सौ बार	१८	स्याळै भलो ज माळवो	११०
सुन्न सरोवर हस मन	२०२	श्रवणा राच्या नादसूँ	२०२
सुपना आया फिर गया	१७७	श्रीमंडळ, वीणा, मुरज	३२
सुमरणका साँसाँ रह्या	१९९	हंस तरंतो परखिये	५४
सुसरा, सासू, साळियाँ	१७६	हंसा तो तच लग चुगै	२५
सुहिणा तोहि मरावसूँ	१७९	हंसा तो सरवर रहै	१६९
सूतैमें मत चीज रख	४२	हंसा था सो उड गया	३३
सूमण पूछै सूमसूँ	२२	हसा सरवर ना तजो	३२
सूरज वैरी गहण है	५५	हरड वहेड़ा, आँवळा	२२२
सूरा रणमें जायकै	७२	हरणी मन हरियाळियाँ	१८४

दूहा	पृष्ठांक	दूहा
हरदी जरदी ना तजै	४४	हिकमत करो हजार
हर भजरे हरदासिदा !	१९६	हित कर हंसा कोयला
हरियाँ वन की कामड़ी	१८३	हित बिन प्यारा हरना
हरिया जाणै रूंखड़ा	३५	हियनै करै बखाणना
हरियाळी भूमी भयी	१६५	हियँ मूढ़ जो होय
हरीदास, लीजै नहीं	१९८	हियो हुवै जो हाय
हरीदास, सकट पड़ताँ	१९९	हिरदै ऊगा होत
हरी लिखाया, वह लिख्या	२०	हुंता साजन-हाथड़ै
हाडा, कूरम, राठवड़	८०	हुती गरज मन और या
हाडा गायड़-चकड़ा	२०१	हुन्नर करो हजार
हाथ धरे, हळ डूँगराँ	२२१	हूँ जाण्यो घोळो मुयो
हाथन चळ निरभै हियो	१२	हूँ बळिहारी राजियाँ
हाथी परबत तोल्ता	१९०	हूँ बळिहारी सज्जणाँ
हाथा हींडत देख	१३	हे कंता, काई करै
हाय दयी ! कैसी भयी	१३३	हे सखिए ! परदेस प्री
हिन्दपत परताप	८६	है निगाह च्यारूँ तरफ
हिंदू हिंदूकार	८६	हौळी मुस्क-सनीचरी